नंद लाल नैरंग सरहदी

शख़्सियत और फ़न

तहक़ीक़, तज्ज़या, तदवीन

डा॰ सय्यद तक़ी आबिदी

नंद लाल नैरंग सरहदी
(शख़्सियत और फ़न)

तहक़ीक़, तज्ज़िया, तदवीन

डा॰ सय्यद तक़ी आबिदी

जुमला हुक़ूक़ ब-हक़ मुसन्निफ़ महफ़ूज़

किताब : नंद लाल नैरंग सरहदी : शख़्सियत और फ़न
मुअल्लफ़ : डा॰ सय्यद तक़ी आबिदी
कंपोज़िंग : रहबर कम्पयुटर, देहली
मतबाअ : एजुकेशनल बुक हाउस, देहली

फ़ेहरिस्त

तअज्जुब है	- सय्यद तक़ी आबिदी	7
रौ में है रख़्श-ए-उमर	- सय्यद तक़ी आबिदी	11
ज़िंदगीनामा	- सय्यद तक़ी आबिदी	15
मंज़ूम सवानेह-हयात	- नंद लाल 'नैरंग' सरहदी	21
जदुल	- सय्यद तक़ी आबिदी	96
मुख़्तसर हालात-ए-ज़िंदगी	- नंद लाल 'नैरंग' सरहदी	97
मेरी शाइरी	- नंद लाल 'नैरंग' सरहदी	102
महसूसात और क़यासात	- नंद लाल 'नैरंग' सरहदी	107
अर्ज़-ए-हाल (तामीर-ए-यास)	- नंद लाल 'नैरंग' सरहदी	110
वसीयत-नामा	- नंद लाल 'नैरंग' सरहदी	111
हर्फ़-ए-चंद (तामीर-ए-यास)	- जगन्नाथ 'आज़ाद'	114
एक था शाइरः 'नैरंग' सरहदी	- नरेश नारंग 'सलीम'	118
''मुनाजात-ए-शाइर'' का तज्ज़िया	- सय्यद तक़ी आबिदी	120
'नैरंग' सरहदी की नाअत निगारी	- सय्यद तक़ी आबिदी	125
आशिक़-ए-उर्दू, शाइर-ए-शीरीन यान 'नैरंग'	- सय्यद तक़ी आबिदी	129

'नैरंग' सरहदी की शख़्सियत और फ़न का मूख़्तसर तआर्रुफ़	- सय्यद तक़ी आबिदी	138
'नैरंग' के क़तआत में समाजी क़द्रें	- सय्यद तक़ी आबिदी	145
'नैरंग' की शाइरी में रेवाड़ी का तज़्किरा	- सय्यद तक़ी आबिदी	149
कलाम 'नैरंग' में वतन के ख़िदमत-गुज़ारों का ख़ैर-मक़्दम	- सय्यद तक़ी आबिदी	154
'नैरंग' सरहदी, और राव मोहर सिंह	- सय्यद तक़ी आबिदी	161
'नैरंग' सरहदी और वज़ीर-ए-आला हरियाणा राव बीरेंद्र सिंह	- सय्यद तक़ी आबिदी	162
मसनवी सावित्री का मुख़्तसर तज्ज़िया	- सय्यद तक़ी आबिदी	171
'नैरंग' के क़तआत में अख़्लाक़साज़ी	- सय्यद तक़ी आबिदी	177
'नैरंग' फ़हमी का मुख़्तसर त'आरुफ़	- सय्यद तक़ी आबिदी	183
कुछ ताल्लुक़ नहीं 'नैरंग' को किसी फ़िरक़े से	- सय्यद तक़ी आबिदी	189
फ़ैज अहमद 'फ़ैज' और 'नैरंग' सरहदी	- सय्यद तक़ी आबिदी	200
'नैरंग' सरहदी कामयाब तज़मीन निगार	- सय्यद तक़ी आबिदी	204

'नैरंग' की क़लबी वारदात शेरों की ज़बानी	- सय्यद तक़ी आबिदी	208
कलाम-ए-'नैरंग' में मुल्क के आज़ाद ख़्वाहों की जलवागरी	- सय्यद तक़ी आबिदी	212
'नैरंग' सरहदी की फ़ारसी शाइरी	- सय्यद तक़ी आबिदी	225
'नैरंग' के कलाम में आज़ादी की ख़ुशबू	- सय्यद तक़ी आबिदी	237
(क़तआत 'नैरंग' सरहदी)	- सय्यद तक़ी आबिदी	249
ग़ज़ल के मुंतख़िब अशआर	- सय्यद तक़ी आबिदी	255
यूँ तो है सारी ज़िंदगी की ज़िंदगी ग़ज़ल	- सय्यद तक़ी आबिदी	266
'नैरंग' की सहरा और विदा निगारी	- सय्यद तक़ी आबिदी	283
''नैरंग'' और त्योहार	- सय्यद तक़ी आबिदी	286
'नैरंग' सरहदी के तर्जुमे	- सय्यद तक़ी आबिदी	290
उम्दा निसार और अफ़साना निगारः 'नैरंग' सरहदी	- सय्यद तक़ी आबिदी	298

सय्यद तक़ी आबिदी

तअज्जुब है

मुझे तअज्जुब और अफ़सोस भी है क्यूँकि मैं एक उर्दू शाइर की हैसियत से जो तक़रीबन पैंतालीस साल से शाइरी कर रहा हूँ और एक अदीब की माअरफ़त से जिसकी छः दर्जन से ज़्यादा तसनीफ़ात शाए होकर आज मौजूद हैं, ब-हैसियत एक उर्दू परस्तार और आशिक़ दूसरे उर्दू शाइर, उर्दू आशिक़ की उर्दू अदालत में वकालत कर रहा है कि नंद लाल 'नैरंग' के उम्दा कलाम इतनी ताख़ीर से गुलिस्तान-ए-शाइरी में महक रहा है। अगरचे उनका सिर्फ़ पंद्रह फ़ीसदी कलाम मज्मूआ-ए-कलाम के नाम से किसी उर्दू अकादमी से पच्चीस साल क़बल शाए होकर नायाब हो गया है, चुनांचे इस उम्दा शीरीन बयान शाइर के कलाम पर अब तक तन्क़ीद के पाँच छः सफ़हात भी नज़र नहीं आते।

नंद लाल 'नैरंग' साहब सरहदी उर्दू और फ़ारसी के शाइर और अदीब थे। ख़ुद लिखते हैं कि मैं 9 ज़ुबानों से वाक़िफ़ हूँ। वो शाइर जो फ़ैज़ अहमद 'फ़ैज़', तिलोक चंद 'महरूम' और अता उल्लाह ख़ान का शागिर्द रहा हो जो तक़सीम बर-सग़ीर पर पेशावर से मुहाजिर होकर रेवाड़ी को अपना ''वतन सानी'' बना चुका हो, जो उर्दू, फ़ारसी और पंजाबी का मोअल्लिम और हरियाणा मुन्तक़ा के अवाम से दर्द और मोहब्बत का रिश्ता जोड़कर कभी रेवाड़ी की किसी बस्ती में पानी का नलका लगवा रहा है तो कभी बोसीदा दीवार साफ़ करके ख़तरे से बच्चों को बचा रहा है, जिसने अपनी शाइरी से हुक्मराँ और अवाम की तारीफ़ और तरग़ीब की हो,

उसका कलाम जो आज़ादी और आज़ादी ख़्वाहों के लिए लिखा गया हो, अब तक क्यों अवाम के लिए फ़राहम न किया गया?

'नैरंग' सरहदी ने अपने एक फ़ारसी ख़त में जो जुमला लिखा है वो तीर बनकर हमारे दिल में पेवस्त है। वो लिखते हैं कि ''ये मेरी बद-बख़्ती है कि आज तक मेरा कलाम शाए ने हो सका और ये हसरत मेरे दिल में बाक़ी रह गई।'' वो शाइर-ए-फ़ितरत जिस ने पाँच सौ के क़रीब ग़ज़लें, नज़्में, क़तआत, मसनवियात और रुबाइयात से गुलिस्तान-ए-उर्दू को रंगीं कर दिया, जिस ने दर्जनों आज़ादी और आज़ादी ख़्वाहों इंसानियत और वतन दोस्ती पर मन्ज़ूमात लिखे वो क्यों गुमनामी और बेचारगी की ज़िंदगी गुज़ार कर चला गया। हम मुतशाइरों के कलाम के इश्तिहार के अंबार तो देखते हैं लेकिन क्यों एक फ़ितरी शाइर के कलाम को देखने के लिए आँखें तरस गईं और ख़ुद शाइर उस के कलाम के छपने की आरज़ू लेकर इस बेदाद दुनिया से चला गया। सौ साल पहले उर्दू तरक़्क़ी बोर्ड बना और आज उर्दू तहफ़्फ़ुज़ बोर्ड की ज़रुरत लाहक़ है, क्या इसी ज़वाल की गूनगाँू वजूहात में ये भी एक वजह नहीं कि उर्दू के हक़दार का उस का हक़ उस की ज़िंदगी में नहीं दिया गया और सच तो यह है कि मरने के पच्चीस साल के बाद भी जैसा चाहिए था वैसा हक़ अदा नहीं किया गया।

'नैरंग' के इस कुलियात में फ़ारसी कलाम भी शामिल है। यहाँ अगर महाभारत की हिकायत ''सावित्री'' की नज़्म है तो मुनाजात और नातिया कलाम भी मौजूद है। अगर शाइर ईदुज़्ज़ुहा पर शे'र पढ़ता है तो होली के तेहवार पर भी उसी तरह तन्क़ीद करता है जिस तरह देश के तेहवार बसंत पर क्योंकि वो ग़रीबों, सितमकशों और मज़दूरों के दर्द से वाक़िफ़ है। 'नैरंग' एक तरक़्क़ी पसंद, सेक्युलर वतन दोस्त, इंसानी हुक़ूक़ का मुहाफ़िज़, उर्दू का आशिक़, शीरीन सुख़न, शाइर, अदीब, अफ़साना निगार और

मुतर्जिम है। 'नैरंग' ने अगर जवान नस्ल को मदरसों में तालीम की तरग़ीब दी तो उनकी मुआशरे के लिए मुसबत क़द्रो से भी तरबियत की। हम ने इस कुलियात में उनकी बयाज़ो से जो ''बज़्म-ए-अदब सरहदी मैमोरियल'' में महफ़ूज़ हैं, सही मतन के साथ उन का कलाम सँवार कर क़रतास पर बिखेर दिया है। सच है

छुप नहीं सकता है शाइर शे'र के छपने के बाद

अब 'नैरंग' जैसा कि ज़ौक़ कह चुके हैं अमर हो चुके हैं।

रहता सुख़न से नाम क़यामत तलक है ज़ौक़
औलाद से रहे यही दो पुश्त चार पुश्त

हमने 'नैरंग' सरहदी पर तक़रीबन तीस के क़रीब तहक़ीक़ी, तन्क़ीदी, तशरीही और तजलीली तहरीरें इस सहीफ़ा में हर उन्वान पर लिखकर रख दीं हैं ताकि आमी और आलिम दोनों इससे मुस्तफ़ीद हो सकें और स्कालर्स इस को तन्क़ीदी नज़र से परख सकें।

यहाँ यह ज़िक्र ज़रुरी है कि 'नैरंग' सरहदी की बहू सुनीता नारंग जिन्होंने कभी अपने ससुर से मुलाक़ात न की, मगर उनके कलाम को सीने से लगाकर महफ़ूज़ रखा और अपने शरीक-ए-हयात नरेश नारंग और उनकी बेटी नेहा नारंग ठाकुरदास के साथ टोरेंटो में मैमोरियल बनाकर तक़रीबन सत्तर साल क़बल बनाई गई ''बज़्म-ए-अदब'' को ज़िंदा रखा।

हम मुतमइन और ख़ुश हैं कि ये क़ीमती संगीन पत्थर हमने मेहराब-ए-शाइरी में हमेशा के लिए सजा दिया है।

सच हैः

हर बड़े काम की तकमील है ख़ुद उसका सिला

सय्यद तक़ी आबिदी

22 अप्रैल 2022 ईसवी

रौ में है रख़्श-ए-उमर

नाम	:	सय्यद तक़ी हसन आबिदी
अदबी नाम	:	तक़ी आबिदी
तख़ल्लुस	:	'तक़ी'
वालिद का नाम	:	सय्यद सिब्ते नबी आबिदी (मरहूम)
वालिदा का नाम	:	संजीदा बेगम (मरहूमा)
मुक़ाम पैदाईश	:	देहली (इंडिया)
तालीम	:	एम.बी.बी.एस. (हैदराबाद, इंडिया) एम.एस. (ब्रिटानिया) एफ़.सी.ए.पी. (अमेरीका) एफ़.आर.सी.पी. (कनाडा)
पेशा	:	तबाबत
ज़ौक़	:	शाइरी, अदबी तहक़ीक-ओ-तन्क़ीद
शरीक-ए-हयात	:	गेती
औलाद	:	दो बेटियाँ (मासूमा और रौया) दो बेटे (रज़ा और मुर्तज़ा)

तसानीफ़ः-

(72) ''शहीद'' (1982), ''जोश-ए-मोद्दत'', ''गुलशन-ए-रौया'', ''इक़बाल के इरफ़ानी ज़ाविये'', ''इंशा अल्लाह ख़ाँ इंशा'', ''रमूज़-ए-शाइरी'', ''इज़हार-ए-हक़'', ''मुज्तहिद-ए-नज़्म मिर्ज़ा दबीर'',

''तालअ-ए-मेहर'', ''सल्क-ए-सलाम-ए-दबीर'', ''तज्ज़िया यादगार-ए-अनीस'', ''अबवाब उल मसाइब'', ''ज़िक्र दुरबारान'', ''उरुस-ए-सुख़न'', ''मसहफ़ फ़ारसी दबीर'', ''मसनवियात-ए-दबीर'', ''कायनात-ए-नजम'', ''रुप कुंवर कुमारी'', ''दरबार-ए-रिसालत सल्ल॰'', ''फ़िक्र-ए-मुतर्म्ईना'', ''ख़ोशा-ए-अंजुम'', ''दुद-ए-दरिया-ए-नजफ़'', ''तासीर मातम'', ''नजमी माया'', ''रौश-ए-इंक़लाब'', ''मसहफ़-ए-तग़ज़्ज़ल'', ''हुवाअन-नजम'', ''ताशिक़ लखनवी'', '' अदबी मोअजज़ा'', ''ग़ालिब दीवान-ए-नाअत-ओ-मन्क़बत'', '' चूँ मर्ग आयद'', ''रुबाइयात-ए-दबीर'', ''सब्द-ए-सुख़ान'', ''कुलियात-ए-ग़ालिब फ़ारसी'' (दो जिल्द, उर्दू), ''दीवान-ए-ग़ालिब देहलवी'', (फ़ारसी, ईरान एडिशन), ''फ़ैज़ फ़हमी'',, ''मुतालि दबीर की रिवायत'', ''उर्दू की दो शाहकार नज़्में'', ''रुबाईयात-ए-रशीद लखनवी'', ''रुबाईयात-ए-अनीस'', ''फ़ैज़ शनासी'', ''हाली फ़हमी'', ''मुसद्दस-ए-हाली'', ''कुलियात-ए-हाली'', ''बच्चों के हाली'', ''कलाम-ओ-सलाम-ए-अनीस'', ''कुलियात-ए-सईद शहीदी'', ''गुलज़ार की तख़लीक़ी सनफ़ तरवीनी तशरीह-ओ-तज्ज़िया'', ''बाक़ियात-ओ-नादरात फ़ैज़ अहमद फ़ैज़'', ''बुर्ज शर्फ़'', ''मुशी बाल मुकंद बेसबर'', ''मुताला-ए-रुबाइयाते फ़िराक़ गोरखपुरी'', ''हाली की नज़्में'', ''हाली की नातिया शाइरी'', ''हाली की ग़ज़लें और क़तआत'', ''गुलिस्तान-ए-हिन्द'', ''दीवान फ़िराक़ गोरखपुरी

कामिल'', ''तामीर-ए-बक़ा'', ''तक़ी आबिदी के मक़ालात का बन'', ''नैरंग' सरहदी शख़्सियत और फ़न''

ज़ैर-ए-तसनीफ़ः-

''हाली के क़सीदे और हाली के शख़्सी मरसिये'', ''तज्ज़िया-ए-शिकवा जवाब-ए-शिकवा'', ''फ़ानी ला-फ़ानी'', ''इक़बाल के चार मिसरे'', ''रुबाईयात-ए-बेदिल'', ''रुबाइयात-ए-सादेक़ैन'', ''दीवान-ए-फ़ारसी हाली'', ''फ़िराक़ फ़हमी'', ''नैरंग' सरहदी शख़्सियत और फ़न''

ज़िंदगीनामा

नाम	:	नंद लाल
तख़ल्लुस	:	'नैरंग'
अल्क़ाब	:	सरहदी - ख़ान
वालिद	:	साधूराम
पैदाईश	:	6 फ़रवरी 1912 ईसवी
मुक़ाम	:	मन्धरा (ज़िला डेरा इस्माईल ख़ान)
दादा	:	काले राम म्युनिसिपल कमेटी डेरा इस्माईल ख़ान में दारोग़ा चुंगी थे।
शग़ल	:	मोअल्लिम (ख़ालसा स्कूल डेरा इस्माईल ख़ान, ख़ालसा स्कूल पेशावर, अहीर स्कूल रेवाड़ी, हिन्दू स्कूल रेवाड़ी)
शौक़	:	शाइरी, अफ़्साना-निगारी, डरामा-निगारी ख़ुश-ख़ती, मुतरज्जम
शादी	:	पुष्पा कुमारी मुतवल्लिद 1924 ईसवी से 1941 में हुई।
औलाद	:	आठ (चार बेटे और चार बेटियाँ) तमाम औलाद को तालीम दिलवाई, तमाम आठ बच्चे कॉलज के डिग्री याफ़्ता हैं।
मज़हब	:	हिन्दू (ख़ुद कहते हैं शाइर किसी ख़ास मज़हब का क़ायल नहीं होता।)

तालीम-ओ-तर्बियत : दादा ने तर्बियत की।

अ : 7 साल की उम्र में प्राइमरी स्कूल में शिरकत हुई।

ब : 16 साल की उम्र में मिडिल स्कूल पास किया।

स : 19 साल की उम्र में मैट्रिक पास किया।

द : लाहौर गए ओरियंटल कॉलेज में दाख़िला लिया, लेकिन सेहत की ख़राबी की वजह से तालीम जारी न रख सके।

ह : 1937 ईसवीं में पच्चीस साल की उम्र में अदीब आलिम और मुशी आलिम पास किया।

व : 1937 ईंसवीं में मिडिल स्कूल में मुदर्रिस हो गए।

मुहाजिरत : 1947 ईसवीं में बीवी के साथ हवाई जहाज़ के ज़रिये देहली आए और चंद रोज़ बिरला मंदिर में क़याम किया।

ज़ुबान : पश्तो, उर्दू, फ़ारसी, अंग्रेज़ी और संस्कृत (खुद लिखते हैं 9 ज़बानें जानता हूँ)

मशग़ूलियात : पहले रेवाड़ी (गुड़गांव) में अहीर स्कूल में फ़ारसी टीचर हुए। फिर हिन्दू हाई स्कूल में काम शुरु किया और तमाम ज़िंदगी इसी में मुअल्लिम रहे।

शाइरी : नौवीं जमात से शाइरी का आग़ाज़ हुआ।

- मौलाना अता उल्ला ख़ान ने सरपरस्ती की।
- फिर मुंशी तिलोक चंद महरुम से सिलसिला आमोज़िश जारी रहा।
- फ़ैज़ अहमद फ़ैज़ से शागिर्दी का फ़ैज़ शामिल हुआ।
- उर्दू सभा के मुशाइरे, महाफ़िल और नशिस्तों में नज़म, अफ़सानों और उलूम शाइरी से फ़ायदा पहुँचा।
- ख़ालसा हाई स्कूल में कलाम पुख़्ता हो गया और कई शागिर्दों के उस्ताद हो गए।
- उर्दू और फ़ारसी में शाइरी जारी रही।

- 13 अक्तुबर 1953 ईसवी में ''बज़्म-ए-अदब'' का क़याम अमल में आया जो आज भी टोरंटो में 'बज़्म-ए-अदब सरहदी मेमोरियल' के नाम से मौजूद है।
- रेवाड़ी में इस बज़्म की जानिब से कई बड़े पैमाने पर मुशाइरे हुए। जनाब कुंवर महेन्द्र सिंह बेदी सहर डिप्टी कमिश्नर गुड़गांव की वजह से मुशाइरों की रौनक़ में इज़ाफ़ा हुआ।
- 'नैरंग' का कलाम दूरदर्शन से नश्र किया गया।
- अमूमन रात को शाइरी करते। बाअज़ औक़ात घर की दीवारों पर जिस शेर की आमद होती लिख देते थे। बाअज़ औक़ात शेर बच्चों से पढ़वाते और मेहनत करके उनका तलफ़्फ़ुज़ ठीक करवाते थे।

पढ़त : तहतुल-लफ़्ज़ से ख़ूब-सूरत आवाज़ में पढ़ते थे।

तसानीफ़ : ज़िंदगी में कोई मज्मुआ कलाम शाए न हो सका। रेवाड़ी और देहली के बाअज़ अख़बारों, जरीदों और रिसालों में क़तआत, ग़ज़लें और नज़्में शाए होती रहीं। मरने के बाद ''तामीर-ए-यास'' (उर्दू) ''एक था शाइर'' और ''ज़िंदगी के बाद'' किताबें हिन्दी में शाए हुईं।

पोशाक : उर्दू तहज़ीब के नक़ीब थे। काली शेरवानी, शेनील की टोपी, सफ़ेद पाजामा, घेती की जूते और हाथ में कश्मीरी बारीक छड़ी

ख़ूराक : ग़िज़ा के शौक़नि थे। शाम का खाना घर वालों के साथ खाते थे। (शराब को उमर-भर हाथ तक नहीं लगाया)

निज़ामुल औक़ात : सुबह जल्द उठ जाते और मुसलसल काम करते रहते। अमूमन रात के बारह एक बजे तक मुतालआ,

पढ़ाई या शाइरी करते रहते।

अख़्लाक-ओ-किरदारः नस्तालीक़ शख़्सियत के मालिक थे।
बहुत मुक़र्रा आदाब के क़ायल थे।
ज़ाहिरी तौर पर सख़्तगीर मगर दिल से बहुत नर्म थे।
ग़रीबों और दर्द भरों के दोस्त और हामी थे।
इज़्ज़त-ए-नफ़स की ख़ातिर कभी किसी से कलाम छपवाने को नहीं कहा।

आमदनी : तमाम ज़िंदगी तंगदस्ती में गुज़ारी।
मोअल्लिम की तन्ख़्वाह जो बाद में कम होकर पेंशन हो गई थी। कुछ उर्दू अंग्रेज़ी के टयुशन पढ़ाते और कभी कभार मुशाइरों या किसी कमीशन या ईनाम से कुछ पैसे मिलते तो सब बीवी बच्चों पर ख़र्च कर देते।

मुतालआ : रात में उर्दू फ़ारसी की किताबों और शुअरा का मुतालअ जारी रहता।
मिर्ज़ा ग़ालिब के दीवान के आशिक़ थे। उनके घर में ग़ालिब देहलवी के बड़े फ़्रेम की तस्वीर आवेज़ाँ थी।

मुसाफ़िरत : अफ़ग़ानिस्तान जवानी के ज़माने में टूरिस्ट गाईड की हैसियत से जाया करते थे उस वक़्त अभी बर्र-ए-सग़ीर तक़सीम नहीं हुआ था।
पेशावर, डेरा इस्माईल ख़ान, लाहौर, देहली, पटियाला, मेरठ, लखनऊ, जालंधर, अंबाला, होशियारपुर, अजमेर शरीफ़ और कई दूसरे मुक़ामात पर मुशाइरों और शे'री मुहफ़िलों में शरीक होते।

हिकायत (अ): 'नैरंग' सरहदी अपने तमाम बच्चों में पांचवें बेटे नरेश नारंग 'सलीम' को बहुत चाहते थे और हमेशा जहाँ भी जाते साथ रखते थे। उनके तमाम बेटे

'नैरंग' साहब के कलाम को मदरसे में तरन्नुम के साथ पढ़ते थे। नरेश नारंग 'सलीम' इसलिए भी बाप के चहेते थे कि वो तीन बेटियों के बाद पैदा हुए और बड़े गुणी भी थे। नरेश नारंग बयान करते हैं कि एक शाम को वो 'नैरंग' साहब के अपने किसी रिश्तेदार की शादी में शरीक होने के लिए देहली गए। 'नैरंग' साहब हमेशा की तरह शेरवानी, पाजामा और सर पर शेनील की टोपी पहने हुए थे। शादी के घर के किसी बड़े शख़्स ने 'नैरंग' साहब को शेरवानी में देखकर कहाः ''आप अगर अपने कपड़े बदल लेते तो अच्छा था।'' इस पर 'नैरंग' साहब ने कहा ''इन कपड़ों में क्या बुराई है और वैसे मेरे साथ दूसरे कपड़े नहीं हैं।'' इसके बाद 'नैरंग' साहब ने नरेश से कहाः ''हम अब इस रिश्तेदार की शादी में नहीं रहेंगे और फिर वो ख़ामोशी से वहाँ से निकल कर अपने शाइर दोस्त रामचंद्र के घर रात के दस बजे पहुँचे और इन के दोस्त ने 'नैरंग' साहब और नरेश नारंग को रात का खाना बनवाकर ज़ियाफ़त की। हम इस हिकायत में सिक्के के दोनों रुख़ यानि रामचंद्र जैसे फ़रिश्ता शख़्स के साथ रिश्तेदारों के बेगाना रुख़ को भी वाज़ेह कर रहे हैं किसी शाइर ने ख़ूब कहा हैः

अजब सुलगती हुई लकड़ियाँ हैं रिश्तेदार
अलग रहें तो धुआ दें मिलें तो जलने लगें

हिकायत(ब) : 'नैरंग' सरहदी को कोठारी कमीशन से जो तनख़्वाह बढ़ी थी उसकी एक मुश्त रक़म सात सौ रुपये मिली तो 'नैरंग' साहब ने बच्चों के जूते कपड़े ख़रीदे और अपनी बेगम के लिए बाक़ी पैसे ख़र्च कर दिये लेकिन

उनकी बेगम ने कहा कि ''जब तक 'नैरंग' साहब ख़ुद अपने लिए कुछ न ख़रीदें वो कोई चीज़ अपने लिए लेना पसंद नहीं करतीं।'' 'नैरंग' साहब ने ऐसे फ़िदाकार जीवन साथी के लिए ख़ूबसूरत नज़्म लिखी जो इस कुलियात में मौजूद है।

हिकायत (ज): नरेश नारंग कहते हैं कि 'नैरंग' साहब अच्छी उर्दू बोलने की ताकीद करते थे। उनके घर में उनके सब बेटे बेटियाँ अच्छी उर्दू बोलते थे। 'नैरंग' साहब के सबसे बड़े बेटे राजकुमार 'ख़ान' जो तंज़िया और तुंद मिज़ाज थे जो 'नैरंग' की ग़ज़ल का तंज़िया तर्जुमा करके गा रहे थे तो यह 'नैरंग' साहब को इतना बुरा लगा कि तक़रीबन एक साल तक बेटे से बात न की। यह थी उनकी उर्दू से मुहब्बत और तहज़ीब जो अंदरुन ख़ाना होने के बावजूद नरेश नारंग के ज़रिये हम तक पहुँची है।

अवार्डज़ : रेवाड़ी में उनके नाम की एक सड़क मौजूद है।
हरियाणा गर्वन्मेंट न उन्हें ईनाम से नवाज़ा था।
लखनऊ अदबी अंजुमन ने उन्हें ''मुहिब-ए-उर्दू'' ख़िताब दिया था।
उनके उर्दू अशआर मोहर सिंह के बुत-ए-संगीन के नीचे कुन्दा हैं।

बीमारियाँ : मैदा, जिगर और दिल की बीमारी के मरीज़ थे। लेकिन परवाह नहीं करते। उनकी एक नज़्म ''नैरंग अस्पताल में'' मौजूद है।

इंतक़ाल : 5 फ़रवरी 1973 ईसवी शाम के 7 बजे हरकत-ए-क़लब बंद हो जाने से हुआ।

ख़ुदा बख़्शे बहुत सी ख़ूबियां थीं मरने वाले में

मंज़ूम सवानेह हयात

- ‘नैरंग’ सरहदी ने उर्दू और फारसी में अपने ख़ुशख़त से सवानेह हयात मुसद्दस की शक्ल में लिखी है जो बहर हज़ज मस्मीन सालीम, मुफ़ाईलन (4) बार की तक्रार पर है। यह मुसद्दस छत्तीस (36) बंदो पर मुशतमिल है। इस के सरेवर्क़ पर शाइर ने अपना फारसी मुतआर नाम ‘‘नूर लतीफ खाँ नैरंग सरहदी’’ लिखा है।

  इस सवानेह हयात का मतला है,

वो सरहद की ज़मी जिस पर फिज़ाएँ नाज़ करती हैं
घटाएँ भी जहाँ की, वादियों से बचके चलती हैं

- इस मुसद्दस के आठवें बन्द में ‘नैरंग’ फ़ैज़ अहमद फ़ैज़ की शागीर्दी पर नाज़ाँ हैं। यह बन्द पुरा फारसी में है।
- क्यों के ‘नैरंग’ बहुत ख़ुश-खत थे हमने ‘‘तामीर-ए-बक़ा’’ में उन्हीं के हाथ से लिखी सवानहे हयात रखदी है।

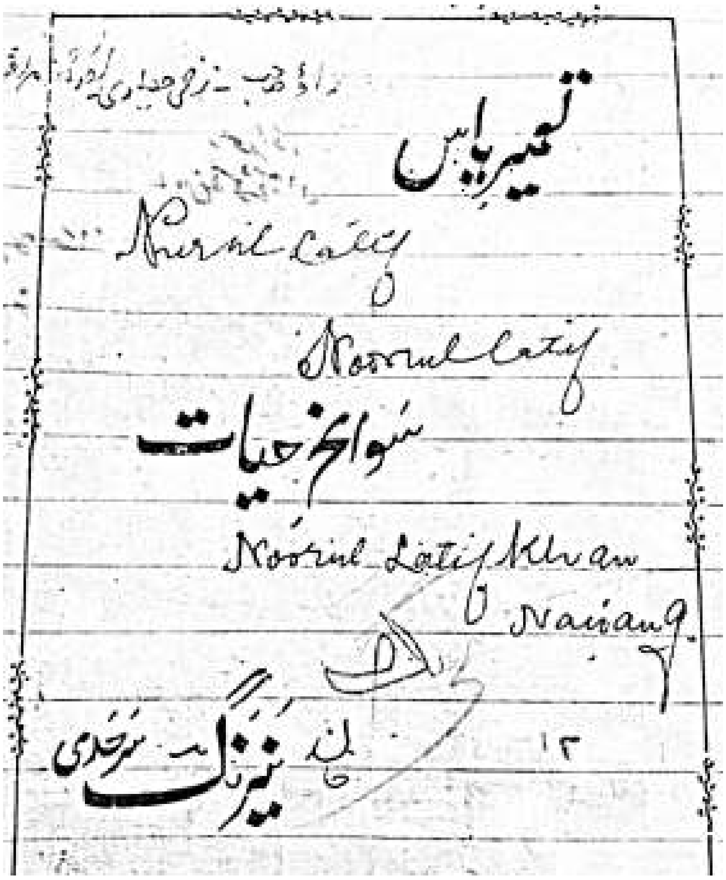
Noorul Latif
سوانح حیات
Noorul Latif Khan Nairang
نیرنگ سرحدی

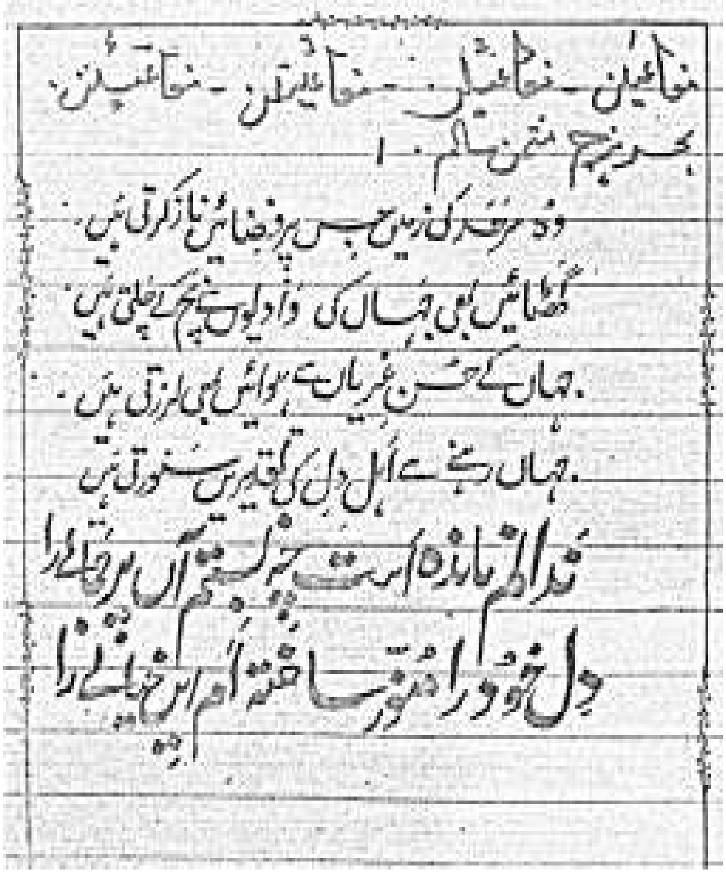

مفاعیلن ۔ مفاعیلاں ۔ مفاعیلتن ۔ مفاعیلن

بحر ہزج مثمن سالم ۔ ۱

وہ ارضِ مقدس کی زمیں جس پہ فضائیں ناز کرتی ہیں

گھٹائیں بھی جہاں کی وادیوں سے جھک کے چلتی ہیں

جہاں کے حسنِ عریاں سے ہوائیں بھی لرزتی ہیں

جہاں بجنے سے اہلِ دل کی تقدیریں سنورتی ہیں

ندانم ماندہ است چہ بستم آں پری رخسارہ را

دل خود را مستور ساختہ ام از خیالے را

मुफ़ाईलुन मुफ़ाईलुन मुफ़ाईलुन मुफ़ाईलुन
(बहर हज़ज मसमन सालिम)

(1)

वो सरहद की ज़मीं जिस पर फ़िज़ाएं नाज़ करती हैं
घटाएं भी जहाँ की वादियों से बचके चलती हैं
जहाँ के हुस्न ए ग़रयाँ से हवाएं भी लरज़ती हैं
जहाँ रहने से अहल-ए-दिल की तक़दीरें संवरती हैं
निदनम मांदा अस्त चह निस्बतम आँ पर जमाले रा
दिल ख़ुद रा मुनववर साख़्ता अम ईं ख़्याले रा

तर्जुमाः-

मैं नहीं जानता अब क्या निस्बत बाक़ी है इस पर जमाली से
बस मैंने अपने दिल को मुनव्वर किया है इस रौशन ख़्याली से

--*

وہ ارضِ پاک کہتے ہیں صفاؤں کی جسے بستی
ہے اہلِ نظر سمجھا کئے ہیں اپنی خوش بختی۔
قبول جس کی بلندی سے رہی افلاک کی پستی۔
ازل سے جس کو حاصل ہے شباب و حسن کی مستی۔
ہمیں جا مولد و مسکن شدہ است ایں عجب را
خدا آمرزند از مدتے ایں بد نصیبے را۔

(2)

वो अर्ज़-ए-पाक कहते हैं पठानों की जिसे बस्ती
जिसे अहल-ए-नज़र समझा किये हैं अपनी ख़ुश बख़्ती
ख़िजल जिसकी बुलंदी से रही अफ़लाक की पस्ती
अज़ल से जिसको हासिल है शबाब-ओ-हुस्न की मस्ती
हमें जा मोलदु-ओ-मस्किन शुदा अस्त ईं ग़ैर बे रा
जुदा करदन्द बाद अज़ मुद्दते ईं बद-नसाबे रा

तर्जुमाः-

उसी जगह इस ग़रीब की पैदाईश और घर भी था
एक मुद्दत के बाद इस बदनसीब को वहाँ से जुदा किया गया

--*

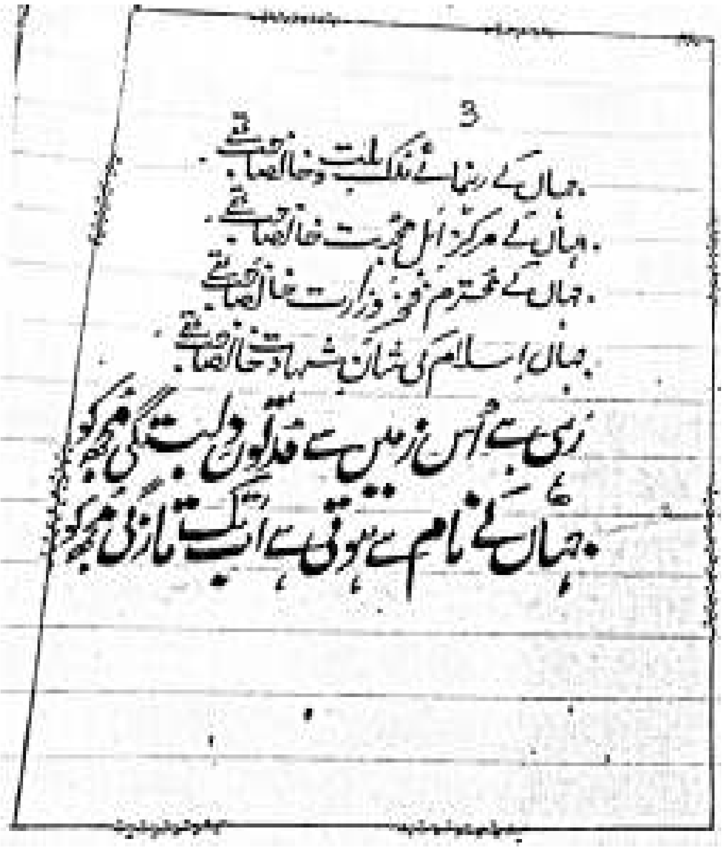

3

جہاں کے رہنمائے ملک و ملت خان صاحب تھے

جہاں کے مرکزِ اہلِ محبت خان صاحب تھے

جہاں کے محترم فخرِ وزارت خان صاحب تھے

جہاں اسلام کی شانِ شہادت خان صاحب تھے

زمیں ہے اُس زمیں سے قدر و دولت کی مجھ کو

جہاں کے نام سے ہوتی ہے اک تازگی مجھ کو

(3)

जहाँ के रहनुम-ए-मुल्क-ओ-मिल्लत-ओ-ख़ाँ साहब थे
जहाँ के मरकज़-ए-अहल-ए-मुहब्बत ख़ाँ साहब थे
जहाँ के मोहतरम फ़ख़र विज़ारत ख़ाँ साहब थे
जहाँ इस्लाम की शान-ए-शहादत ख़ाँ साहब थे
रही है उस ज़मीं से मुद्दतों दिल बस्तगी मुझको
जहाँ के नाम से होती है अब तक ताज़गी मुझको

--*

4

جہاں پر نازشِ اسلام ہے مرشد گاندھی۔

جہاں مقبولِ خاص و عام ہے مرشد گاندھی۔

جہاں والوں کے لب پر نام ہے مرشد گاندھی۔

تو بھی ہے اسیرِ دام ہے مرشد گاندھی۔

بدامِ اعتقادِ تام آں مردِ بزرگے را

بیاد آرم صنم جویم بنام آں مردِ بزرگے را۔

(4)

जहाँ पर नाज़िश-ए-इस्लाम है सरहद का गांधी
जहाँ मक़बूल-ए-ख़ास-ओ-आम है सरहद का गांधी
जहाँ वालों के लब पर नाम है सरहद का गांधी
ताज्जुब है असीर-ए-दाम है सरहद का गांधी
बिदइरम एतक़ाद-ए-ताम आँ मर्दे बुर्जुगे रा
बयाद आरम सुज्दम नाम आँ मर्दे बुर्जुगे रा

तर्जुमाः-

मैं उस अज़ीम शख़्स के नाम का मोतक़िद हूँ
हर सुबह उस अज़ीम शख़्स का नाम लेता हूँ

❊-❊-❊

۶۲

5

شنیده ام که پدرانم ز رجال صالح بودند
خدا را یاد می کردند که مردان خدا بودند
نسیمی که شنیدم از مزارش اهل شفا بودند
ازین بهتر خدا داند که آن دیگر که ها بودند
از آن مردان که الحال مرد با شعور بوده
او شوق شهادت داشت و دانم در شعور بوده

(5)

शुनीदा अम कि पिदरानम दबीर ख़ालसा बुदुन्द
ख़ुदारा याद मी करदन्द कि मरदान ख़ुदा बुदुन्द
ज़मीने काशतन्द अज़ मरज़ाअ अश अहल ग़ना बूदुन्द
अज़ीं बेहतर ख़ुदा दानद कि आं दीगर गह हा बूदुन्द
अज़आं मरदान काले राम मर्द-ए-बा-हुनर बुदुह
ओ तश्वीक़-ए-सियाहत-ओ-दायम दर सफ़र बुदुह

तर्जुमाः-

मैंने सुना है कि मेरे बाप ख़ालसा के दबीर थे
वो हमेशा ख़ुदा की याद में रहते और मर्दे-ए-ख़ुदा थे
खेती की ज़मीन के मालिक थे और ख़ुशहाल थे
वो अपने मुक़ाम पर दूसरों से बेहतर थे
काली राम उन मर्दों में हुनरमंद थे
उन्हें सियाहत का शौक़ था और हमेशा सफ़र करते थे

--*

6

زمینوں میں نہیں دیکھی کوئی ایسی زمیں میں نے
کوئی فردوس ارض جیسا نہیں دیکھا کہیں میں نے
نہیں دیکھی کبھی ایسی عروس نازنیں میں نے
ابھی تو ٹھیک سے دیکھی بھی نہ تھی جس کی جبیں میں نے

ابھی کھلنے نہیں پایا تھا باب زندگی اپنا
ادھورا رہ گیا افسوس خواب زندگی اپنا

(6)

ज़मीनों में नहीं देखी कोई ऐसी ज़मीं मैंने
कोई फ़िरदौस उस जैसा नहीं देखा कहीं मैंने
नहीं देखी कभी ऐसी उरुस-ए-नाज़नीं मैंने
अभी जी भर के देखी भी न थी जिसकी जैबीं मैंने
अभी खुलने नहीं पाया था बाब-ए-ज़िंदगी अपना
अधूरा रह गया अफ़सोस ख़्वाब ज़िंदगी अपना

--*

7

اوائلِ زندگی کا جوش تھا۔ اٹھتی جوانی تھی۔

غرض پُر لطف ہر حاصل ہماری زندگانی تھی

ہماری داستاں گویا الف لیلے کے عنواں کہانی تھی

زباں پر سوز تھی لب پر عجب آتش بیانی تھی

سخن سنجانِ سرحد میں لگا ہونے شمار اپنا۔

لگا بڑھنے نگاہِ قدر داناں میں وقار اپنا

(7)

अवायल ज़िंदगी थी, जोश था, उठती जवानी थी
ग़र्ज़ पुर-लुत्फ़ सेर हासिल हमारी ज़िंदगानी थी
हमारी दास्ताँ क्या एक बे-उनवाँ कहानी थी
ज़ुबाँ पुर-सोज़ थी, लब पर अजब आतिश बयानी थी
सुख़न संजान-ए-सरहद में लगा होने शुमार अपना
लगा बढ़ने निगाह-ए-क़द्र दानाँ में वक़ार अपना

--*

8

مرا شرف تلمذ شد بہ قدم فیض احمد خان۔

بروز اول نشستہ ام بہ پیش خدمت ایشان۔

رجوع خدمتش یکسال کردم با ہمہ یاران

فنون شاعری آموختہ ام بپیش از دیگران۔

نمی دانم کہ احسانش چگونہ بر زبان آرم۔

نہ طرز گفتگو دارم کہ آن را در میان آرم۔

(8)

मेरा शर्फ़-ए-तलमुज़ शुद ब क़दम-ए-'फ़ैज़' अहमद ख़ाँ
ब-दो ज़ानू निश्स्ता अम ब पेश-ए-ख़िदमत-ए-ईशाँ
रुजुअ ख़िदमतश यक साल करदम बा हमा याराँ
फ़ुनून-ए-शाइरी आमुख़्ता अम बेश अज़ दिगराँ
नमी दानम कि अहसानिश चिगूना बर जुबाँ आरम
न तर्ज़े गुफ़तगु दारम कि आँ रा दरमियाँ आरम

तर्जुमाः-

मुझे फ़ैज़ अहमद ख़ान से शागिर्दी का शर्फ़ मिला
मैंने उनके सामने शागिर्दी का ज़ानू तह किया
मैं एक साल तक दोस्तों के हमराह उनकी ख़िदमत में जाता रहा। शाइरी के फ़न को दोस्तों की निस्बत मैंने उन से ज़्यादा सीखा। मुझे नहीं मालूम कि उनके अहसान को किस तरह से जबान से अदा करुं। न मुझे वो गुफ़तगू करने का तरीक़ा आता है जिस से उनका अहसान अदा कर सकूं

--*

9

بہار زندگی میں ایک خونی انقلاب آیا۔

مخدر کا قدر لوٹا تجھ پہ جب خوش شباب آیا۔

نگاہ دور میں میرے جب وطن کا انتخاب آیا۔

تلاش ابر و بار میں نظر مجھ کو سراب آیا۔

زمیں ایسی پسند آئی بدل جس کا نہیں ملتا

وہ شجر گلستاں دیکھا کہ پھل جس کا نہیں ملتا

(9)

बहार-ए-ज़िंदगी में एक ख़ूनी इंक़लाब आया
ख़ुदा का क़हर टूटा मुझ पे जब जोश-ए-शबाब आया
निगाह-ए-दूरबीं में जब वतन का इंतिख़ाब आया
तलाश-ए-अब्र-ओ-बाराँ में नज़र मुझको सराब आया
ज़मीं ऐसी पसंद आई बदल जिसका नहीं मिलता
वो शज्र गुल फ़िशाँ देखा कि फल जिसका नहीं मिलता

--*

15

اسی نخلِ تمنا پر بنایا آشیاں اپنا
سمجھ بیٹھا اسی خطے کو گویا آسماں اپنا
کہاں جلتا یا روح کے جھٹکے نشاں اپنا
خود اپنے دل پہ بجلی بن گیا وہم و گماں اپنا
بہاروں نے فریب ایسا دیا تھا خزاں کے ملتے ہی
اچانک آ گئے پنجاب کے ریگِ بیاباں میں

(10)

इसी नख़्ले तमन्ना पर बनाया आशियाँ अपना
समझ बैठा इसी ख़ित्ते को गोया इक जहाँ अपना
कहा करता था यारों से जिसे जन्नत-ए-निशाँ अपना
खुद अपने दिल पे ज़ाहिर हो गया वहम-ओ-गुमाँ अपना
बहारों के मज़े लेता था सरहद के गुलिस्ताँ में
अचानक आ पड़ा पंजाब के रेग-ए-बयाबाँ में

--*

نگاہ حضور دم و بسکن با مرادم دل شد آنجا۔

کہ اولادے بچند بے درمیان اہل شد آنجا۔

برائے قصد من شاید آب تو دل شد آنجا۔

در دفتے کا ختم بسکن ثمر حاصل شد آنجا۔

بباغ با مراد من گل اول شگفتہ شد۔

شدہ بیدار بخت اینجا بآن جائے کہ خفتہ شد

(11)

निकाह करदम-ओ-लेकिन ब-मुरादम दिल निषद आंजा
कि औलादे ब-चंदे दरमियाँ शामिल निषद आंजा
बराए मक़सद-ए-मन शायद आब-ओ-गुल निषद आंजा
दरख़्ती काशतम लेकिन समर हासिल निषद आंजा
ब-बाग़-ए-बा मुराद-ए-मन गुल अव्वल शगुफ़ता शुद
शुदा बेदार बख़्त एन्जा बा-आँ जाए कि ख़ुफ़ता शुद

तर्जुमाः-

निकाह तो किया लेकिन दिल की मुराद वहाँ बर न आई
मुझे वहाँ औलाद नसीब न हुई
शायद इसकी वजह यह हो कि वहाँ मेरे हिस्से का पानी और मिट्टी न थी
मैंने झाड तो बोया लेकिन उसका फल न मिला
मेरे मुरादों के बाग़ में मेरा पहला फूल खिला
उस मुक़ाम पर मेरे नसीब जागे जहाँ मेरी क़िस्मत ख़राब हुई

--*

12

مجھے وہ یاد آتی ہے پشاور کی زمیں اب بھی
مجسم صورت زیبا وہ نورانی جبیں اب بھی
نشاط انگیز روشوں پر گلاب و یاسمیں اب بھی
کسی صورت میں جنت کی زمیں سے کم نہیں اب بھی

وہ ابر برشگال اب بھی پشاور پر برستے ہیں
یہاں ہم ہیں کہ اک اک بوند پانی کو ترستے ہیں

(12)

मुझे वो याद आती है पेशावर की ज़मीं अब भी
मुजस्सम सूरत-ए-ज़ेबा वो नूरानी जबीं अब भी
निशात अंगेज़ रोशों पर गुलाब-ओ-यास्मीं अब भी
किसी सूरत में जन्नत की ज़मीं से कम नहीं अब भी
वो अब्र-ए-बर्शगाल अब भी पेशावर पर बरसते हैं
यहाँ हम हैं कि इक इक बूंद पानी को तरसते हैं

--*

13

ریواڑی کی زمیں پر کب سیاہ بختی نہیں آتی۔
کبھی پانی نہیں آتا، کبھی بجلی نہیں آتی۔
ہماری آنکھ سے کس روز طوفانی نہیں آتی۔
مگر افسوس نل سے بوند پانی کی نہیں آتی۔
یہاں صدیوں سے اب تک صورتِ انسان باقی ہے
تعجب ہے کہ زندہ کس طرح سے جان باقی ہے

(13)

रेवाड़ी की ज़मीं पर कब सियाह-बख़्ती नहीं आती
कभी पानी नहीं आता, कभी बिजली नहीं आती
हमारी आँख से किस रोज़ तूफ़ानी नहीं आती
मगर अफ़सोस नल से बूंद पानी की नहीं आती
यहाँ सदियों से अब तक सूरत-ए-इंसान बाक़ी है
ताज्जुब है कि ज़िंदा किस तरह से जान बाक़ी है

--*

14

گرانی سے ہماری صورتِ حالات ابتر ہے ۔

حقیقت ہے ایسی زندگی سے موت بہتر ہے ۔

تنفس کی روانی کیا - غموں کا ایک نشتر ہے ۔

بچنے کی صورت یہی ہے کہ خرچ سے نہ ڈرے ۔

بدین صورت مشکل آرزوئے زندگی خواہد

کہ ضد ماذی نفس ازین گرانی خود کشی خواہند

(14)

गरानी से हमारी सूरत-ए-हालात अबतर है
हक़ीक़त है कि ऐसी ज़िंदगी से मौत बेहतर है
क़फ़स की ज़िंदगानी क्या, ग़मों का एक नश्तर है
नहीं कहने की जुरअत ये हमारी रुख़ से ज़ाहिर है
बदीं सूरत ब-मुश्किल-ए-आरज़ू-ए-ज़िंदगी ख़्वाहिन्द
कि सदहा ज़ी नफ़्स-ए-अज़ीं गरानी ख़ुदकुशी ख़्वाहिन्द

--*

15

شنیدہ ام قیامت عزم رحلے کہ می گزرد ۔

بلند دیدہ است بر حرف وزیرا کہ می گزرد ۔

خواب عدم دیدہ کسی چنین کہ می گزرد ۔

زیاد آید رایں چنین کہ می گزرد ۔

مگر کو غم جہاں طے ایں گرفتی ہمی تم اے جا

خدا داند یہ مشکل زندگانی ہمی تم اے جا ۔

(15)

नदीदा अम तमाम उम्र ईं हाले कि मी गुज़र्द
बलरज़ीदा अस्त हर मर्द-ओ-ज़नी लहज़े कि अमी गुज़र्द
ब-ख़्वाबे हम न दीदा किस चुनीं ख़्वाबे कि मी गुर्ज़द
न याद आयद के अज़ ईं चुनीं साले कि मी गुर्ज़द
नमी गोइम चिसाँ तय ईं गिरानी मी कुनम ईं जा
ख़ुदा दानद ब-मुश्किल-ए-ज़िंदगानी मी कुनम ईं जा

--*

20

16

ہوا کچھ روز سے حاصل ہمیں انعام ہریانہ

بنارس کی صبح سے خوشنما ہے شام ہریانہ۔

نہ ہو کیوں شادماں ہر فرد خاص و عام ہریانہ۔

کیور باغ بھی لیتے ہیں جب کا نام ہریانہ۔

طلوع صبح سے پھیلی ہوئی ہے روشنی ہر سو۔

دلوں میں ہو گئی پیدا اسی سے تازگی ہر سو۔

(16)

हुआ कुछ रोज़ से हासिल हमें ईनाम हरियाणा
बनारस की सुबह से ख़ुशनुमा है शाम हरियाणा
न हो क्यों शादमाँ हर फ़र्द-ए-ख़ास-ओ-आम हरियाणा
तयूर-ए-बाग़ भी लेते हैं जब कि नाम हरियाणा
तुलुअ सुबह से फैली हुई है रौशनी हर सू
दिलो में हो गई पैदा इसी से ताज़गी हर सू

--*

17

یہاں کے رہنمائے ملک و ملت راؤ صاحب ہیں۔

یہاں کے آفتاب علم و حکمت راؤ صاحب ہیں۔

یہاں کے جلوہ فرمائے وزارت راؤ صاحب ہیں۔

یہاں کے منبع بحر سخاوت راؤ صاحب ہیں۔

اگر خواہد دلش تا روں کشد ہر روز ستارے را۔
شہنشاہے مگر داند اگر خواہد گدائے را۔

(17)

यहाँ के रहनुमा-ए-मुल्क-ओ-मिल्लत राव साहब हैं
यहाँ के आफ़ताब-ए-इल्म-ओ-हिकमत राव साहब हैं
यहाँ के जलवा फ़रमा-ए-विज़ारत राव साहब हैं
यहाँ के मुम्बा बहर-ए-सख़ावत राव साहब हैं
अगर ख़्वाहिद दिलश, क़ारुं कुन्द हर रोस्ता-ए-रा
शहंशाहे बगर दांद अगर ख़्वाहिद गदा-ए-रा

तर्जुमाः-

अगर वो चाहें तो हर देहाती को क़ारुन कर दें
वो अगर चाहें तो हर भिकारी को शहंशाह बना दें

--*

22

18

فدائے ملک و ملت بانیٔ پاکستان وطن بھی ہے

وہ ہمدرد ضعیفاں اور نگہبانِ وطن بھی ہے

یہ وہ دل ہے کہ جس میں جوش و ارمانِ وطن بھی ہے

اسی کا دم ہے خوں رنگت گلستانِ وطن بھی ہے

عمر ساری محمد حسن نے خدمت اردو زباں کرتے

گزر جائیگی باقی بھی یونہی آہ و فغاں کرتے

(18)

फ़िदा-ए-मुल्क-ओ-मिल्लत बाई जी शान-ए-वतन भी है
वो हमर्दद-ए-ज़ईफ़ाँ और निगहबान-ए-वतन है
यह वो दिल है कि जिस में जोश-ओ-अरमान वतन भी है
उसी का मद्दह ख़्वाह 'नैरंग' सुख़न-दान-ए-वतन भी है
गुज़ारी उम्र जिसने ख़िदमत-ए-उर्दू जुबाँ करते
गुज़र जाएगी बाक़ी भी यूंही आह फुग़ाँ करते

--*

19

تلاطم اس زمیں کے جب باعجازِ عالم تھے۔

وہ اہلِ سیف تھے جنگ آزما تھے، رازِ عالم تھے

وہ سر رشکِ اجل تھے، جنگجو، جانبازِ عالم تھے

وہ فخرِ خاندان، سرمایۂ صد نازِ عالم تھے

کیے ثابت بزرگوں کے عمل انگریز کے آگے

نہیں جھکنے دیے اہلِ وطن انگریز کے آگے۔

(19)

तुलाराम इस ज़मीं के साहिबे एजाज़-ए-आलिम थे
वो अहल सैफ़ थे, जंग आज़मा थे, राज़-ए-आलम थे
वो हर हंग-ए-अजल थे, जंग-जू, जांबाज़-ए-आलम थे
वो फ़ख़र-ए-ख़ानदाँ, सरमाया-ए-सद-ए-नाज़-ए-आलम थे
किये साबित बुजुर्गों के चलन अंग्रेज़ के आगे
नहीं झुकने दिये अहल-ए-वतन अंग्रेज़ के आगे

--*

مٹا ہے کس طرح اپنا نشاں ہم کہہ نہیں سکتے۔
لٹا کیسے ہمارا کارواں ہم کہہ نہیں سکتے۔
ستم جتنا ہوا اہل جہاں ہم کہہ نہیں سکتے۔
بزرگوں کی زباں تو بھی زباں ہم کہہ نہیں سکتے۔
یہ کیا انصاف ہے۔ اہل نظر انصاف فرمائیں
یہ نوبت اور زباں سے اس قدر انصاف فرمائیں

(20)

मिटा है किस तरह अपना निशाँ हम कह नहीं सकते
लुटा कैसे हमारा कारवाँ हम कह नहीं सकते
सितम कितना हुआ अहल-ए-जहाँ हम कह नहीं सकते
बुज़ुर्गों की ज़ुबाँ को भी ज़ुबाँ हम कह नहीं सकते
यह क्या इंसाफ़ है, अहल-ए-नज़र इंसाफ़ फ़रमाएं
यह नफ़रत और ज़ुबाँ से इस क़द्र-ए-इंसाफ़ फ़रमाएं

--*

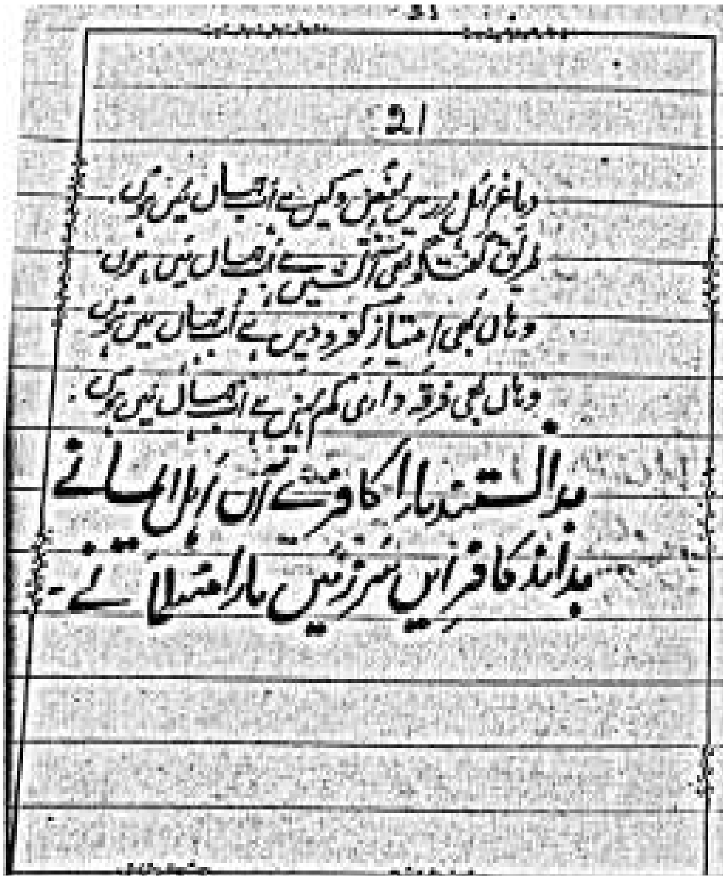

۲۱

دماغ اہل ورس لیکن وکیں بے انجان ہیں ہم

زباں تک کو بھی ترکیب سے ناجاں ہیں ہم

وہاں بھی امتیاز کو دیں بے انجان ہیں ہم

وہاں بھی فرقہ واری کم نہیں بے انجان ہیں ہم

بد الستند بار اکافرتے آن اہل ایماں نے

بد اند کافر ایں سرزمیں بار المصلا تے۔

(21)

दिमाग़ अहल ज़र में बुग़ज़-ओ-कीं है अब जहाँ मैं हूँ
तरीक़-ए-गुफ़्तगू भी आतिशीं है अब जहाँ मैं हूँ
वहाँ भी इम्तियाज़ कुफ़्र-ओ-दीं है अब जहाँ मैं हूँ
वहाँ भी फ़िरक़ादारी कम नहीं है अब जहाँ मैं हूँ
बदानिस्तन्द मारा काफ़िरे आँ अहल-ए-ईमा ने
बदानद काफ़िर-ए-ईं सर ज़मीं मारा मुसलमा ने

--*

26

22

جہاں بکھرے ہوئے پھولوں کو بھی چنتا نہیں کوئی۔
جہاں ٹوٹے ہوئے تاروں کو بھی تکتا نہیں کوئی۔
جہاں اشعار کو سن کر بھی سر دھنتا نہیں کوئی
جہاں پر شاعروں کی بات تک سنتا نہیں کوئی۔

زمیں وہ کیا۔ فرشتے بھی اگر آباد ہوں اس میں۔
وہ دوزخ ہے چمن پرور اگر ناشاد ہوں اس میں

(22)

जहाँ बिखरे हुए फूलों को भी चुनता नहीं कोई
जहाँ टूटे हुए तारों को भी बुनता नहीं कोई
जहाँ अशआर को सुनकर भी सर धुनता नहीं कोई
जहाँ पर शाइरों की बात तक सुनता नहीं कोई
ज़मीं वो क्या, फ़रिश्ते भी अगर आबाद हों उसमें
वो दोज़ख़ है सुख़न-परवर अगर नाशाद हों उसमें

--*

23

سبب ہے میں اگر مورد غم ہوں اس زمانے میں
کہ مفتاحِ درِ اہلِ کرم ہوں اس زمانے میں
میں شاید اس لیے غیروں سے کم ہوں اس زمانے میں
کہ بدبختی سے اہلِ قلم ہوں اس زمانے میں

نحوست نے کہاں بسنے دیا آرام سے مجھ کو
سدا شکوہ رہا ہے گردشِ ایام سے مجھ کو

(23)

बजा है, मैं कि महवे-ओ-रंज-ओ-ग़म हूँ इस ज़माने में
कि मुहताज दर-ए-असल-ए-करम हूँ इस ज़माने में
मैं शायद इस लिए ग़ैरों से कम हूँ इस ज़माने में
कि बद-बख़्ती से इक अहल-ए-क़लम हूँ इस ज़माने में
नहूसत ने कहाँ रहने दिया आराम से मुझ को
सदा शिकवा रहा है गर्दिश-ए-अय्याम से मुझ को

--*

24

کوئی محفل میں از پئے جاں آج اظہارِ غم کروں

بن ولادت [illegible] کی [illegible] رقمِ غم کروں

دل و جان وار دے [illegible] آنکھ [illegible] نظم کروں

[illegible] ندامت [illegible] الم کروں

حسینانِ جہاں پروز کا نقشہ مٹ گیا دل سے

وہ دلِ نور زینتِ محفل تھا گھبرا گیا ہے مجھ سے

(24)

कोई महफ़िल नहीं ऐसी जहाँ इज़हार-ए-ग़म कर लूं
जहाँ दिलदोज़ आहों की कहानी को रक़म कर लूं
दिल-ओ-जाँ को अदब से जाके औक़ाफ़-ए-सनम कर लूं
जहाँ अश्क निदामत को अगर चाहूँ तो कम कर लूं
हस्तियान-ए-जहाँ परवर का नक़्शा मिट गया दिल से
वो दिल जो ज़ीनत-ए-महफ़िल घबराता है महफ़िल से

✻-✻-✻

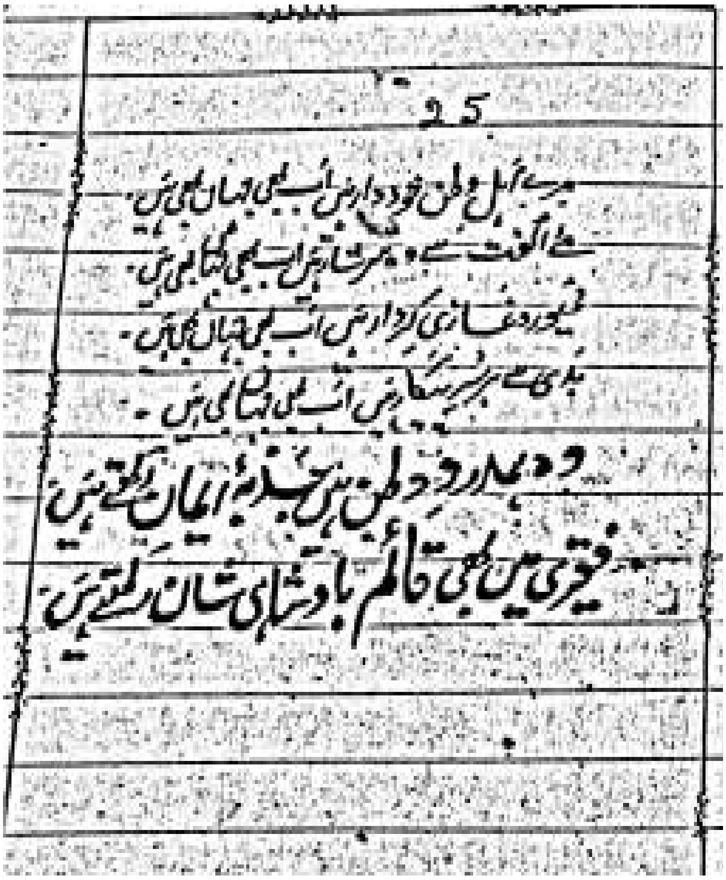

25

میرے اہلِ وطن خودداری میں اب بھی جہاں بانی ہیں
بے الفت سے ۔ مگر شان میں اب بھی [illegible] ہیں
غیور و عفا [illegible] کردار میں اب بھی جہاں بانی ہیں۔
ہر پہلو سے [illegible] پیشانی میں اب بھی [illegible] ہیں۔

وہ ہمدردِ وطن ہیں جذبۂ ایمان رکھتے ہیں
فقیری میں بھی قائم بادشاہی شان رکھتے ہیں

(25)

मेरे अहल-ए-वतन ख़ुद-दार हैं नहीं अब भी जहाँ भी हैं
मय उल्फ़त से वो सरशार हैं अब भी जहाँ भी हैं
ग़यूर-ओ-ग़ाज़ी-ए-किरदार हैं अब भी जहाँ भी हैं
बदी से बर-सरे पैकार हैं अब भी जहाँ भी हैं
वो हमदर्द-ए-वतन हैं जज़्बा-ए-ईमान रखते हैं
फ़क़ीरी में भी क़ाइम बादशाही शान रखते हैं

--*

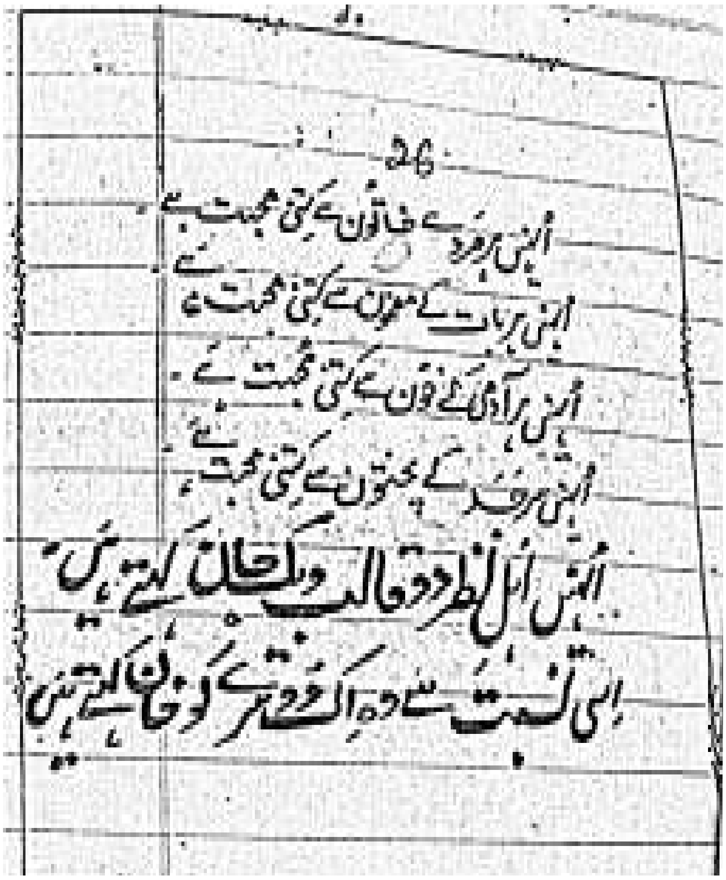

26

انہیں ہر مرد سے خاتون سے کتنی محبت ہے
انہیں ہر بات سے مومن سے کتنی محبت ہے
انہیں ہر آدمی کے خون سے کتنی محبت ہے
انہیں ہر فرد کے بچوں سے کتنی محبت ہے
انہیں اہلِ نظر دو قالب و یک جان لگتے ہیں
اسی نسبت سے وہ اک فخرِ بشر کو جان لگتے ہیں

(26)

उन्हें हर मर्द से ख़ातून से कितनी मुहब्बत है
उन्हें हर बात के मज़्मून से कितनी मुहब्बत है
उन्हें हर आदमी के ख़ून से कितनी मुहब्बत है
उन्हें सरहद केभी पख़्तून से कितनी मुहब्बत है
उन्हें अहल-ए-नज़र दो क़ालिब-ओ-यक जान कहते हैं
इसी निस्बत से वो इक दूसरे को ख़ान कहते हैं

--*

۳۷

27

شکایت می کنند احباب من کم سخن گویم
سخن گوئی ازو لازم نیست آن رو خفی گویم
سخن نہ بود گر شستہ از زبان واعظے گویم
بی دولت است ایں سخن گوئی وے گویم

تمنا از کسے داد سخن ہرگز نمی دارم
مرا زو قیمت ایں کہ خدمت علی با رم

(27)

शिकायत मी कुनन्द अबाब-ए-मन कि मुश्किले गोयम
सुख़न गुफ़तन कि लाज़िम नीस्त आँ दर महफ़िले गोयम
मनम मजबूर गुश्ता अज़ जबान-ओ-अज़दिले गोयम
हमी दानम निशायद आँ सुख़न गुफ़तन वले गोयम
तमन्ना अज़ किसे दाद-ए-सुख़न हर गिज़ नमी दारम
मेरा ज़ौक़ियत ईं कि ख़िदमत-ए-मिल्ली बजा आरम

तर्जुमाः-

मेरे दोस्तो को शिकयत है कि मैं मुश्किल शाइरी करता हूँ
वो बातें लिख्ता हूँ जो महफ़िल के लिए ज़रुरी नहीं
मैं जबान से मजबूर होकर दिल से कहता हूँ
मैं यही जानता हूँ कि शायद यह न कहूं मगर कहता हूँ
मैं किसी से शाइरी की दाद नहीं चाहता
यह मेरा ज़ौक़ है कि अपनी क़ौम की ख़िदमत करुं

--*

۷۸

نہیں معلوم کب سے اس جگہ محو فغاں ہوں میں
گزشتہ دور کی اک مختصر سی داستاں ہوں میں
نشان فصل بہار آرائی پژمردہ گلستاں ہوں میں
بس اتنا جانتا ہوں شاعر اہل زباں ہوں میں

زباں بہر زباں آموختہ ام قدر آں دانم
اگر چہ نیست قدر من میان دوستاں دانم

(28)

किसे मालूम कब से इस जगह महव-ए-फ़ुग़ाँ हूँ मैं
गुज़िश्ता दौर की इक मुख़्तसर सी दास्ताँ हूँ मैं
जहाँ फ़सले बहार आई न वो गुलिस्ताँ हूँ मैं
बस इतना जानता हूँ शाइर-ए-अहल-ए-ज़ुबाँ हूँ मैं
ज़ुबान-ए-बहर ज़ुबाँ आमूख़्ता अम क़द्र-ए-आँ दानम
अगरचे नेस्त क़द्र मन म्यान-ए-दोस्ताँ दानम

तर्जुमाः-

मैंने ज़बान, अदबी ज़बान की तरह सीखी है इसकी क़द्र जानता हूँ
अगरचे कि मैं जानता हूँ मेरे दोस्तो में मेरी क़द्र नहीं है

--*

29

مری قسمت بھی بولی الحمد آو نے بنا رکھدی۔
حسد رکھتے ہے جو قابل نہ تھی تو نے وہاں رکھدی۔
زمیں گل میں ریگستاں میں تو نے پہنچا بار آور رکھدی۔
کہ دیں ذوق تجھے گل نو جس میں کہ نثوں پہ زباں رکھدی"

الٰہی ابر رحمت خانۂ اغیار پر برسے۔
اگر گرجے تو وطن کا دانہ انگور کو ترسے۔

(29)

मेरी क़िस्मत की पुंजी ऐ ख़ुदा तूने कहाँ रख दी
जगह रखने के जो क़ाबिल न थी तूने वहाँ रख दी
फ़रेब-ए-गुल में रेगिस्ताँ में जान-ए-नातवाँ रख दी
"कि मैंने शौक़-ए-गुल बोसी में कांटों पर ज़ुबान रख दी [1]"
इलाही! तेरी रहमत ख़ाना-ए-अग़यार पर बरसे
अंगूरों के वतन का दाना-ए-अंगूर को तरसे

--*

1. सीमाब अकबराबादी

30

مکاتب میں ایک کے ایک لڑکے کو فرماتے ہے۔

ہر ایک لفظ و حروف کو ادا کرتے دل میں اس کی قدر رکھتے ہے۔

تمام عمر کی بنا پر اس زمین میں اس کی عزت ہے۔

اور اس عزت میں انسان روز تک بھی پہنچتے ہے۔

ہے شہرت بانی کا رتبہ کی وسیلہ پہنچتے ہیں۔

گرو دھن دیس کا اسم گرامی حضرات بنے۔

(30)

मकातिब में यहां के एक मक्तब को फ़ज़ीलत है
हर इक ख़ुर्द-ओ-कलाँ के दिल में उसकी क़द्र-ओ-क़ीमत है
नताइज की बिना पर इस ज़मीं पर उसकी अज़्मत है
और इस अज़्मत में पिन्हा रोज़-ओ-शब की सख़्त मेहनत है
है शोहरत बानी-ए-मक्तब की, इसको मानते हैं सब
गोवरधन दास का इस्म-ए-गिरामी जानते हैं सब

--*

31

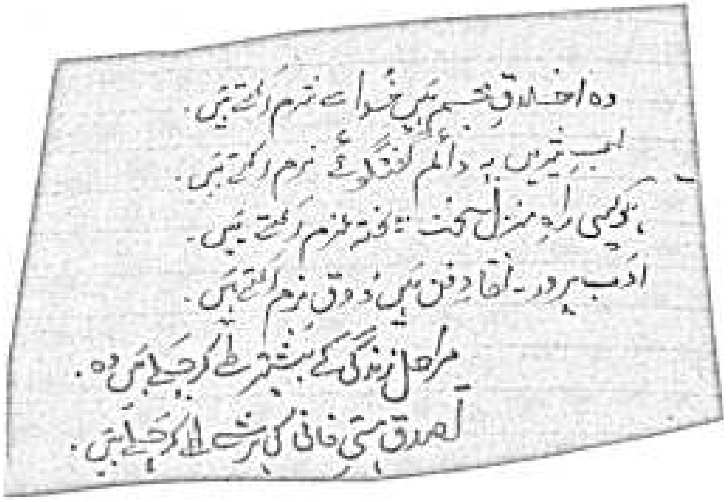

وہ اخلاق مجسم میں خوشبوئے ترنم رکھتے ہیں۔
لب شیریں پہ دائم گفتگوئے نرم رکھتے ہیں۔
ہو کیسی راہِ منزل سخت تو عزم مصمم رکھتے ہیں۔
ادب پرور۔ ثقافت و فن میں ذوق نرم رکھتے ہیں۔
مراحل زندگی کے بخیر طے کر چکے ہیں وہ۔
آ صدق ہستی فانی کی رخصت لے کر چلے ہیں۔

(31)

वो अख़्लाक़-ए-मुजस्सम हैं ख़ुदा से शर्म रखते हैं
लबे शीरीं पे दाइम गुफ़्तगू-ए-नरम रखते हैं
हो कैसी राह-ए-मंज़िल सख़्त, पुख़्ता अज़्म रखते हैं
अदब परवर, नक़्क़ाद-ए-फ़न हैं ज़ौक़-ए-बज़्म रखते हैं
मराहिल ज़िंदगी के बेश्तर तय कर चुके हैं वो
तसद्दुक़ हस्ती-ए-फ़ानी की हर शै कर चुके हैं

--*

32

بہت چمکا ہے میدانِ سیاست میں بھی نام اُن کا
میانِ دوستاں آ کے اعلیٰ و ارفع ہے مقام اُن کا
نوشتہ [illegible] میں بھی اعلیٰ [illegible] انتظام اُن کا
[illegible] اہلِ شہر میں بھی خاص و عام اُن کا
رہا ہے راقمِ ناچیز پر اُن کا کرم برسوں
رہے گا سر [illegible] ہم پر برسوں

(32)

बहुत चमका है मैदान-ए-सियासत में भी नाम उनका
मियान-ए-दोस्ताँ आला-ओ-अरफ़ा है मुक़ाम उनका
फ़क़त मक्तब में ही आला नहीं है इंतिज़ाम उनका
कि है औसाफ़ अहल-ए-शहर में भी ख़ास-ओ-आम उनका
रहा है राक़िम नाचीज़ पर उनका करम बरसों
रहेगा सर मेरा बार-ए-कश-ए-मन्नत से ख़म बरसों

--*

33

کسے معلوم ہے اب اس جگہ محو فغاں ہوں میں

گزشتہ دور کی اک مختصر سی داستاں ہوں میں

کبھی تھا فصل بہار آرائی زیب گلستاں ہوں میں

کہ بس اتنا جانتا ہوں ہست اہل زباں ہوں میں

زبان مہر زبانش آموختہ ام قدر آن دانم

اگرچہ نسبتے قدرے بہ نسبت دوستاں دانم

(33)

किसे मालूम कब से इस जगह महवे फ़ुग़ाँ हूँ मैं
गुज़िश्ता दौर की इक मुख़्तसर सी दास्ताँ हूँ मैं
जहाँ फ़सल-ए-बहार आई न हो वो गुलिस्ताँ हूँ मैं
बस इतना जानता हूँ शाइर अहल-ए-ज़बाँ हूँ मैं
जबान हर जबाँ न आमुख़्ता अम क़द्र-ए-आँ दानम
अगरचे नीस्त क़द्र-ए-मन मियान-ए-दोस्ताँ दानम

--*

34

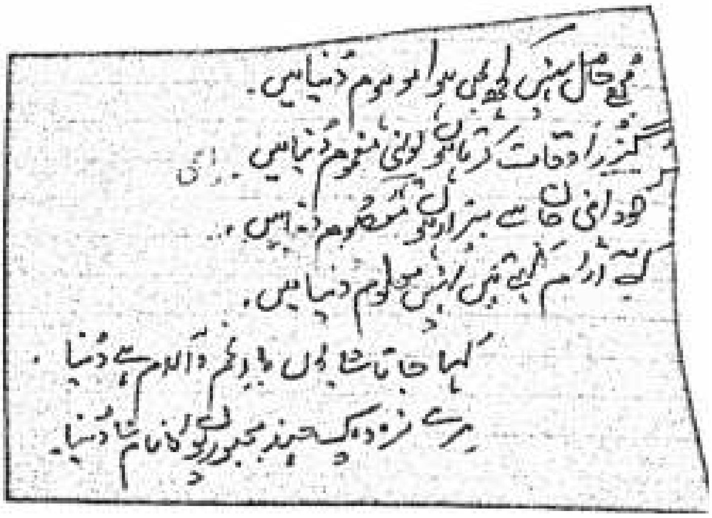
مجھے حال پہ نہیں کچھ بھی ہوا تو معلوم دنیا میں۔
گذر اوقات کر رہا ہوں تو کوئی مغموم دنیا میں۔
جو دانی حال سے بیزار ہو کر مغموم دنیا میں۔
کہ یہ اور ہم اپنے بھی نہیں معلوم دنیا میں۔
کہاں جا تماشا ہوں بار بار کہ والدہ ہے دنیا۔
مرے نزدیک جینا مجبوری کا نام ہے دنیا۔

(34)

मुझे हासिल नहीं कुछ भी हुआ मोहूम दुनिया में
गुज़र औक़ात करता हूँ यूंही मग़मूम दुनिया में
ख़ुद अपनी जान से बेज़ार हूँ मासूम दुनिया में
किसे आराम कहते हैं नहीं मालूम दुनिया में
कहा जाता है यूँ बार-ए-ग़म-ओ-आलाम है दुनिया
मेरे नज़दीक चंद मजबूरियों का नाम है दुनिया

--*

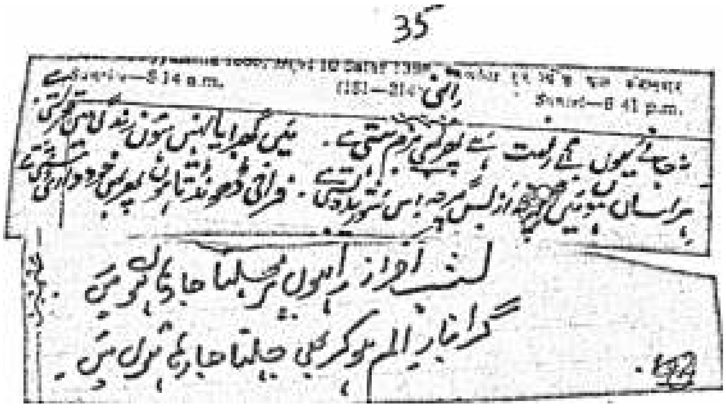

35

Sunrise—6 14 a.m. (181—214) Sunset—6 41 p.m.

(35)

न जाने क्यों मुझे रग़बत है इतनी बज़्म-ए-हस्ती से
मैं घबराया नहीं हूँ ज़िंदगी में क़अर पस्ती से
हरासाँ हूँ मैं अज़ बस गरचे इस शोरीदा बस्ती से
फ़राख़ी ढूँडता हूँ फिर भी ख़ुद-दारी-ओ-मस्ती से
नशेब अफ़रोज़ राहों पर मचलता जा रहा हूँ मैं
गिरा नबार अलम होकर भी चलता जा रहा हूँ मैं

--*

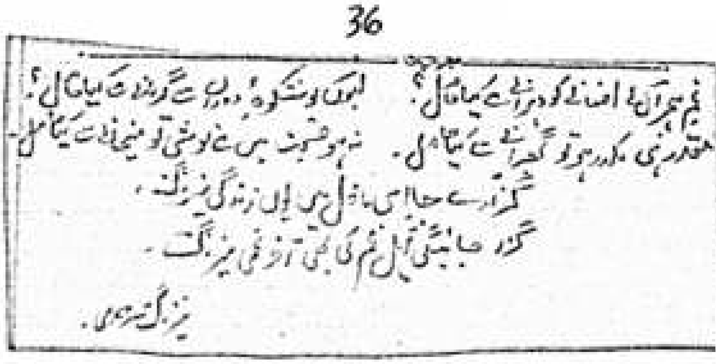

36

غم ہجر آپ کا [illegible] دوزخ سے کیا کم ہے؟ لیکن وہ شکوہ [illegible] سے گریز [illegible] ہے؟

مقدر ہی مکدر ہو تو [illegible] سے کیا حاصل۔ نہ ہو قسمت میں خوشی تو [illegible] سے کیا حاصل

گزارے جا اسی ماحول میں اپنی زندگی [illegible]۔

گزرے جا [illegible] اہل غم کی بھی آخر گزری [illegible]۔

[illegible]۔

(36)

ग़मे हिजराँ के अफ़्साने को दोहराने से क्या हासिल?
लबों को शिकवा-ए-दौराँ से गरदाने से क्या हासिल?
मुक़द्दर ही मुकद्दर हो तो घबराने से क्या हासिल
न हो क़िस्मत में मय-नोशी तो मय-ख़ाने से क्या हासिल
गुज़ारे जा इसी माहौल में यूँ ज़िंदगी 'नैरंग'
गुज़र जाएगी अहल-ए-ग़म की भी आख़िर ग़मी 'नैरंग'

--*

जदूल : मन्ज़ूम कलाम

उन्वान	तादाद	ज़बान	हैय्यत	तादाद शे'र	मुलहिज़ात
मुनाजात	1	उर्दू	मुसद्दस	34	
मसनवी (सावित्री)	1	उर्दू	मसनवी	98	
ग़ज़लें	155	उर्दू	ग़ज़ल	1360	
नज़्में	74	उर्दू	ग़ज़लनुमा	961	
		उर्दू	मसुद्दस		
		उर्दू	मुख़म्मस		
		उर्दू	तरकीब-ओ-तरजीह बंद		
क़तआत	178	उर्दू	क़तआ	356	
रुबाइयात	27	उर्दू	रुबाई	54	
तराजिम	10	उर्दू	मुतफ़र्रिक़ हैय्यत में	137	
सेहरे	13	उर्दू	ग़ज़लनुमा	109	
फ़ारसी ग़ज़ल	5	फ़ारसी	ग़ज़ल	40	
फ़ारसी क़तआत	4	फ़ारसी	क़तआ	6	
फ़र्दियात	2	उर्दू		2	

तादाद कुल मन्ज़ूमात = 468
तादाद कुल मन्ज़ूमात उर्दू = 460
तादाद कुल मन्ज़ूमात फ़ारसी = 8
तादाद कुल अशआर उर्दू = 3211
तादाद कुल अशआर फ़ारसी = 46
कुल्लियात = 3257

अफ़साने : मकान, डाकख़ाना, कांटा, ड्रामा : दीवान सावनमल का दरबार

मुख़्तसर हालात-ए-ज़िंदगी

मेरी पैदाईश 6 फ़रवरी 1912 ईसवी ज़िला डेरा इस्माईल ख़ान (शुमाल मग़रिबी सरहदी सूबा) के एक छोटे से क़स्बे मंधरा में हुई। मेरे आबा-ओ-अज्दाद के पास कुछ ज़मीन थी जिसकी पैदावार पर गुज़र-ए-औक़ात करते और ख़ुश रहा करते थे। मेरे जद्द-ए-अमजद म्युनिसिपल कमेटी डेरा इस्माईल ख़ान में दारोग़ा चुंगी थे। मैं घर में सबसे बड़ा लड़का था। इसलिए वो मुझे बेहद प्यार करते और हमेशा अपने पास रखते और मैं भी उनके पास रहकर बहुत ख़ुश था।

सात साल की उम्र में, मैं वहाँ के मुक़ामी प्राइमरी स्कूल में दाख़िल किया गया। इब्तिदा में स्कूल जाने से डरता था। मगर जूं जूं दिन गुज़रते गए, मेरी पढ़ाई की जानिब रग़बत बढ़ती गई। दस बरस की उम्र में चौथी जमाअत पास करने के बाद मैं वहाँ के गर्वन्मेंट हाई स्कूल में दाख़िल किया गया। 1928 ईसवी में मिडल का इम्तिहान पास किया। अभी मैं नवीं जमाअत में ही था कि मेरे जद्द-ए-अमजद का इंतिक़ाल हो गया। उनकी मौत का मुझे बेजा रंज हुआ। और मैं उदास रहने लगा।

उस ज़माने में फ़ारसी और उर्दू के उस्ताद जनाब क़िब्ला मौलाना अताउल्लाह ख़ान साहब एक निहायत पाकीज़ा सीरत, ख़ुश अख़्लाक़ और ख़ुदा तरस शख़्स थे। मेरी साफ़ कापी और ख़ुश्ख़ती को देखकर बहुत मुतास्सिर होते। और तमाम तुलेबा को दिखाते। मैं इसपर फूला न समाता। और इससे भी ज़्यादा हवाशी के कापी को मज़य्यन करता और क़िब्ला मौलाना मौसूफ़ की ख़ुश्नूदी हासिल

करता। मेरा अक्सर वक़्त इस कापी की नुमाईश में सर्फ़ होता। मेरी नक़्शा-कशी की कापी भी दीदा-ए-ज़ैब होती। उर्दू, फ़ारसी और अंग्रेज़ी में मेरी गहरी दिलचस्पी थी। रियाज़ी में अलजब्रा के साथ मेरा दिली लगाव था तारीख़-ओ-जुग़राफ़िया में भी मुझे ख़ूब लुत्फ़ आता।

1931 ईसवी में मैट्रिक का इम्तिहान पास किया। अब ज़ैर-ए-ग़ौर मामला यह था कि आगे क्या किया जाए। मैं घर से बाहर कभी न गया था। मेरे लिसानी शौक़ को देखकर मेरे फ़ारसी के मोअल्लिम ने मेरे वालिद-ए-बुज़ुर्गवार को मश्वरा दिया कि मुझे लाहौर में ओरियंटल कॉलेज में उलूम-ए-मशरिक़ी हासिल करने के लिए दाख़िल करा दिया जाए। मगर मेरे वालिद साहब को मेरा घर से बाहर भेजना गवारा न था। आख़िरकार बहुत सोच विचार के बाद मुझे लाहौर भेजने पर रज़ामंद हो गए। और मैं ओरियंटल कॉलेज में दाख़िल हो गया। वहाँ मौलाना शादाँ बिलग्रामी, आक़ा बेदार बख़्त और हज़रत मुहम्मद शफ़ी साहब के तुफ़ैल मुझे दाख़िल होने में बहुत मुसर्रत हुई। लेकिन घर की याद बहुत तंग करती और मैं अक्सर उदास रहने लगा। कुछ अरसा के बाद मैं बीमार हो गया और अपनी बीमारी की इत्तिला अपने वालिद बुज़ुर्गवार को दी, हुक्म हुआ कि फ़ौरन कॉलेज छोड़कर चले आओ।

मैं भी यही चाहता था। ख़त मिलते ही कॉलेज को ख़ैरबाद कहा। और सीधा घर की जानिब रवाना हुआ। और घर पहुँचकर एक वकील के यहाँ मुंशी हो गया और बाक़ी औक़ात में दो तीन शरफ़ाअ के बच्चे पढ़ाकर आमदनी में इज़ाफ़ा करने लगा। सब घर के लोग मुझसे बहुत ख़ुश थे मगर मैं ख़ुश नहीं था। क्योंकि मुझे यह काम पसंद नहीं था।

मैंने यह काम छोड़ दिया और घर से 12 मील के फ़ासले पर एक गाँव के मिडल स्कूल में मुदर्रिस हो गया। और वहाँ तक़रीबन तीन साल काम किया। 1937 ईसवी में अदीब आलिम और मुशी

आलिम के इम्तिहानात प्राइवेट पास किये। अब मेरा हौसला बढ़ गया और अगले साल अदीब फ़ाज़िल पास कर लिया। मैं गाँव की ज़िंदगी को पसंद नहीं करता था। इसलिए डेरा इस्माईल ख़ान में ख़ालसा हाई स्कूल जो नया नया खुला था उसमें उर्दू फ़ारसी पढ़ाने पर मामूर हुआ। कुछ अर्सा वहाँ काम किया। इसके बाद 1938 ईसवी में ख़ालसा हाई स्कूल पेशावर में तैनात किया गया। यहाँ मैं फ़ारसी और उर्दू का हेड परशियन टीचर था। यह स्कूल निहायत शानदार और तालीम और खेल के लिहाज़ से सफ़े अव्वल के मकातिब में शुमार होता था। वहाँ का अमला जो 24 असातीज़ा पर मुश्तमिल था। तमाम का तमाम पुराना और तजुर्बोकार था।

1941 ईसवी के आग़ाज़ में मेरी शादी एक अच्छे घराने में हो गई, हम दोनों मियाँ बीवी पेशावर में एक अच्छे से मकान में रहने लगे। दिन ख़ुशी से गुज़रते गए। तन्ख़्वाह उस ज़माने के लिहाज़ से माक़ूल थी और साथ ही दो तीन प्राइवेट टयुशन पढ़ाकर अच्छा गुज़ारा करने लगे। यूँ तो हमें कोई तकलीफ़ न थी मगर पूरे छः साल गुज़रने पर भी औलाद न हुई। तो दिल में कुछ मायूसी हुई। 1947 में मैंने नज़ाअ हमल किया।

1947 ईसवी में क़याम-ए-पाकिस्तान के बाद हम दोनों मियाँ बीवी ब-ज़रिया हवाई जहाज़ हिंदुस्तान के दार-उल-ख़िलाफ़ा देहली में वारिद हुए, अदम वाक़फ़ियत और मुहाजिर की हैसियत से बिरला मंदिर में चंद रोज़ बसर किये। मेरी नौकरी रेवाड़ी (गुड़गांव) में अहीर हाई स्कूल में बतौर परशियन टीचर हो गई थी। और उसका तक़र्रुर-नामा मेरे पास मौजूद था। मैं सीधा रेवाड़ी पहुँचा। और अपने ख़ैर ख़ैरियत से आने की इत्तिला वहाँ के हेड-मास्टर जनाब डी डी कटारिया को दी। कटारिया साहब मेरे हम-वतन थे और मुझे पहले से जानते थे और रेवाड़ी में कुछ अर्सा से अहीर हाई स्कूल में हेड-मास्टर थे, मैं उनके साथ काम करके ख़ुशी महसूस करने लगा।

चंद रोज़ के बाद पाकिस्तान से मुहाजिरीन की आमद की वजह से तमाम मदारिस कैंपों में मुन्तक़िल होगए और ग़ैर-मुअय्यना अरसा के लिए बंद कर दिये गए। मजलिस इंताज़िमया ने उन असातीज़ा को जो बैरुनजात से यहाँ आकर मुक़ीम हुए थे, उन सबकी नौकरी यक क़लम मन्सूख़ कर दी। उनमें, मैं भी एक था। दूसरे उस्तादों की तरह मैं भी रेवाड़ी छोड़कर बाहर जाने को तैयार हो रहा था कि अचानक मेरी मुलाक़ात लाला गोवर्धन दास साहब हेड-मास्टर हिन्दू हाई स्कूल से हो गई। रस्मी बातचीत के दौरान में, मैंने उनसे अपनी फ़राग़त का इज़हार किया। उन्होंने कमाल हमदर्दी से अपने स्कूल में जगह देने का वादा किया। अगरचे उनका मक्तब भी एक कैंप था मगर उन्होंने इसकी चंदान परवाह न की। यकुम जनवरी 1948 ईसवी से मैं उनके स्कूल में बतौर परशियन टीचर मुकर्रर हो गया और कहीं दूसरी जगह जाने का ख़्याल तर्क कर दिया। और मुहल्ला क़ाज़ीवाड़ा में एक छोटे से मकान में जो हम दोनों मियाँ बीवी के लिए काफ़ी था। हम रिहाईश पज़ीर हो गए, यहाँ क़ादिर-ए-मुतलक़ ख़ुदा-ए-तबारक तआला की इनायात-ए-पैग़ामात से मेरे बड़े लड़के राजकुमार (ख़ान) की पैदाईश हुई। 18 जून 1948 ईसवी हमारे लिए मुबारक रोज़ था। नख़्ल उम्मीद बारवर हुआ। हम अपनी ख़ुश-क़िस्मती पर नाज़ाँ हुए और नव-वारद बच्चे की परवरिश और तरबियत में हमातन मश्ग़ूल हो गए।

आज 20 बरस गुज़रने पर भी मैं उसी स्कूल में काम कर रहा हूँ। इब्तिदा में फ़ारसी और उर्दू की तालीम पर मामूर था। कुछ अर्सा के बाद सिर्फ़ उर्दू रह गई। और अब 1954 ईसवी से पंजाबी ब-हरुफ़ गुर-मुखी पढ़ाने की ख़िदमत मेरे ज़िम्मे सुपुर्द है। मुझे इंक़लाब-ए-ज़माना से बहुत रंज पहुँचा। और रह रहकर अपनी बद-क़िस्मती पर अफ़सोस करने लगा और सोचने लगा कि जिसने अपनी उम्र का बेशतर हिस्सा ख़िदमत-ए-ज़ुबान में बसर कर दिया और अब उसके हाथ से वो

ज़ुबान छिन गई उसके लिए क्या दिलचस्पी रह सकती है। चार-ओ-नचार पंजाबी लिखना शुरु कर दी और मुख़्तसर सी तैयारी के बाद विद्वान (हाई प्रनेशनी पंजाबी) का इम्तिहान दिया। जिसको पास करने के बाद पंजाबी पढ़ाने का हक़ बख़्शा गया। इस तरह ज़िंदगी बसर होने लगी। ब-क़ौलः

खुद नचे, पर कुछ नचाए या नचाए बंदर
रोटी तो कमा खाए किसी तौर पर मच्छंदर

कुछ अपनी क़नाअत पसंदी और कुछ जनाब हेड-मास्टर लाला गोवर्धन दास साहब की ख़ुश अख़्लाक़ी और क़द्र-दानी ने मुझे यहाँ रहने पर मजबूर किया। और किसी और जगह जाना मुनासिब न समझा। हालाँकि इस दौरान में दो तीन ऐसे मवाक़िअ आऐ कि अगर मैं चाहता तो दूसरी जगह जा सकता था।

अर्सा 20 साल में ख़ुदा-ए-तआला ने अपने रहम-ओ-करम से मुझे दीगर बच्चे मरहमत फ़रमाए। घर में ख़ूब रौनक़ है। बच्चे मुख़्तलिफ़ जमाअतों में ज़ेर-ए-तालीम हैं और मकान जिसमें, मैं ग़रीब-उल-वतन के ज़माने में आकर मुक़ीम हुआ ख़रीद लिया है। और ख़ुदा की अमानत हमें हासिल हो गई।

आक़बत की ख़ाबर ख़ुदा जाने
अब तो आराम से गुज़रती है

'नैरंग' सरहदी
रेवाड़ी
2 मार्च 1967 ईसवी

मेरी शाइरी

मेरी शाइरी की इब्तिदा जब मैं नवीं जमाअत में पढ़ता था। मेरे करम फ़रमा मौलाना अता उल्लाह ख़ान साहब की ज़ेर-ए-निगरानी हुई। वो ख़ुद एक बहुत बड़े आलिम और आला पाए के अदीब और शाइर थे। मुझे भी शेर लिखने का शौक़ हुआ मगर मैंने इसका ज़िक्र उनसे उस वक़्त किया जब वो तब्दील होकर मरदान जाने लगे। सबसे पहली नज़्म मैंने उनकी अल-विदाई तक़रीब पर पढ़ी जिसको मेरे दोस्तों और मेरे बुर्जुग मुदर्रसीन ने पसंद फ़रमाया। मौलाना मौसूफ़ ने वो नज़्म मेरे हाथ से ले ली। और मुझे अपने घर मिलने के लिए कहा। मैं दूसरे रोज़ अलस्सबाह उनके दौलत-कदा पर हाज़िर हुआ। वो नमाज़ पढ़ने से फ़ारिग़ होकर आए और मेरे सामने मेरी नज़्म की इस्लाह देनी शुरु कर दी। मैंने देखा कि वो नज़्म बेश्तर जगहों में साकित और ग़लत थी। अक्सर शेर वज़न से ख़ारिज-ओ-नाक़िस तराकीब से ममलू थे। ताहम उन्होंने मुझे मेरी इस पहली कोशिश की दाद दी और फ़रमाया कि ''कोशिश जारी रखिए। आप में शाइरी की सलाहियत साफ़ नज़र आ रही है और वक़तन-फ़वक़तन मुझे मरदान ब-ग़र्ज़-ए-इस्लाह इरसाल कीजिए।'' मैं बहुत ख़ुश हुआ। और उनका शुक्रिया अदा किया।

सिलसिला तिलमज़ काफ़ी अर्सा तक रहा। उस ज़माने में जनाब मुंशी तिलोक चंद साहब मेहरूम से मुलाक़ात हुई जो डेरा इस्माईल ख़ान में एक मुक़ामी स्कूल में नायब मुदर्रिस होकर तशरीफ़ लाए थे। उनकी ख़िदमत में रुजुअ किया। उन्होने ने भी मेरी हौसला

अफ़ज़ाई फ़रमाई। और चंद सादा बातें जो बुनियाद-ए-शाइरी के लिए ज़रुरी थीं मेरे ज़ेहन नशीन कराईं और मुझे ब-क़ायदा लिखने के लिए हिदायत फ़रमाई। मैंने उनकी नसाइह पर अमल किया थोड़े से अर्से में मेरे पास काफ़ी ज़ख़ीरा जमा हो गया।

पेशावर पहुँचकर मैंने ब-क़ायदा ग़ज़ल, क़तअ, रुबाई, मुख़मस, मुसद्दस वग़ैरह इस्नाफ़-ए-सुख़न में तबअ आज़माई की। मेरी ख़ुश-क़िस्मती से जनाब फ़ैज़ अहमद ख़ान साहब 'फ़ैज़' से मुझे मुलाक़ात का मौक़ा नसीब हुआ। आंहज़रत सुर्ख़-पोश लीडर ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ान के पैरो थे। पश्तो, फ़ारसी और उर्दू में उनका कलाम बहुत बुलंद पाया है। मैंने अपना कलाम उनको दिखाया। वो मेरी ज़ुबान-दानी को देख मुतजस्सिस हुए और मामूली इस्लाह के बाद मेरा कलाम वापिस देकर फ़रमाया कि "आप का कलाम किसी इस्लाह का मोहताज नहीं, बेखटके लिखा कीजिए।" मैं उनकी इजाज़त से कभी कभी अपने कलाम का कुछ हिस्सा जहाँ शक होता दिखाता। और इस्लाह क़ुबूल करता। इस वक़्त साहब मौसूफ़ हयात हैं ख़ुदा उनकी उम्र दराज़ करे।

चूंकि हम सबके ताल्लुक़ात सूबा सरहद के सुर्ख़-पोश लीडर रहनुमा-ए-आज़म मुहिब्बे वतन ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ान साहब से बराहे रास्त रहे हैं। इसलिए वहाँ के तमाम शुअरा और उदबा अपने नाम के साथ सरहदी लिखना और इस निस्बत से ख़ान कहलाना बाइस-ए-फ़ख़्र समझते हैं।

उर्दू सभा पेशावर सदर में बहुत मुद्दत से क़ायम हो चुकी थी। जिसके सदर-ए-आला जनाब अब्दुर्रब ख़ान साहब 'नश्तर' थे। मुझे इसमें शरीक होने के काफ़ी मवाक़ेअ नसीब हुए। मज्लिस मज़्कूर में जनाब अब्दुर्रब ख़ाँ साहब 'नश्तर', जनाब 'शौकत' वासअई, जनाब मौलाना 'क़ाइम', जनाब अब्दुर्रहमान साहब 'हाफ़िज़', जनाब चन्नी लाल साहब 'काविश', जनाब राम लाल साहब 'उफ़ुक़' जैसे शुअरा

का मजमाअ-ए-आम था। हर इतवार की शाम को उर्दू सभा के दफ़्तर में मज्लिस होती जिसमें नज़्में, अफ़्साने, कहानियाँ वग़ैरह पढ़ी जातीं और उन पर खुली तन्क़ीद होती। इस तरह हर एक के तख़्लीक़ के मआईब-ओ-मुहासिन मन्ज़र-ए-आम पर आते। इससे कलाम और अदब में तरक़्क़ी होती। हर एक अदीब और शाइर अपनी जाइज़ इस्लाह और तन्क़ीद को ब-खुशी क़ुबूल करता।

ख़ालसा हाई स्कूल पेशावर में मेरे दर्स-ओ-तदरीस के ज़माने में मेरे काफ़ी शागिर्द पैदा हो चुके थे। वो कलाम लिखते और मैं उनकी इस्लाह करता। जिनमें जनाब मसऊद 'अनवर' शफ़ीक़, जनाब मिर्ज़ा 'अहक़र', जनाब हयात बुख़ारी, जनाब काले ख़ान 'ऐश', जनाब बिहारी लाल साहब 'शोहरत' जैसे शागिर्दों को मैं अब तक फ़रामोश न कर सका। अब वो ख़ुद बहुत बड़े उस्ताद कहलाते हैं और आला ओहदों पर मुमताज़ हैं। ख़ुदा उन सब को सलामत और ख़ुश रखे।

रेवाड़ी पहुँचकर मुझे वो माहौल नज़र न आया जो मेरी तबियत के लिए ज़रुरी था। तबियत की रवानी रुक गई और कुछ अर्सा यह सिलसिला मुन्क़तअ रहा। अलबत्ता स्कूल में होने वाली तक़ारीब के लिए कुछ न कुछ लिखता, जो तुलैबा और अमला में पढ़कर सुनाता। लेकिन मेरे शौक़ के लिए इस क़द्र काफ़ी न था। इसलिए तस्कीन-ए-ज़ौक़ में कुछ मायूसी हुई।

1954 ईसवी में भीमसेन साहब 'सहर' वज़ीर-ए-आला पंजाब रेवाड़ी तशरीफ़ लाए। उनकी आमद में एक मन्ज़ूम अर्ज़े दाश्त पढ़ी। उस मज्माअ-ए-आम में जनाब डाक्टर शामदास साहब 'अख़्तर' मौजूद थे। मेरे पास घर तशरीफ़ लाए। मेरी नज़्म की बहुत तारीफ़ की, अस्ना-ए-गुफ़्तुगू में हमने फ़ैसला किया कि यहाँ के चंद लोगों को जो थोड़ी बहुत ज़ौक़ इल्मी रखते हों तलाश किया जाए और उनके मशवरे से एक ऐसी मज्लिस क़ाइम की जाएगी जो तरवीज उलूम-ओ-फ़नून का इंतज़ाम करे। इस ख़्याल में, मैं जनाब डाक्टर विद्यासागर साहब

'क़मर' देहलवी की ख़िदमत में हाज़िर हुआ। और उनसे मंशा-ए-दिली का इज़हार किया। उन्होंने ब-ख़ुशी क़ुबूल किया। और 13 अक्टूबर 1953 ईसवी को बज़्म-अदब का क़याम अमल में आया। जिसके अरकान जनाब 'क़मर' देहलवी, जनाब शामदास साहब 'अख़्तर', जनाब रघुवीर साहब, जनाब राधेश्याम साहब 'आरिफ़', जनाब लेखराज 'बेताब', और नाचीज़ राक़िम थे।

जनाब डाक्टर विद्यासागर साहब 'क़मर' बज़्म-ए-अदब सदर और राक़िम नाज़िम मुन्तख़िब हुए और उस रात बज़्म-ए-मज़्कूर का सबसे पहला मुशाइरा टाउन हॉल में हुआ।

बज़्म-ए-अदब के ज़ेर-ए-अहतमाम रेवाड़ी में काफ़ी मुशायरे हुए। बेरुनजात से शुअरा को बुलाया गया। कई बार जनाब ख़ान 'ग़ाज़ी' काबुली, 'पुकान' देहलवी, 'सुमन' सरहदी देहलवी और 'बेताब' अंबालवी, 'तमन्ना' अंबालवी और कंवल साहब अंबाला से तशरीफ़ लाए।

बज़्म की ख़ुश-क़िस्मती से जनाब कुंवर महेन्द्र सिंह साहब बेदी 'सहर' डिप्टी कमिश्नर गुड़गांव से यहाँ तशरीफ़ लाए। उनकी सदारत में कई मुशाइरे रेवाड़ी में हुए। जनाब पहलाद राय साहब सब-जज रेवाड़ी ने भी काफ़ी दिलचस्पी ली। अक्सर मुशाइरे टाउन हॉल में कुछ अहीर कॉलेज में हुए।

टाउन हॉल के अज़ीम तरीन मुशाइरों में अस्हाब-ए-ज़ौक़ ने दिलचस्पी ली। उनमें जनाब गोवर्धनदास साहब 'रफ़ीक़' ने निहायत गर्म-जोशी और सर-गर्मी दिखाई और उनकी मसाई जमीला से तमाम मुशाइरे निहायत कामयाब हुए। मज़्कूरा मुशाइरों में जनाब कन्हैया लाल साहब पोसवाल, जनाब विधाव राम साहब प्रिंसिपल जनाब आई बी साहब वर्मा प्रिंसिपल भी शिरकत फ़रमामे रहे हैं।

अब न वो ज़माने रहे, न वो लोग और न वो शौक़। ज़ुबान की जानिब लोगों का यह ज़ौक़ कम होता गया आख़िर ख़त्म हो गया।

अलबत्ता अपना ज़ाती शौक़ पूरा करने के लिए कहीं न कहीं मुन्अक़िद मज्लिस मुशाइरा होती रहती है। ब-क़ौल 'फ़िराक़':

जहाँ दो चार याारान-ए-तरीक़त बैठ जाते हैं
हर ऐसी अंजुमन को अंजुमन कहना ही पड़ता है

किसी मुक़्तदिर अदीब का कहना है कि जिस कलाम से साहिब-ए-कलाम की ज़िंदगी पर रौशनी नहीं पड़ती उसे कलाम-ए-मुफ़ीद कहना दुरुस्त नहीं बल्कि उसकी शाइरी एक हाय हू का मुरक़्क़ा बनकर रह जाती है। और उससे शाइरी के दिली जज़्बात का अंदाज़ा नहीं हो सकता।

मेरी शाइरी मेरी ज़िंदगी का आईना है, जो कुछ कहता हूँ, ज़िंदगी के वाक़िआत की झलक इससे साफ़ नुमायाँ होती है, मैं जबान को हाथ से कभी नहीं जाने देता। क़दमा और मुतअख़्ख़िरीन के बुलंद पाया कलाम का मुक़ल्लिद हूँ। दिल्ली, मेरठ, पटियाला, जालंधर, हिसार, अंबाला, होशियरपुर, चंडीगढ़, महेन्द्रगढ़, गुड़गांव इज़्लाअ के बेश्तर मुशाइरों में शिरकत करता रहता हूँ। जहाँ भी जाता हूँ, ख़ूब दाद मिलती है। अहल-ए-क़लम की दाद से मुझे एक गोना मुसर्रत और दिल को राहत नसीब होती है।

मेरी शाइरी अवामी शाइरी नहीं, बल्कि उन लोगों के लिए है, जिन्होंने जुबान को बा-क़ायदा पढ़ा और उससे इस्तिफ़ादा किया है। यही वजह है कि अहल-ए-जुबान, उदबा और शुअरा से कलाम की ख़ूब दाद मिलती है और ग़ैर अहल-ए-जुबान अवाम मुझे मुश्किल गो शायर जानते हैं। मगर मैं ख़िदमत-ए-जुबान के सहीह मायने को ख़ूब जानता हूँ और अपनी हक़ीक़ी क़द्र-दानी के लिए शाइरों, अदीबों और अस्हाब-ए-फ़हम हज़रात का मरहून-ए-अहसान हूँ जिनकी सोहबतों से मेरी शाइरी को रंग-ए-बक़ाए हासिल है।

'नैरंग' सरहदी
रेवाड़ी

2 मार्च 1967 ईसवी

महसूसात और क़यासात

आजकल उर्दू शाइरों का रुजहान-ए-तबाअ और सेल जज़्बात रूमान-पर्वर नज़र आता है। कहीं कहीं हालात-ए-हाज़िरा के पेश-ए-नज़र हुब्बुल वतनी की झलक भी नुमायाँ हैं मसनवियों और क़साइद का फ़क़दान है अलबत्ता क़तआत तन्ज़िया और इस्लाही की बहुतात है। शायद इसलिए कि दीगर अस्नाफ़-ए-सुख़न में तबअ-ए-आज़माई के लिए काफ़ी वक़्त दरकार है, और मौजूद क़लीलुल-वक़्ती शाइर की दूसरे लोगों की तरह मसरुफ़ियात में सदे-राह है।

पेश-ए-नज़र "तामीर यास" में मेरी शाइरी हुब्बुल वतनी, तग़ज़्ज़ुल, क़तआत, दर्द-ओ-यास की मज़हर है। इसकी वजह-ए-ख़ास है कि तंग-दस्त लोगों की मजबूरियों को देखकर मेरा दिल बे-इख़्तियार भर आता है। किसी यतीम के हाल को जानकर मेरा दिल रोता है। किसी की कस मपुर्सी मुझसे देखी नहीं जाती। अहल-ए-ज़माना की सितम ज़रीफ़ी दिल में ख़लिश पैदा करती है। अहल-ए-ज़र का बे-ज़रों से सलूक-ए-नारवा मुझे पसंद नहीं। बद-क़िस्मती से आजकल हमदर्दी और इंसानियत कहीं नहीं देखने में आती है। अख़्लाक़-ए-इंसानी रोज़-ब-रोज़ कमज़ोर होता जा रहा है। तहज़ीब के उसूलों की कारफ़रमाई बहुत कम रह गई है। माद्दा परस्ती का दौर-दौरा है मेहनत-कश लोग परेशान और आराम पसंद ख़ुश-हाल और फ़ारिग़-उल-बाल नज़र आते हैं। यह पस्ती-ओ-बुलंदी और ग़ैर मैयारी दर्जात इंसानी तबाअई को नगवार मालूम होती है। मैं ख़ुद भी अर्सा-ए-दराज़ से तंग-दस्ती की हालत में ज़िंदगी बसर करता चला आ रहा हूँ। इसलिए मुझे इन लोगों की तकलीफ़ात का पूरा पूरा अहसास है।

ज़ाहिर है कि शाइर जो कुछ क़लम-बंद करता है, वो तख़्लीक़

उसके दिली जज़्बात की आईना होती है। उस पर हवादिस-ए-ज़माना का असर बहुत ज़्यादा होता है। उसके दिल का ज़र्फ़ अपने आप छलक जाता है। शाइर उस वक़्त इन जज़्बात को रोकना भी चाहे तो वो रुक नहीं सकते। मेरी शाइरी भी उन्हीं जज़्बात का मुरक़्क़ा और मजमुआ है। मुनासिब मालूम होता है कि इस जगह मुख़्तसरन चंद अनावीन पर इस का इज़हार कर दिया जाए।

1. **हुब्बुल वतनी**ः- पेश-ए-नज़र ''तामीर-ए-यास'' में इस उन्वान से बेशुमार मन्ज़ूमात दर्ज हैं। यह एक वसीअ और रुह-परवर उन्वान है। कि जिस क़द्र शाइर चाहे अपने ख़्यालात का नये से नये पैराया में बयान कर सकता है। यही वजह है कि ''तामीर-ए-यास'' में इसका असर बहुत ज़्यादा है।
2. **क़साईद**ः- मुहिब्ब-ए-वतन, फ़िदा-ए-क़ौम, नेक सीरत, इंसान की तारीफ़ करने दिल-ए-शाइर को फ़रहत नसीब होती है। इसको ख़ुशामद का नाम देना मद्दाह के दिल को ठेस पहुँचाना मक़सूद है। ऐसी ही चंद मन्ज़ूमात किताब-ए-मज़्कूर में कुछ पढ़ने को मिलेंगी। वो ममदूहीन अगर उनकी मद्दह न की जाए तो उनके हक़ में वाक़ई बेइंसाफ़ी होती है।
3. **मिरासी**ः- किसी बुज़ुर्ग, मुहिब्बे क़ौम और मुहिब्बे वतन की मौत जिससे अवाम को दिली रंज होता है। शाइर भी उससे मुतास्सिर हुए बिना नहीं रह सकता। मेरी शाइरी में चंद ऐसे मरसिये मिलेंगे जो आला हस्तियों की वफ़ात पर मन्दर्जा हुए हैं।
4. **ग़ज़लियात**ः- क़दीम और जदीद रंग में ग़ज़लियात लिखने की कोशिश करता हूँ। ग़ज़लों में आम तौर पर मज़ामीन होते हैं, जो अहल-ए-ज़माना की नज़रों में पसंदीदा और मक़बूल हों।
5. **लाफ़ानी हस्तियाँ**ः- इनमें गुरु नानक, महावीर स्वामी, लाला लाजपत राय, शहीद भगत सिंह, पंडित जवाहर लाल नेहरु, लाल बहादुर शास्त्री वग़ैरह। मरदान-ए-बुज़ुर्ग और रहनुमायान-ए-क़ौम के मुताल्लिक़ इज़हार-ए-ख़्याल किया गया है।

6. **ज़वाल-ए-जुबान के सदमात** :- मेरी शाइरी का यह अंसुर किसी हद तक ज़्यादा रौशन नज़र आता है। मेरी तमाम उम्र ख़िदमत-ए-ज़ुबान में बसर हुई। मैंने ज़ुबान को ज़ुबान की ग़र्ज़ से हासिल किया। उस्तादान-ए-फ़न के ज़ैर-ए-साया परवरिश पाई, नीज़ शोरा-ए-असातिज़ा से तरबियत हासिल की। उनकी सोहबतों से इस्तिफ़ादा हासिल किया। अजीमुश्शान महाफ़िल-ओ-मजालिस में शिरकत के मवाक़िअ नसीब हुए। अहल-ए-अदब से दाद-ए-सुख़न पाई। अब ज़िंदगी ऐसे इंक्लाबात से गुज़री जिसमें तमाम लज़ाइज़ ख़त्म हो गए। इंसाफ़ फ़रमाइए कि ऐसे शख़्स के लिए जिसने अपना सरमाया-ए-हयात ही ख़िदमत-ए-ज़ुबान को समझा हो। भला वह इस ज़ुबान की अहमियत और गूनागूँ दिलचस्पियों को किस तरह फ़रामोश कर सकता है। यह वो बातें हैं जिनका ग़ैर शाइर अंदाज़ा भी नहीं कर सकता। हक़ीक़त में क़द्र-दानी जुबान एक अदीब का हिस्सा है और लुत्फ़-ए-जुबान का जानना एक शाइर के दिल का काम है:

ज़ियारत की ताज़ीम ज़ायर से पूछो
कमालात-ए-परवाज़ तायर से पूछो
अदब जान समझो अदीबों की 'नैरंग'
तो क़द्र-ए-जुबाँ एक शायर से पूछो

ख़िदमत-ए-जुबान पर शाइर का मंशा-ए-दिली होता है। जिसमें शाइर को रुहानी ग़िज़ा मयस्सर होती है यही हाल-ए-राक़िमुस-सुतूर का है। मेरे अहबाब मुझे माफ़ फ़रमायें कि जो कुछ कहता हूँ, दिली जज़्बात से मजबूर होकर। नेक नियती मेरा मसलक है। मुझे हर जुबान से उतना ही उन्स है जितना उर्दू से:

'नैरंग' किसी जुबान का शाइर हो या अदीब
है मोहतरम हर एक सुख़न-दाँ मेरे लिए

24-03-1967 'नैरंग' सरहदी (रेवाड़ी)

अर्ज़-ए-हाल

मेरी शाइरीः किसी मुक़्तदिर अदीब का कहना है कि जिस कलाम से साहिब-ए-कलाम की ज़िंदगी पर रौशनी नहीं पड़ती उसे कलाम-ए-मुफ़ीद कहना दुरुस्त नहीं, बल्कि उसकी शाइरी एक हाय हू का मुरक़्क़ा बन कर रह जाती है। और उससे शाइरी के दिली जज़्बात का अंदाज़ा नहीं हो सकता।

मेरी शाइरी मेरी ज़िंदगी का आईना है, जो कुछ कहता हूँ, ज़िंदगी के वाक़िआत की झलक इससे साफ़ नुमायाँ होती है। मैं जुबान को हाथ से कभी नहीं जाने देता। क़दमा और मुतअख़्ख़िरीन के बुलंद-पाया-ए-कलाम का मुक़ल्लद हूँ। दिल्ली, मेरठ, पटियाला, जालंधर, हिसार, अंबाला, होशियारपुर, चंडीगढ़, महेन्द्रगढ़, गुड़गांव इज़्लाअ में बेशतर मुशाइरों में शिरकत करता रहता हूँ। जहाँ भी जाता हूँ, ख़ूब दाद मिलती है। अहल-ए-क़लम की दाद से मुझे एक गोना मुसर्रत और दिल को राहत नसीब होती है।

मेरी शाइरी अवामी शाइरी नहीं, बल्कि उन लोगों के लिए है जिन्होंने जुबान को बक़ायदा पढ़ा और उससे इस्तिफ़ादा किया है। यही वजह है कि अहल-ए-जुबान, उदबा और शुअरा से कलाम की ख़ूब दाद मिलती है और ग़ैर अहल-ए-जुबान अवाम मुझे मुश्किल-गो शाइर जानते हैं। मगर मैं ख़िदमत-ए-जुबान की ही मायने को ख़ूब जानता हूँ और अपनी हक़ीक़ी क़द्र-दानी के लिए शाइरों, अदीबों और अस्हाब-ए-फ़हम हज़रात का मरहून-ए-अहसान हूँ जिनकी सोहबतों से मेरी शाइरी को रंग-ए-बक़ाए हासिल है।

'नैरंग' सरहदी

वसीयत-नामा

शाइर किसी ख़ास मज़हब का क़ाइल नहीं होता!

मेरे फ़रज़ंदान-ओ-दुख़्तरान-ओ-अहबाब-ओ-अक़ारिब!

मैं नंदलाल अल-मारुफ़ 'नैरंग' सरहदी हाल-ए-मुअल्लिम हिंदू हाई स्कूल रेवाड़ी, फ़रज़ंद चौधरी साधूराम मुक़ीम दर मुहल्ला क़ाज़ीवाड़ा मकान नंबर 5226, रेवाड़ी हूँ। मेरी तारीख़ पैदाईश अज़-रु-ए-सनददात 6 फ़रवरी 1912 ईसवी है।

मेरी उम्र 56 साल 5 महीने 8 दिन की हो चुकी है। बज़ाहिर तन्दरुस्त हूँ, होश-ओ-हवास बजा हैं। कुव्वत-ए-अक़्ल-ओ-सालिम है। कोई अलामत दीवानगी नहीं, अलबत्ता जिस्मानी तौर पर मैं अपने आपको नातवाँ और नहीफ़ समझता हूँ। इस उम्र में तक़रीबन हरकस-ओ-नाकस के साथ ऐसा ही होता है। मैं चूंकि (4 बेटों, 4 बेटियों) का बाप हूँ। लड़के ज़ेर-ए-तालीम हैं। लड़कियों में बड़ी लड़की, सिविल हस्पताल में बतौर-ए-क्लर्क मुलाज़िम है।

खुदा के फ़ज़ल-ओ-करम से बीवी तन्दरुस्त-ओ-तवाना और बा-सलीक़ा है। फ़ितरी तौर पर ख़ुदा और मौत को हर वक़्त क़रीबतर जानता हूँ। मौत एक न एक दिन सब पर नाज़िल होगी। इसके पंजे से रिहाई नामुमकिन है। क्या मालूम किस वक़्त और कहाँ नाज़िल हो जाए। मैं मौत से हरगिज़ नहीं डरता। और अपनी उम्र मुअय्यना की हद तक पहुँचने के लिए रुख़ किये हुए हूँ। दुनिया-ए-फ़ानी की कई बहारें और ख़िज़ाएं देख चुका हूँ। ज़्यादा ज़िंदा रहने की हवस बेकार समझता हूँ। मैं देखता हूँ कि मेरे गिर्द-ओ-पेश कई अश्ख़ास

तन्दरुस्त-ओ-तवाना आन-ए-वाहिद में आग़ोश-ए-मर्ग में जा लिये। क्या ख़बर मैं भी अचानक इस दुहर फ़ानी को ख़ैराबाद कह जाऊं। इससे पहले बेहतर मालूम होता है कि इस वस्त में उन बातों का सरीहन तज़्किरा करुँ जिनको दिली तमन्ना कहता हूँ और मेरे फ़रज़ंद अगर हो सके तो ख़्वाहिश-ओ-अक़ाइद मंदरजा ज़ैल बातों पर अमलसरा हो ताकि मेरी रुह को तस्कीन नसीब हो।

1. अगर मौत घर में वाक़िअ हो जाए तो बिला किसी मज़हबी रसूम के मेरे अहबाब-ओ-अक़ारिब हँसी ख़ुशी जा-ए-मुक़र्ररा पर मेरी लाश को सुपुर्द आतिश कर दें। और मेरे लिए दुआ फ़रमाएं। किसी क़िस्म का शौर-ओ-शेवन घर में न होने पाए। यह अमर-ए-रब्बी है और मैं रज़ा का क़ाइल हूँ। आह-ओ-बका को ख़िलाफ़-ए-अक़ीदा समझता हूँ।
2. मेरे बेटों में से कोई भी सिर न मुंडवाए और मेरे मर जाने का मुज़ाहिरा न करे। सादा तरीक़े से लकड़ियों में रखकर और मिलकर आग लगा दें। कोई मंत्र वग़ैरह न पढ़ा जाए।
3. अगर चौथे रोज़ हड्डियाँ (फूल) चुनने की नौबत आए तो उन हड्डियों को बजाए हरिद्वार ले जाने के किसी इत्तफ़ाक़ से दिल्ली जाकर अपनी मर्ज़ी से दरिया-ए-जमुना में इस तरह डाल दें, जैसे कोई चीज़ डाल दी जाती है। इसके बाद कोई रस्म अदा न की जाए। कई रोज़ तक जैसा कि आम रिवाज है कोई मज़हबी किताब न पढ़ी जाए क्योंकि मुझे ज़िंदगी में किसी भी मज़हब से कोई सरोकार नहीं रहा। और मैं हर मज़हब को अच्छा और ठीक समझता हूँ। शाइर किसी ख़ास मज़हब का क़ाइल नहीं होता। अच्छा अख़्लाक़ ही उसका अफ़ज़लतरीन मज़हब-ओ-मसलक होता है।
4. अगर मौत किसी हादसा या सफ़र में हो जाए तो सफ़र से मेरे मुर्दा जिस्म को रेवाड़ी में लाने की हरगिज़ ज़रुरत न

समझें बल्कि वहाँ ही इंतिज़ाम करके जला दिया जाए और कोई हादसा पेश आ जाए तो आम क़ानूनी कार्रवाई के बाद क़रीबतरीन जगह पर ही मुझे अलविदा कहकर आग के हवाले कर दें। घर में लाने की ज़रुरत न समझें।

5. मेरे मरने के बाद किसी या बाईस किसी मज़हबी आदमी के कहने सुनने से मेरे नाम खाना पहुंचाना, मेरे अक़ीदे के ख़िलाफ़ होगा (जैसे कि आम लोग करते हैं)। अगर कभी भूले से मेरी याद आ जाए तो दुआ-ए-मग़फ़िरत फ़रमाकर मुझपर अहसान करें।

'नैरंग' सरहदी

मुक़ीमः रेवाड़ी

14 जून 1968 ईसवी

नोटः- यह वसीयतनामा ''हिन्द संदेश, देहली'' में 25 मई 1974 ईसवी में शायाअ हुआ था।

हर्फ़-ए-चंद

(यह मज़मून ''तामीर-ए-यास'' के मुरत्तब ने जो हरियाणा उर्दू अकादमी से 1997 ईसवी में शायाअ हुई लिखा था)

मुझे इस बात का एतिराफ़ है कि मैं उस वक़्त तक 'नैरंग' सरहदी के नाम और कलाम से वाक़िफ़ नहीं था जब तक कि मैंने उनके मजमुआ-ए-कलाम ''तामीर-यास'' मसौदा नहीं देखा था। यह मसौदा मेरे अज़ीज़ दोस्त राजीव सक्सैना ने जो मुल्क के एक नामवर अहल-ए-क़लम हैं, मुझे इस फ़रमाईश के साथ भिजवाया कि मैं इस किताब का ताअरुफ़ या तमहीद लिक्खूं।

मसौदे को खोलते ही सबसे पहले मेरी नज़र ख़ुद मुसन्निफ़ के लिखे हुए पेश-लफ़्ज़ पर पड़ी जो उन्होंने ''अर्ज़-ए-हाल'' के उन्वान से लिखा है। इसमें वो अपनी शाइरी के मुताल्लिक़ लिखते हैं:
''मेरी शाइरी मेरी ज़िंदगी का आईना है, जो कुछ कहता हूँ, ज़िंदगी के वाक़िआत की झलक उससे साफ़ नुमायाँ होती है। मैं ज़ुबान को हाथ से कभी नहीं जाने देता। क़ुदमा और मुतअख़्ख़िरीन के बुलंद पाया-ए-कलाम का मोताक़िद हूँ।''

अपनी शाइरी के बारे में 'नैरंग' साहिब की यह राय पढ़कर मुझे दिली मुसर्रत हुई क्योंकि एक तो मैं ख़ुद अदब बराए-ए-ज़िंदगी का क़ाइल हूँ। दूसरे यह देखकर अफ़सुर्दा ख़ातिर भी हूँ कि आज के अक्सर शुअरा ज़ुबान का वो एहतराम नहीं कर रहे हैं जो ज़रुरी है। और अगर आज कोई शाइर क़ुदमा और मुतअख़्ख़िरीन के बुलंद

पाया-ए-कलाम का मोताक़िद है तो मैं उसे उर्दू शाइरी के लिए नेक फ़ाल समझता हूँ।

'नैरंग' साहिब बुनियादी तौर पर ग़ज़ल के शाइर हैं। ग़ज़ल में उन्होंने रिवायत की पाबंदी ख़ुलूस के साथ की है और उन आदाब को बरक़रार रखा है जो ग़ज़ल के लिए ज़रुरी हैं। उन ग़ज़लों से उनके इस दावे की तस्दीक़ भी होती है कि उनकी ज़िंदगी की झलक उनके अशआर में नुमायाँ है। वैसे मजमुआ-ए-कलाम के उनवान से भी उनकी उफ़ताद-ए-तबाअ और उनका कुछ न कुछ अंदाज़ा क़ारी को हो जाता है और उसकी शहादत उनकी ग़ज़लों के अशआर से भी मिलती है, मसलनः

चमन में तूने मुझ को आशियाना किस लिए बख़्शा
किसी क़ाबिल न था तो आबा-ओ-दाना किस लिए बख़्शा

◆◆◆

ज़ुबाँ बंदी का मेरे वास्ते जब हुक्म जारी था
तो फिर मुझ को मज़ाक़-ए-शाइराना किस लिए बख़्शा

यह रुजहान 'नैरंग' साहिब की शाइरी में बहुत नुमायाँ है लेकिन शाइर के दिल में वो कैफ़ियत भी पिन्हाँ है जिसे ग़ालिब ने हसरत-ए-तामीर किया है और यह कैफ़ियत जब शाइर के दिल में एक इज़्तिराब पैदा करती है तो इस तरह के अशआर उसकी ज़ुबान पर आते हैं

कसरत-ए-ग़म ही से मिलती है मुसर्रत की नवेद
ज़ुल्मत-ए-शब से अयाँ नूर-ए-सहर आज भी है

◆◆◆

अपनी नाकामी पे मायूस नहीं हूँ 'नैरंग'
ख़ाना-ए-दिल में उम्मीदों का गुज़र आज भी है

उर्दू शाइरों की वाइज़ के साथ कभी नहीं निभी। शुअरा ने वाइज़ पर या तो तंज़ किया है या उसे उस के मसलक के ख़िलाफ़

मश्विरे दिए हैं। इस ज़मन में 'नैरंग' साहिब का एक शेर देखिए और उनके वसी-उल-मशरबी की दाद दीजिएः

नहीं मौकूफ़ कुछ देरा-ओ-हरम पर हज़रत-ए-वाइज़
जहाँ झुक जाए सर सज्दे में उस को आस्ताँ कहिए

ग़ज़ल तो 'नैरंग' साहिब का पसंदीदा पैराया-ए-इज़हार है ही लेकिन उनके जौहर नज़्म में भी खुलते हैं और वो जो उन्होंने किताब के पेश-लफ़्ज़ में लिखा हैः "मैं जुबान को हाथ से कभी नहीं जाने देता" तो इस से सिर्फ़ यही मुराद नहीं है कि वो सहीह और अच्छी उर्दू में इज़हार-ए-बयान को पसंद करते हैं, बल्कि उनके कलाम के मुतालआ से यह भी मालूम होता है कि उन्हें उर्दू से इश्क़ है और आज हिंदुस्तान में उर्दू जिस कशमकश हयात-ओ-मौत से गुज़र रही है उस पर उनका दिल किस तरह कुढ़ रहा है..... ज़ैर-ए-नज़्म मजमुए की पहली नज़्म "मुनाजात-ए-शाइर" है। इस में ख़ालिक़-ए-काएनात की इनायात और अलताफ़-ए-बे-पायाँ का ज़िक्र करते हुए 'नैरंग' साहब हालात-ए-हाज़िरा का ज़िक्र भी छेड़ते हैं और इस में दिली दर्द के साथ उर्दू की मौजूदा हालत का ज़िक्र करते हुए कहते हैंः

बात करने का भुला बैठा क़रीना, या-रब
लब हिलाता हूँ तो आता है पसीना, या-रब

◆◆◆

हाय लुटता है बुजुर्गों का ख़ज़ीना, या-रब
ग़र्क़ होने को है उर्दू का सफ़ीना, या-रब

◆◆◆

नाला-ए-दर्द को कहते हैं रसा होता है
ना-ख़ुदा जिसका न हो उसका ख़ुदा होता है

मैं यह समझता हूँ कि हम हिन्दुस्तानियों के लिए उर्दू मुहब्बत हमारी हुब्बु-उल-वतनी की दलील है। 'नैरंग' साहिब के कलाम में भी उर्दू से मुहब्बत का यह जज़्बा नुमायाँ तौर पर दिखाई देता है, वैसे भी

इनका कलाम जज़्बात-ए-हुब्ब-ए-वतन से लबरेज़ है। इनकी नज़्में ब-उन्वान गुरु गोबिन्द सिंह, महात्मा गांधी, हिंदुस्ताँ हमारा, लाल बहादुर शास्त्री, क़तआत-ए-यौम-ए-आज़ादी-ओ-जमहूरियत-ए-हिन्द, दास्तान-ए-सावित्री, मिर्ज़ा ग़ालिब और तिलोक चंद मेहरूम, उन्हें उर्दू के उन शुअरा की सफ़ में ले आती हैं जिन्होंने हुब्ब-ए-वतन के मौज़ुअ पर दर्द भरे दिल से क़लम उठाया है।

इस मज्मुआ-ए-कलाम में ग़ज़लों और नज़्मों के अलावा रुबाईयात भी हैं और क़तआत भी, तज़मीन के फ़न से 'नैरंग' साहिब को दिलचस्पी है, जिसके नमूने ''तामीर-ए-यास'' में देखे जा सकते हैं।

जगन्नाथ 'आज़ाद'
जम्मू यूनिवर्सिटि, जम्मू

नरेश नारंग सलीम
(फ़रज़ंद जनाब 'नैरंग' सरहदी)

एक था शाइर : 'नैरंग' सरहदी

चेहरे पर बुड़ापे के निशान, आँखों में सूनापन और होटों पर एक मजबूर सी मुस्कराहट। यह तस्वीर है मरहूम 'नैरंग' सरहदी की। वो एक फनकार था जो फन की दहलीज़ फलांग कर पूरा इन्सान बन गया। वो एक शमा थी जो रेवाड़ी की महफील में 25 सालों तक अपना दम तोड़ती रही। वो एक शाइर था जो शाइरी के मैयार को ऊँचा उठा कर खुद गुमनाम सा इस जहान से उठ गया।

उस वक्त मैं बहुत छोटा भी नहीं था। मैं जानता था के वो एक शाइर थे। यह भी जानता था के वो तंगदस्ती के दोर से गुज़रे थे मगर मुझे यह मालुम नहीं था के वो कितने उंचे दर्ज के शाइर थे। मुझे यह भी मालुम नहीं था के उनकी तंगदस्ती उनके सारे वजूद को खाए चली जा रही थी।

आज उनके कलाम को पढ़ता हूँ तो एहसास होता है कि इनकी ज़िंदगी किस क़दर मजबूरीयों और मायूसियों से घिरी थी। यूँ तो उन्होंने अपनी सारी ज़िंदगी ही मामूली तंख्वाह पाने वाले एक मास्टर के रूप में गुज़ार दी थी मगर रिटायरमेंट से लेकर मौत के बीच दो साल का जो लम्बा सफर उन्होंने तय किया था अब उसे याद करता हूँ तो काँप उठता हूँ।

एक शाइर की हैसियत से भी उन्होंने अगर नाम कर लिया होता तो शायद वो अपनी तंगदस्ती को भूल गए होते। लेकिन वो वक्त कि तेज़ रफ्तार के साथ चल नहीं पाए थे और इसी वजह से

बिछड़ गए। ज़िंदगी भर एक तमन्ना को दिल में पाले रहे के इनका मजमुआ छपे, मगर इस तमन्ना को दिल में लिए हुए ही इस जहाँन-ए-फानी से कूच कर गए। उन के इन्तेकाल के 12 साल के बाद उनका पहला मजमुआ कलाम ''एक था शाइर'' छप सका जो देवनागरी में था।

आज में फखर मेहसूस कर रहा हूँ के उनका एक और मजमुआ इन्हीं कि ख्वाहिश के दिली बक़ा उर्दू में शाए हो रहा है। इस के लिए मैं शुक्रगुज़ार हूँ जनाब कश्मीरी लाल ज़ाकिर साहब का जिन्होंने इस मजमुऐ को शाए करने में मदद दी। जनाब राजीव सक्सेना का भी शुक्रगुज़ार हूँ जिन्होंने उनके कलाम को प्रोफेसर जगन नाथ 'अज़ाद' साहब तक पहुँचाने में मेरी मदद की।

जनाब 'आज़ाद' साहब का तहे दिल से शुक्रिया अदा करता हूँ जिन्होंने मसरूफ होने के बावजूद इस मजमुऐ के लिए दिबाचा लिखा।

नरेश नारंग 'सलीम'

''मुनाजात-ए-शाइर'' का तज्ज़िया

नंद लाल 'नैरंग' ने मुसद्दस की शक्ल में आठ बंद की मुनाजात लिखी जो उर्दू की मुनाजातों की सफ़-ए-अव्वल में शुमार की जा सकती है। यहाँ बंदे और रब का रिश्ता, दुनिया-ए-दनी का क़िस्सा, अदबी, समाजी, सक़ाफ़ती, इल्मी और सियासी मसायल का नोहा बड़े ही पुर-असर लहजे में सुनाकर शाइर ने अपनी पुर-दर्द ज़िंदगी का शुक्र अदा करके ख़ुद को बंदगी की आला हस्तियों में शामिल किया है। जिससे 'नैरंग' की अज्ज़-ओ-इंकसारी, सब्र-ओ-तहम्मुल, बुर्दबारी और आला ज़र्फ़ी ज़ाहिर होती है। इस मुनाजात की जबान और उसका बयान क्लासिक उर्दू मुनाजात का रंग लिए हुए है। 'नैरंग' ने तक़रीबन तमामतर इस्लामी तिलाज़मात और मुनाजाती पैराए में दिल की गहराईयों से जो अशआर लिखे हैं, वो परवरदिगार की बारगाह में जज़्बात की शिद्दत, अहसास की कुव्वत के साथ सदाक़त और हक़ीक़त से हमकिनार हैं। चुनांचे अक़ाईद में फ़र्क़ होते हुए भी अक़ीदत में फ़र्क़ नज़र नहीं आता यानि कसरत में वहदत की जलवा नुमाई होती है। शायद यह भक्ति का असर और उस फ़ारसी उस्ताद को मौलाना रौम की रौशनी का फ़ैज़ हो जहाँ पर मौलाना रौम ने फ़रमाया है कि ''तू जो कुछ भी है मेरे पास आ जा, तू अगर गबर, बुत-परस्त या आतिश परस्त भी है तो मेरे पास आ जा। यह दरगाह ना-उम्मीदी की दरगाह नहीं है अगर तूने सौ मर्तबा भी तौबा करके तोड़ी है तो फिर भी इस दरगाह-ए-ख़ुदावंदी में तेरी जगह ख़ाली है।

बाज़ आ बाज़ आ आंचा हर हस्ती बाज़ आ
तू गबर, आतिश परस्त-ओ-बुत परस्ती बाज़ आ

ऐन दरगाह-ए-मा दरगाह-ए-नामिद नीस्त
सद बार गर तोबा शिकस्ति बाज़ आ

'नैरंग' की मुनाजात में ख़ालिक़-ए-कायनात की हम्द, अज़्मत, वहदत के ज़िक्र के साथ उसकी सिफ़ात और मख़्लूक़ात और कायनात पर उसका इख़्तियार और इक़्तिदार का ज़िक्र है। मुनाजात के मतलाअ के बंद में बहर की नग़मगी और रदीफ़ की मिल्कियत जो क़वाफ़ी पर ज़ाहिर हो रही है मुलाहिज़ा कीजिएः

दर्द मन्दों की दवा और शिफा के मालिक
ख़ालिक-ए-हर दो जहाँ, अर्ज़-ओ-समा के मालिक
साहिब-ए-फिक्र-ओ-ग़ना, शाह-ओ-गदा के मालिक
वाक़िफ़-ए-राज़-ए-फ़ना, दार-ए-बक़ा के मालिक
हैं गुल-ओ-ख़ार तेरे सर-ओ-सम्न तेरे हैं
ख़ुश्क-ओ-तर तेरे हैं, सहरा-ओ-चमन तेरे हैं

मुनाजात के पहले चार मिसरे सिवाए लफ़्ज़ 'के' सब फ़ारसी हैं, लेकिन इस सलासत और शगुफ़तगी के साथ मिसरों में पिरोए गए हैं कि उसको समझने में दुश्वारी नहीं। 'नैरंग' ज़ुबान-ओ-बयान पर क़ुदरत रखते हैं इस लिए तराकीब में ऐसे अल्फ़ाज़ लाते हैं कि मिसरों में जान पड़ जाती है। वाक़िफ़ राज़ फ़ना, दार बक़ा, फ़क्र-ओ-ग़ना, अर्ज़-ओ-समा, दवा और शिफ़ा, सर्व-ओ-सुमन इसके गवाह हैं। पूरे बंद में सनअत-ए-तज़ाद यानि दो मताज़ाद अल्फ़ाज़ की जलवागरी है जैसे अर्ज़-ओ-समा, फ़क्र-ओ-ग़ना, शाह-ओ-गदा, फ़ना-ओ-बक़ा, गुल-ओ-ख़ार, ख़ुश्क-ओ-तर और सहरा-ओ-चमन वग़ैरह वग़ैरह।

शाइर ने पहले ही बंद में परवरदिगार की सारी कायनात पर माल्कियत का ऐलान कर दिया। शुक्र गुज़ारी जो सबसे बड़ी इबादत है उसमें अपने फ़न की रंगीनी बिखरी, यहाँ तल्मीज़ उर्र रहमान अपने उस्ताद अज़ली से इस नेमत का ज़िक्र कर रहा है जिसके बारे मशहूर है।

ईं सआदत बज़ोर बाजू नीस्त
ता न बख़्शद ख़ुदाए बख़्शंदा

'नैरंग' कहते हैं

तूने बख़्शे अदबी ज़ौक़ के सामाँ मुझको
यूँ, कि सेहरा नज़र आते हैं गुलिस्ताँ मुझको

◆◆◆

कभी आग़ोश में लेते हैं बयाबाँ मुझको
तेरी रहमत ने बनाया है सख़ुन्दाँ मुझका

◆◆◆

बाग़-ए-जन्नत जिसे कहते हैं दिखाया मुझ को
मसनद-ए-शाह-ए-नशीं पर भी बिठाया मुझ को

◆◆◆

मेरी परवाज़-ए-तख़य्युल को जो रिफअ बख़्शी
तो फरिश्तों से ज़्यादा मुझे वुकअत बख़्शी

'मीर' अनीस ने बजा कहा था :

किसी की एक तरह से बसर हुई न अनीस
उरुज-ए-महर भी देखा तो दोपहर देखा

पेशावर के क़याम और जवानी के ज़माने में 'नैरंग' बहुत खुश और शाद फ़िक्र थे लेकिन फिर गर्दिश-ए-अयाम में हिजरत कर के वतन से दूर रहने का अहसास उन्हें उम्र भर रहा। सच है उनको मुहाजिर होने की वजह से बेज़री और मुफ़लिसी से बढ़कर उस नये माहौल की नाक़द्री का गिला था। मीर अनीस ने कहा था :

ना-क़द्री-ए-आलम की शिकायत नहीं मौला

'नैरंग' कहते हैं:

बे-ज़री की नहीं लेकिन ये शिकायत मौला
है ये नाकद्री-ए-आलम की हिकायत मौला

'नैरंग' ने जगह जगह पर अवाम की नाक़द्री और न-फ़हमी का

बड़े दर्द से ज़िक्र किया है। शाइर को जिस माहौल और महफ़िल की ज़रुरत होती है वो उन्हें मयस्सर न हुई। यही नहीं बल्कि न-मसाइद हालात के तहत उनके हमनवा, शोअरा और उर्दू अदीबों को भी यह आज़ादी मयस्सर न हुई। यहाँ किस क़द्र दर्द से अपने दिल की कैफ़ियत और उर्दू से हमदर्दी का इज़हार किया है।

हाय ये गर्दिश-ए-अय्याम ख़ुदावंदे करीम
रोज़-ए-रौशन में सियाह शाम ख़ुदावंदे करीम

◆◆◆

जो हुनर-मंद हैं रू-पोश हुए जाते हैं
साहिब-ए-इल्म भी ख़ामोश हुए जाते हैं

◆◆◆

हाय लुटता है बुज़ुर्गों का ख़ज़ीना या रब
ग़र्क़ होने को है उर्दू का सफ़ीना या रब

'नैरंग' उर्दू और फ़ारसी के शाइर तो थे लेकिन वो उर्दू को उसका जायज़ मुक़ाम दिलाने के लिए हमेशा दामे, दरमे क़दमे कोशां थे। 'नैरंग' न सिर्फ़ उर्दू की बक़ा बर्र-ए-सग़ीर के लिए ज़रुरी समझते थे बल्कि वो उर्दू तहज़ीब के क़द्रदाँ और तब्लीग़ रसाँ भी थे। इसलिए उन्होंने उस मुश्किल वक़्त में भी हिम्मत और उम्मीद न हारी बल्कि ख़ुदा की रहमत पर भरोसा करके यक़ीन से दुआ की जिसमें यह बताया कि उर्दू, उर्दू वालों से नहीं बल्कि उर्दू से उर्दूदाँ और उर्दू तहज़ीब ज़िंदा है। कहते हैं कि बात जो दिल से निकलती है असर रखती है।

यहाँ 'नैरंग' की दिल की पुकार की गूंज पर हम भी आमीन का नारा बुलंद करते हैं।

'नैरंग' के कलाम में अस्ताज़ा के कलाम का असर जगह जगह पर मिलता है। ग़ालिब के शे'र का सोज़-ओ-गुदाज़ मुलाहिज़ा होः

नाला-ए-दर्द को कहते हैं रसा होता है
नाख़ुदा जिसका न हो उसका ख़ुदा होता है

ख़ूबसूरत तराकीब, मायनीख़ेज़ मतालिब, रोज़मर्रा और मुहावरों की रंगीनी शाइर के चेहरे को गुलिस्तां और दिल को चिराग़ाँ कर देती है :

अपनी रहमत से मुझे फिर गुल-ए-ख़ंदाँ कर दे
रुख़े-पझ़ेमुर्दा को तू रश्क-ए-बहाराँ कर दे

और इसी तरह :

कल्ब-ए-तारीक में फिर मेरे चराग़ाँ कर दे

हम इस मुनाजाती मज़मून को 'नैरंग' के दुआइया मिसरे पर तमाम करते हैं :

मेरे नग़मात से गूँज उठे फज़ा-ए-आलम

आज 'नैरंग' का मजमुआ कलाम ''तामीर-ए-बक़ा' इसी ख़्वाब की ताबीर बनकर उर्दू दुनिया में ख़ुश्बू की तरह फैल रहा है।

‘नैरंग’ सरहदी की नाअत निगारी

नंद लाल ‘नैरंग’ का पूरा कलाम दस्तयाब नहीं, ख़ुसूसी तौर पर वो कलाम जो उनका इब्तिदाई दौर का पुरजोश कलाम था। आवारगी, ख़ानाबदोशी और मुहाजिरत की मुश्किलात से हम सब वाक़िफ़ हैं। ‘नैरंग’ की ग़ैर मतबुआ बयाज़ों में हमें एक आठ शे’र की नाअत जो उन्होंने इंतक़ाल से तीन चार साल क़ब्ल जनाब आरिफ़ अली सज्जादा नशीन हज़रत निज़ामुद्दीन औलिया रह॰ देहली की फ़रमाइश पर लिखी थी। उस नाअत के अलावा उनके कलाम में तीन नाअतिया मिसरे और मुन्क़बती क़ता-ए-रसूल सल्ल॰ के नवासे इमाम हुसैन अलैहिस्सलाम की शान में मिलते हैं। अगरचे नंद लाल ‘नैरंग’ पैदाईशी हिंदू थे लेकिन वो हर मज़हब और धर्म को इज़्ज़त और अक़ीदत की नज़र से देखते थे। नाअत हदीस-ए-दिल है जिसको वही शख़्स लिख सकता है जिसका दिल इश्क़-ए-मुहम्मद सल्ल॰ से सरशार हो, इस आठ शेर की मुर्रदिफ़ नाअत जिसकी रदीफ़ ‘‘मदीना’’ है, ‘नैरंग’ का ख़ुलूस और जज़्बा हर मिसरो का उन्वान और इंसानी क़द्र का मज़्मून होकर अल्फ़ाज़ से नूर बिखर रहा है। इसलिए तो ‘नैरंग’ ने कहा हैः

यह जोश-ए-मुहब्बत है कि इख़्लास का जज़्बा
हर बात बनी जाती है उन्वान-ए-मदीना

उस जोश-ए-इख़्लास और मुहब्ब्त में शहर-ए-मदीना को जो हुज़ूर सल्ल॰ से निस्बत हासिल है। शाइर ने उसे ज़मीन से उठाकर फ़लकबोस कर दिया है। सुल्तान मदीना से फ़ैज़ान-ए-मदीना, दबिस्तान-ए-मदीना से अहसान-ए-मदीना, गुलिस्तान-ए-मदीना से शान-ए-मदीना और शाइर का अरमान-ए-मदीना से उसकी जान-ए-मदीना

तक का इश्क़िया सौदा नाअत का हासिल मालूम होता है।
नाअत का मतला देखिए:

क्योंकर न करूँ मिदहत-ए-सुल्तान-ए-मदीना
जब पेश-ए-नज़र हूँ मेरे फ़ैज़ान-ए-मदीना

तमाम ग़ैर मुस्लिम नाअत गो शाइरों ने हज़रत मुहम्मद सल्ल॰ की मिदहत सराई इसलिए भी की कि वो बेहतरीन इंसान थे। उनके अख़्लाक़ लोगों की मुहब्बत और दिलजोई से मुनव्वर थे। हुज़ूर सल्ल॰ का फ़ैज़ आम था इसीलिए आपको रहमतुल लिल आलमीन कहा गया, क्योंकि आप सल्ल॰ के अख़्लाक़-ओ-किरदार आदात-ओ-अतवार बहुत अज़ीम थे। इसीलिए क़ुरआन ने भी आप सल्ल॰ पर ख़ल्क़-ए-अज़ीम की सनद सब्त की। यह हुज़ूर अकरम सल्ल॰ के वजूद का सदक़ा था कि बेनाम-ओ-निशान सहरा जो जाहिल क़बीलों से भरा पड़ा था। तहज़ीब का मरकज़ और गहवारा बन गया। जहाँ दुनिया से लोग आकर उलूम हासिल करने लगे। इसीलिए 'नैरंग' ने उस मदीने की ख़ाक को अपनी जान से ताबीर किया है।

तहज़ीब का गेहवारा, दबिस्तान-ए-मदीना
यह ख़ाक-ए-अरब है वो मेरी जान-ए-मदीना

दुनिया में नफ़रत और क़त्ल-ओ-ग़ारतगरी का दौर हमेशा रहा है। तारीख़ के सफ़हात ख़ून से रंगीन हैं ऐसी दुनिया में ख़ुसूसी तौर पर अरब के क़बाईल एक दूसरे के ख़ून के प्यासे थे उनमें मुहब्बत-ओ-मुरव्वत और इख़ूवत का नाम न था। उस ख़ून रेज़ सहरा को हुज़ूर सल्ल॰ ने मुहब्बत, मसावात, तालीम-ओ-तरबियत और अख़्लाक़ साज़ी से गुलिस्तान बना दिया जिसका रंग और जिसकी ख़ुशबू आज दुनिया में हर मुक़ाम पर महसूस की जाती है।

ख़ुश्बु-ए-मुहब्बत से मुअत्तर है ज़माना
किस शान से महका है गुलिस्तान-ए-मदीना

'नैरंग' की शाइरी इसलिए भी दिल में उतर जाती है इसमें

मिल्टन की कही हुई तीनों क़द्रें यानि सलासत, सदाक़त और जोश सब मौजूद रहती हैं। यहाँ ख़्याल दिल से निकल कर दिलों पर गिरता है। 'नैरंग' के मिसरों में रोज़मर्रा की चाशनी, शगुफ़तगी और ताज़गी पढ़ने और सुनने वाले के कान और दहान में रस घोलने लगती है जो शीरीं बयानी की शनाख़्त है। 'नैरंग' अगरचे फ़ारसी के उस्ताद और फ़ारसी के शाइर भी हैं लेकिन वो अपनी उर्दू शेअरियात में नरम आसान ज़ूद फ़हम तराकीब बरतते हैं।

इस नाअत के तमाम क़ाफ़िये रदीफ़ ''मदीना'' के साथ मायनी आफ़रीनी के हासिल हैं। यह क़ाफ़िये इस तरह तज़ईन किये गए हैं कि रदीफ़-ओ-क़ाफ़िये एक दूसरे में शीर-ओ-शक्कर का शरबत बन गए हैं जो शाइर की क़ादिर उल कलामी और कुहना मश्क़ी की सनद भी है। शाइर ने किस ख़ूबसूरती से हुज़ूर अकरम सल्ल॰ की कायनात पर रहमत और गर्दिश लैल-ओ-नहार पर उनकी हुकूमत और मख़्लूक़ात पर उनकी हिकमत का सादे अल्फ़ाज़ में ज़िक्र किया है। हम जानते हैं 'नैरंग' भगती के उलूम से वाक़िफ़ थे। कहते हैंः

क्यों साया-ए-इफ़लाक में ख़दशा हो किसी से
होगा वही होगा जो है फ़रमान-ए-मदीना

यानि जब तक साहिब-ए-मदीना और उनका फ़रमान जारी है आसमान के नीचे कोई पत्ता उनकी इजाज़त के बग़ैर नहीं हिलेगा। दूसरे मिसरे में ''होगा'' की तकरार ने मिसरे में ग़िनायत के साथ एक तस्कीनबख़्श लहजा भी दिया।

'नैरंग' जानते हैं कि दुनिया में कई ऐसे मौअतबर मुतबर्रक मुमताज़ और मक़बूल मुक़ामात हैं जिनसे तजल्ली और रौशनी की लहरें फैलती रहती हैं मगर उन सबका ज़िक्र और बयान मदीने की शान पैदा नहीं कर सकता। इसीलिए 'नैरंग' का दिल उनके सीने में मदीने के अरमान में तड़पता है जिसके सामने दुनिया की हर चीज़ बे-वक़अत और हीच हो जाती है।

कुछ और मुक़ामात भी हैं अरफ़ा-ओ-आला
उन सबसे ज़्यादा है मगर शान-ए-मदीना

◆◆◆

है हीच हर इक चीज़ जहाँ की मेरे आगे
सीने में तड़पता रहे अरमान-ए-मदीना

इस नाअत के मक़्ते में 'नैरंग' अपने साथ हर वो शख़्स जो ईमान यानि सच्चाई और इरफ़ान के साथ है उसको शामिल करके कहते हैं कि हम सब हुज़ूर सल्ल॰ के अहसानमंद हैं:

'नैरंग' ही नहीं ज़ेर-ए-गर अंबारी-ए-अहसाँ
हर साहिब-ए-ईमाँ पे है अहसान-ए-मदीना

अफ़सोस इस बात का है कि यह नाअत तीन अगस्त 1970 ईंसवी को पढ़ी गई लेकिन कहीं महफ़ूज़ न हुई। इस नाअत को नाअतिया अदब में इसलिए भी शामिल करना ज़रुरी है कि एक ग़ैर मुस्लिम की नाअत का अंदाज़, लहजा, मौजुअ और जज़्बाती कैफ़ियत जो बाज़ मुस्लिम नाअत निगारों से भी आला है।

इस नाअत के साथ हम तीन अलेहदा मिसरे जो उनके कलाम में दस्तयाब हुए और जो इसी नाअत की क़वाफ़ी पर हैं यहाँ हम इसलिए भी पेश कर रहे हैं कि 'नैरंग' इसी रुख़ पर रौशनी डाल रहे हैं कि हुज़ूर अकरम सल्ल॰ की तालीमात, शादाब और गुलिस्तान पुर-बहार की तरह हैं, आपका मख़्लूक़ पर इतना करम और अहसान है इसका भुलाना आसान नहीं।

शादाब किस क़द्र है गुलिस्ताँ रसूल (स॰) का
है सारी कायनात पे एहसाँ रसूल (स॰) का
कैसे भुला सके कोई फ़ैज़ाँ रसूल (स॰) का

आशिक़-ए-उर्दू
शाइर-ए-शीरीन बयान 'नैरंग'

नंद लाल 'नैरंग' उर्दू जबान के आशिक़ थे। उर्दू उनकी माशूक़ा थी। 'नैरंग' अगरचे उर्दू फ़ारसी के शाइर होने के अलावा अफ़्साना नवीस, मुतर्जिम और डरामा-निगार भी थे लेकिन वो दर-हक़ीक़त उर्दू शेर-ओ-अदब के सच्चे ख़िदमत गुज़ार थे। उर्दू की मुहब्बत उनकी घुट्टी में पली थी और इसी उर्दू तहज़ीब के दिलदादा भी थे। उर्दू फ़ारसी के मुअल्लिम और मोहसिन भी थे। वो कई तख़्लीक़ी और तामीरी क़द्रों के मालिक थे। जैसा कि हमने ईशारा किया है कि वो बयक वक़्त उर्दू फ़ारसी के उम्दा शाइर, उर्दू फ़ारसी के मंझे हुए मुअल्लिम, अफ़साना नवीस, मुतर्जिम, ड्रामा निगार और दिलसोज़ समाजी कारकुन थे। मुहाजिरत की मुश्किलात, तंगदस्ती, वतन से दूरी, न-क़द्री वग़ैरह के मसाईल से दोचार शख़्स को कहाँ इतनी फ़ुरसत होती है कि वो जबान और शाइरी की ख़िदमत कर सके लेकिन नंद लाल 'नैरंग' को उर्दू की मुहब्बत जुनून की हद तक थी। जिसका मुशाहिदा अमलन सबूत उनकी ज़िंदगी जो घर के अंदर और मदरसे और घर की बाहर की मुहाफ़िल से आशकार था। 'नैरंग' अपने तमाम बेटे बेटियों को सही उर्दू बोलने की हमेशा ताकीद करते थे वो इस ज़मन में किसी रवादारी के क़ायल न थे। चुनांचे उनके मंझले बेटे नरेश के मुताबिक़ 'नैरंग' ने अपने बड़े बेटे राजकुमार ख़ान से पूरे एक साल तक इसलिए गुफ़्तगू न की कि वो उर्दू के तलफ़्फ़ुज़ को अहमियत नहीं दे रहे थे। यही नहीं बल्कि इस मोहसिन-ए-उर्दू ने उर्दू

तालीम को अवाम में आम करने के लिए जो तलबा उनके घर टयुशन के लिए आते थे उनसे अंग्रेज़ी टयुशन के तलबा के मुक़ाबिल निस्फ़ फ़ीस लेते थे। 'नैरंग' उर्दू तहज़ीब में रची बसी ऐसी शख़्सियत थी उनका लिबास और रहन सहन किसी ब-वक़ार उर्दू शाइर की तरह काली शेरवानी में मलबूस, शेनिल की टोपी सजाए कशमीरी छड़ी हाथ में रखे नज़र आते थे। उर्दू के इस आशिक़ के घर में आवेज़ाँ मिर्ज़ा ग़ालिब की बड़ी सी तस्वीर थी। वो ग़ालिब के उर्दू फ़ारसी कलाम का हमेशा मुताला करते रहते और घर पर साल में कम अज़ कम दो बार बज़्म-ए-अदब का मुशाइरा मुनअक़िद किया।

'नैरंग' को उूर्द जबान पर नाज़ था वो उर्दू की फ़साहत और बलाग़त से बहुत मुतास्सिर थे। ख़ुद कहते हैं

किससे पोशिदा है उर्दू की फ़साहत 'नैरंग'
यह जबाँ वो है कि हूँ जिस पे नाज़ाँ अब तक

उर्दू का शाइर ही उर्दू की रंगीनी उर्दू की चाशनी, उर्दू की दिलबरी और उर्दू की अहमियत-ओ-अज़्मत से वाक़िफ़ हो सकता है। इसी लिए तो 'नैरंग' ने कहा है

ज़ियारत की ताज़ीम ज़ाएर से पूछो
कमालात-ए-परवाज़ ताइर से पूछो
अदब जान समझो अदीबों की 'नैरंग'
तो क़द्र-ए-जुबाँ एक शाइर से पूछो

फिर पूछते हैं:

कोई पूछे ज़रा इन अहल-ए-नज़र से 'नैरंग'
कि जुबानों में हसीं उर्दू जुबाँ है कि नहीं

इसी लिए वो उर्दू की नग़मासराई करते हैं:

कमाल-ए-सुख़न हर जबाँ में है 'नैरंग'
मगर लुत्फ-ए-उर्दू जबाँ और भी है

'नैरंग' हर अदब के शाइरों और अदीबों का एहतराम करते हैं।

उन्हें इसी तरह किसी मज़हब और फ़िरके से ताल्लुक़ नहीं जैसा कि इक़रार भी किया है

कुछ ताल्लुक़ नहीं 'नैरंग' को किसी फ़िरके से
वो तो बेचारे सुख़नदान नज़र आते हैं

यह शे'र देखिएः

हर जुबाँ एक सी है मेरी नज़र में 'नैरंग'
फ़र्क़ कुछ हिन्दी-ओ-उर्दू की सुख़नदाँ में नहीं

ग़ालिब के आशिक़ और उनके साहिराना शाइरी के परस्तार ग़ालिब के दौर की उर्दू और 'नैरंग' के ज़माने की उर्दू से मुक़ाबला करके कहते हैं।

हर सू है ज़िकर-ए-'ग़ालिब'-ए-शीरीं मक़ाल का
चर्चा है उस के शे'र-ए-अदीम-उल-मिसाल का
'नैरंग' वो था औज-ए-ज़बान-ओ-अदब का दौर
ये दौर है ज़बान-ओ-अदब के ज़वाल का

'नैरंग' अगरचे हज़रत-ए-ग़ालिब के माअनवी शागिर्द थे लेकिन हक़ीक़ी शार्गिदी उन्होंने जिन शोअरा कि इसका ज़िक्र हमने सवानेह में किया है मगर इस फ़ेहरिस्त में महरुम और फ़ैज़ सर-फ़ेहरिस्त हैं। 'नैरंग' ने इन तमाम शोअरा से फ़न सीखा लेकिन किसी के मुक़ल्लिद न रहे।

क्यों न ऐ 'नैरंग' मैं ख़ुद ख़ादिमुश-शुअरा कहूँ
इनसे ही तो मैं शनासा-ए-जुबाँ होता गया

या कभी इस तरह अपने दिल को बहला लेते हैं।

दिल-बस्तगी-ए-आम की परवाह नहीं 'नैरंग'
बहलाने को दिल जब मेरे अश्आर बहुत हैं

तख़्लीक़ ही जबान के इरतक़ा को जारी रखती है। तख़्लीक़कार उर्दू का मोहसिन और मसीहा है। 'नैरंग' ने मुश्किलात और मसरुफ़ ज़िंदगी में भी शाइरी से ताल्लुक़ तर्क नहीं किया।

लिखे जाते हैं मजबूरी में चन्द अशआर ऐ 'नैरंग'
इसे अहद-ए-रवाँ में ख़िदमत-ए-उर्दू ज़बाँ कहिए

हम इस तहरीर में 'नैरंग' के अशआर से ही उनकी उर्दू ख़िदमत और मौजूदा हालात के तहत उनके ख़्यालात को पेश कर रहे हैं। वो उर्दू की हालत तक़सीम हिन्द के बाद बड़े ग़ौर-ओ-ख़ोज़ से देख रहे थे, क्योंकि मुशाइरों, महफ़िलों में उनकी आमद-ओ-रफ़्त मदरसों में उनकी तालीम और समाज में उर्दू से बे-ताल्लुक़ी नहीं बल्कि मुआनदाना रवैये से उन्हें तश्वीश लाहक़ थी क्योंकि वो उर्दू को हिंदुस्तान के माथे का टीका तसव्वुर करते थे। रशीद अहमद सिद्दीक़ी ने कहा कि मुग़लिया दौर ने हिंदुस्तान को ताज महल, उर्दू जबान और मिर्ज़ा ग़ालिब दिये चुनांचे इसीलिए 'नैरंग' कहते हैं

ज़यादा इससे तौहीन-ए-अदब क्या होगी ऐ 'नैरंग'
बुज़ुर्गों की ज़बाँ को भी ज़बाँ हम कह नहीं सकते

लेकिन फिर दिलासा भी देते हैंः

ना-क़दरी-ए-आलम के डर से मायूस न हो ऐ मीरी ज़बाँ
कुछ चाहने वाले तेरे भी इस दौर में पाये जाते हैं

और इसकी परवाह भी नहींः

हमें पूछे भला 'नैरंग' कोई क्यों ज़माने में
हमारी क़द्र-दानी तो फ़क़त उर्दू ज़ुबाँ तक है

'नैरंग' न सिर्फ़ उर्दू के एक उम्दा शीरीन बयान शाइर हैं बल्कि वो एक मुजाहिद-ए-उर्दू भी हैं, और हर तरह और हर तरीक़े से उर्दू की हिफ़ाज़त करना चाहते हैं। मशहूर है जो बात दिल से निकलती है असर रखती है। 'नैरंग' जबान की ज़बूं हाली पर आह फ़ुग़ाँ बुलंद करते हैं।

ज़ैल के तीन क़तओं में किस ख़ूबसूरती से उनके दौर के उर्दू हालात को क़लमबंद किया है। मुलाहिज़ा कीजिए। कहीं दिल से निकली फ़ुग़ाँ है तो कहीं अवाम और ख़्वास से सवाल है 'नैरंग' मायूस

नहीं बल्कि

इलाही दास्तान-ए-दिल बयाँ मुश्किल से होती है
यह वो आलम है जब हम से फुग़ाँ मुश्किल से होती है
अब ऐसे दौर में दाख़िल हुई है ज़िंदगी 'नैरंग'
कि जिस में ख़िदमत-ए-उर्दू ज़ुबाँ मुश्किल से होती है

◆◆◆

मकाँ लुटते तो देखे हैं ज़बाँ लुटती भी देखी है
किसी आशिक़ का दिल, नाज़ुक सी जाँ लुटती भी देखी है
ख़ुदा के वास्ते इतना तो बोले देखने वाले
कहीं पर आज तक तूने ज़ुबाँ लुटती देखी है?

◆◆◆

गुलज़ार-ए-अदब की यह ख़िज़ाँ है 'नैरंग'
या साज़-ए-शिकस्ता की फुग़ाँ है 'नैरंग'
अब आरज़ू-ए-लुत्फ़-ए-तग़ज़्ज़ुल है अबस
यह मरसिया-ए-उर्दू ज़ुबाँ है 'नैरंग'

'नैरंग' उर्दू के कभी मरसिया ख़्वां हैं कभी जज़ख़्वां हैं बाज़ औक़ात वो तश्वीश के आलम में यूँ भी रुदाद-ए-दिल लिख देते हैं।

दामन-ए-उर्दू ज़ुबाँ जब हाथ से जाता रहा
हज़रत-ए-'नैरंग' फिर ज़ौक़-ए-ज़ुबाँ ख़्वानी कहाँ

इस तहरीर में हम जो अश्आर पेश कर रहे हैं उनका तज्ज़िया उन पर फ़न्नी तब्सरा इसलिए भी पेश नहीं कर रहे हैं कि एक मुख़्तसर मज़मून में इसकी गुंजाईश नहीं अलबत्ता 'नैरंग' की उर्दू मुहब्बत, उर्दू सदाक़त और पुर-आशोब माहौल में क़ौल-ओ-क़लम से इसकी हिफ़ाज़त में बिखरे हुए, शेरों को चंद सफ़हात में सजा रहे हैं ताकि एक सरसरी नज़र में उर्दू बारगाह के क़दीम ख़िदमत गुज़ार से मिसरों में गुफ़्तगू हो जाए।

दामन-ए-उर्दू जुबाँ जब हाथ से जाता रहा
हज़रत-ए-'नैरंग' फिर ज़ौक़-ए-जुबाँ ख़्वानी कहाँ

◆◆◆

वही काशाना-ए-उर्दू है मगर अब उस में
शमा जलती है न परवाना नज़र आता है

शाइरी का लुत्फ़ उसके सुनाने और सुनने से है। क़द्रदानी दाद-ओ-दहश से है लेकिन तक़सम-ए-हिन्द के फ़ौरी बाद न-मुवाफ़िक़ हालात ने कुछ ऐसा माहौल बनाया कि 'नैरंग' को कहना पड़ा।

लुत्फ़ सुनने में कहाँ और सुनाने में कहाँ
दाद देने में कहाँ, दाद के पाने में कहाँ
दिल-ए-बेताब की बातें हैं ये वर्ना 'नैरंग'
क़द्र-दानी-ए-सुख़न आज ज़माने में कहाँ

'नैरंग' को वो अदबी महफ़िल-ओ-मजालिस और वो मुशाइरे याद थे जो ख़ुसूसी तौर पर जिस मुक़ाम पर वो रह रहे थे मौजूद न थे और जिसका अफ़सोस वो करते रहे और जो दिल पर गुज़रती थी रक़म करते थे।

जो होती कद्र-ए-मता-ए-हुनर तो ऐ 'नैरंग'
ये आरज़ू थी कि कुछ ख़िदमत-ए-ज़बाँ करते

हम जानते हैं कि 'नैरंग' की शाइरी टकसाल बाहर न थी उनका हुस्ने बयान शेर में लुत्फ़-ए-शेर बढ़ा देता है और वो इसी पर नाज़ाँ हैं और इन गुज़री मुहाफ़िल का ज़िक्र छेड़ देते हैं।

शे'र के वास्ते है हुस्न-ए-बयाँ भी 'नैरंग'
शे'र कहना हो तो कहिए न ज़बाँ से बाहर

◆◆◆

सुना करते थे 'नैरंग' जिसके हम अशआर के चर्चे
यहाँ उस शाइर-ए-जादू रक़म को देखने आए

लेकिन उन्हें मालूम है कि अब शाइरी में शहपारे जो क़दीम

शोअरा की एजाज़ बयानियों से वजूद में आए वो मुश्किल से तख़्लीक़ होंगे। यही नहीं बल्कि उस तरह के शेर फ़हम सुनने और समझने वाले भी बहुत नायाब हो जाएंगे।

चर्चा यूँ ही रहेगा अदब के बयान में
अफ़सोस फिर न आएँगे वो शाइरी के दिन

यह जो कुछ अफ़र्सुदगी का लहजा 'नैरंग' की शाइरी में मिलता है उसकी ख़ास वजह वो ख़ास वक़्त भी है जब तक़सीम-ए-हिन्द के बाद उर्दू को सिर्फ़ मुसलमानों की जबान बताकर उर्दू को मुसलमान बनाने की कोशिश जारी थी और ''दोनों तरफ़ थी आग बराबर लगी हुई'' जबकि यह नादान दोस्तों और दाना दुश्मनों की साज़िश थी। उर्दू से कोई हिन्दी को बैर न था। यह दोनों बहनें प्राकृत और भाषा की बेटियाँ हैं चुनांचे एक को मिटाना दूसरी की बुनियाद को गिराना था। नंदलाल 'नैरंग' इसका मुशाहिदा और इस साज़िश का मुक़ाबला कर रहे थे। यहाँ जहाँ उनके लहजे में दबदबा था वहीं पर आगाही भी पेवस्त थी। यहाँ वो बा-बांग-ए-धूल यह ऐलान कर रहे थे कि दोनों फ़रीक़ों से नुक़सान पहुँच रहा है।

मता-ए-उर्दू को यारों ने हमसे छीन लिया
उनहें इसी ही में शयद ख़ुशी नज़र आई

◆◆◆

ख़ास निस्बत थी मुझे उर्दू ज़ुबाँ से लेकिन
आज अग़यार के इल्ज़ाम से डर लगत है

◆◆◆

है अगर अब भी कहीं कुछ भी वजूद उर्दू
चश्म-ए-आअदा में वो इक ख़ार नहीं तो क्या है

◆◆◆

ब-जुज़ अफ़सोस कुछ हासिल न होगा उनको ऐ 'नैरंग'
जो कहते हैं यहाँ उर्दू ज़बाँ बाक़ी न रह जाये

और यही हालत देखकर वो भी अंजुमन की तरह चश्म-ए-नम हो जाते थे।

बेचारगी-ए-उर्दू ज़ुबाँ देख के 'नैरंग'
हर बज़्म-ए-अदब दीदा-ए-तर हो ही रही है

'नैरंग' को उर्दू के मुस्तक़बिल की तश्वीश इसलिए भी थी कि उर्दू इनकी जान आन बान और पहचान थी। जिस पर उनको कामिल ईमान था और वो उसका अपमान नहीं देख सकते थे। उन्होंने सारी उम्र उर्दू गुलशन की आबयारी में सर्फ़ कर दी और इसी शाइरी से अमर रहना चाहते थे। यहाँ उन्होंने इस्तआरों में अपनी दुआ भी लिख दी थी।

इलाही मुझको वो हासिल कराम हो जाए
चहार सिम्त ज़माने में नाम हो जाए
वो ज़र्फ़ जिसको उठाऊं मैं हज़रत 'नैरंग'
शराब-ए-नाब से लबरेज़ जाम हो जाए

इस लिए तो 'नैरंग' ने कहा था

'नैरंग'! शाइरी था मेरा मक़सद-ए-हयात
मालूम क्या हो हाल मेरा शाइरी के बाद

'नैरंग' न सिर्फ़ ख़ुद मख़दूम-ए-उर्दू थे बल्कि मोहसिन-ए-उर्दू के क़द्रदाँ भी थे। वो किसी उर्दू मोहसिन को सोने का ताज नहीं पहना सकते थे और न उनके हाथ अशर्फ़ियों की थैली थमा सकते थे, बल्कि दिल से निकले हुए क़द्रदानी के अश्आरों की ज़रनिगारी को क़रतास में लपेट के पेश कर सकते थे चंनांचे वज़ीर-ए-आला हरियाणा राव बीरेन्द्र सिंह की उर्दू नवाज़ी को देखकर कहते हैं।

छाया हुआ है अबर-ए-करम कुछ न पूछिये
सब मिट गए हैं रंज-ओ-अलम कुछ न पूछिए
उर्दू को जो मुक़ाम मिला है तेरे तुफ़ैल
कितने हैं शाद अहल-ए-क़लम कुछ न पूछिए

'नैरंग' मुस्तक़िल इरादों से अज़्म-ओ-इस्तक़लाल और पैहम कोशिश से शाइरी में मगन रहे, उर्दू शाइरी का ताज उनका फ़ख़र था।

होए चर्ख़ गरचे दरपे आज़ार-ए-जाँ होना
नहीं आया मगर अब तक मुझे महव-ए-फ़ुग़ाँ होना
समझता हूँ किधर है रग़बत अहल-ए-जहाँ 'नैरंग'
है फिर भी नाज़ मुझको शाइर-ए-उर्दू ज़ुबाँ होना

‘नैरंग’ सरहदी की शख़्सियत और फ़न का मूख़्तसर तआर्रुफ़

यह भी दिलचस्त बात है कि नंदलाल ‘नैरंग’ सरहदी ने अपने बारे में ब-हैसियत उर्दू शाइर-ओ-अदीब बहुत कुछ लिखा है। सच तो यह है कि वो उर्दू फ़ारसी के शाइर और अदीब थे अलबत्ता अंग्रेज़ी, हिन्दी और पंजाबी भी उम्दा जानते थे। चंनांचे एक टीचर की हैसियत से उन्होंने उन तमाम जबानों से राब्ता रखा हुआ था। इस तहरीर में हमारी कोशिश उर्दू पर मरकूज़ होगी और जो उन्होंने अपनी शाइरी में मुस्तनद हवाले सब्त किये उनकी रौशनी में नताइज की तलाश होगी।

नंदलाल ‘नैरंग’ अपना तआर्रुफ़ साफ़ गुफ़्तार में यूँ कराते हैं।

ग़र्क़-ए-आब-ए-शफ़ाफ़ रहता हूँ
पाक दामन हूँ साफ़ रहता हूँ
कुछ तो दुनिया ख़िलाफ़ है मेरे
कुछ मैं अपने ख़िलाफ़ रहता हूँ

इंसान की फ़िक्र और ज़िंदगानी जब शीशे की तरह साफ़ हो जब उसके दामन पर धब्बे न हों तो उसका वजूद महकम और बेबाक रहता है जिसकी वजह से वो अपना मुहासबा करने लगता है और पहले वजदान की रौशनी में अपना मुहासबा करता है। यह जुर्रत रिंदाना उसे सही रास्ते पर गामज़न रखती है। रहा सवाल दुनिया की मुख़ालफ़त का यह तो दुनिया की पुरानी रीत है कि चिराग़ के ख़िलाफ़ बाद-ए-समूम से बाद-ए-सबा तक उसे गुल करने के लिए कुल

मुख़लिफ़ कुव्वतो से इत्तिफ़ाक़ और साज़िश कर ही लेते हैं लेकिन क्यों कि ऐसे चिराग़ों में जान कूट कूट कर भरी रहती है इस लिए यह रौशन ही रहते हैं। 'नैरंग' ने अपने क़तअे में शाइर की क़द्र के बारे में दुरुस्त कहा था।

अदब जान समझो अदीबों की 'नैरंग'
तो क़द्र-ए-ज़ुबाँ एक शाइर से पूछो

हम सूख़्न फ़हम हैं और 'नैरंग' के इसलिए भी तरफ़दार हैं कि वो अपनी बात में दूसरों को भी शामिल कर लेते हैं यानि वो आप बीती को जगबीती बना लेते हैं।

फ़ारिग़ नहीं अब कोई बश्र-ए-रंजए--गिराँ से
फ़ुरसत है कहाँ उसको भला आह-ओ-फ़ुग़ाँ से
मेहमाँ की तवाज़ो' तो नहीं होती ज़ुबाँ से
जब पास न हो कुछ तो तवाज़ो हो कहाँ से

है ख़ुश्क ज़बाँ लब पे मेरे जान-ए-हज़ीं है
शाइर हूँ मगर ताक़त-ए-गुफ़्तार कहाँ है

'नैरंग' एक क़तआ में यह सवाल उठाते हैं जो उसके दौर के मुताबिक़ बिल्कुल सही सवाल था।

सोचता हूँ कि इस ज़माने में
इस ज़ुबाँ का मआल-क्या होगा
ज़िंदगी में तो मर गुज़रते हैं सब
हम अदीबों का हाल क्या होगा

क्योंकि उस दौर के माहौल को बिल्कुल बजा तौर पर देखा गया और उसके नतीजे को 'नैरंग' ने यूँ पेश किया।

अब ऐसे दौर में दाख़िल हुई है ज़िंदगी 'नैरंग'
कि जिस में ख़िदमत-ए-उर्दू जबाँ मुश्किल से होती है
कभी ब-हैसियत शाइर रंगीं नवाया गिला करते हैं।
क़द्र-दानी सुख़्न आज ज़माने में कहाँ

वो तबियत-ओ-उमंगे वो ज़माने न रहे

◆◆◆

अब आरज़ु-ए-लुत्फ़-ए-तग़ज़्ज़ुल है अबस

◆◆◆

यह दौर है जबान-ओ-अदब के ज़वाल का

◆◆◆

वो बात ही नहीं है कि महफ़िल कहें जिसे
बेहतर है मुझको दावत-ए-शेर-ओ-सुख़न न दो

जो ज़माना तक़सीम और मुहाजिरत से पहले 'नैरंग' ने देखा था उसमें शाइर का मुक़ाम बहुत बुलंद था जैसा कि ख़ुद क़तआ में कहते हैं:

किसी ज़ुबान से निकला जो नाम शाइर का
हर इक बशर ने किया अहतराम शाइर का
बुलंदियाँ तो हैं कुछ और भी ज़माने में
बहुत बुलंद है लेकिन मुक़ाम शाइर का

जब शाइरी मिदहते ख़ालिक़ और हुक़ूक़े इंसान और ख़ालिक़ की पासदार होती है तो पैयंबरी बन जाती है। जिसको 'नैरंग' के दो क़तओं में सुनियेः

तेरी कुदरत, तेरी रहमत के निसार
राज़ क्या है इसमें ऐ परवरदिगार
मुब्तिला-ए-रंज-ओ-ग़म हो दरम्यान-ए-जाहिलाँ
एक शाइर और वो भी ज़र-ए-निगार

◆◆◆

अर्श से आई निदा-ए-दिल-फ़िगार
शाइर-ए-बातिल परस्त ओ ना-बकार
मिदहत-ए-इंसाँ नहीं है शाइरी
शाइरी है मिदहत-ए-परवरदिगार

'नैरंग' कहते हैं:

मेरे नग़मात से गूंज उठे फ़िज़ा-ए-आलम''

वो अर्ज़-ए-हाल में लिखते हैं:

''मेरी शाइरी मेरी ज़िंदगी का आईना है, जो कुछ कहता हूँ, ज़िंदगी के वाक़िआत की झलक उससे साफ़ नुमांयाँ होती है। मैं जबान को हाथ से कभी नहीं जाने देता। क़दमाअ और मुताख़िरीन के बुलंद पाया-ए-कलाम का मोताक़िद हूँ।''

'नैरंग' सरहदी ने मुनाजात में मीर अनीस और मिर्ज़ा ग़ालिब के फिक़रे और मिसरे अपने कलाम में जोड़े हैं। मीर अनीस ने कहा था:

नाक़द्री-ए-आलम की शिकायत नहीं मौला
कुछ दफ़्तर बातिल की हक़ीक़त नहीं मौला
आलम है मुकद्दर कोई दिल साफ़ नहीं है
सब कुछ है इस दुनिया में बस इंसाफ़ नहीं है

'नैरंग' सरहदी कहते हैं:

बे-ज़री की नहीं लेकिन ये शिकायत मौला
है ये नाक़द्री-ए-आलम की हिकायत मौला

◆◆◆

जो हुनर-मंद हैं रू-पोश हुए जाते हैं
साहब-ए-इल्म भी ख़ामोश हुए जाते हैं

ग़ालिब के शे'र से इस्तफ़ादा देखिए:

नाला-ए-दर्द को कहते हैं रसा होता है
नाख़ुदा जिसका न हो उसका ख़ुदा होता है

मुनाजात को ख़ूबसूरत बंद पर यूँ तमाम करते हैं जिसमें दुआइया अनासिर के साथ जमालियाती रुमानी कैफ़ियात भी उभरने लगती हैं।

अपनी रहमत से मुझे फिर गुल-ए-ख़ंदाँ कर दे
फिर से जीने के मुहय्या मुझे सामाँ कर दे

'नैरंग' ने बचपन से बुढ़ापे तक शेरी रियाज़त जारी रखी, वो कभी अपने आपको शाइर-ए-दर्द-ओ-ग़म तो कभी शाइर-ए-जज़्बात और रिंद-ए-ख़राबात कहा है। 'नैरंग' की शाइरी सलीस, सादे शगुफ़ता और नरम मिसरों से रची बसी रहती है। अमूमन गुफ़तगू रोज़मर्रा, सनअत-ए-तकरार और सनअत-ए-तज़ाद से दिलकश बनाई जाती है।

ग़म में रहने में उम्र गुज़री है
दर्द सहने में उम्र गुज़री है
कुछ भी हमसे न हो सका 'नैरंग'
शे'र कहने में उम्र गुज़री है

◆◆◆

गुले बे-रंग-ओ-बू-ओ-बास हूँ मैं
ज़िंदगी से बहुत उदास हूँ मैं
मुझ से दुनिया को क्या ग़र्ज़ 'नैरंग'
शाइर-ए-दर्द-ओ-ग़म-ओ-यास हूँ मैं

◆◆◆

आने को तो तुम आ जाएं वो इक रात ज़्यादा
बढ़ जाएगी कहने से मगर बात ज़्यादा
'नैरंग' कि है इक शाइर-ए-जज़्बात ज़्यादा
सुनते हैं कि है रिंद-ए-ख़राबात ज़्यादा

◆◆◆

कुछ मय-कशो के हाल की, जाँ की भी फ़िक्र कर
रंगे बहार देख ख़िज़ाँ की भी फ़िक्र कर
'नैरंग' की बात जान-ए-बरोदर क़बूल कर
अहल-ए-ज़ुबाँ के बाद, ज़ुबाँ की भी फ़िक्र कर

‘नैरंग’ सरहदी ने एक आठ शेर की मुरद्दिफ़ ग़ज़ल में न-क़द्री-ए-आलम की साहबे-ए-आलम से शिकायत की है। यहाँ हर शेर मज़मून में जुदा होते हुए भी एक तसलसुल का हामी है। इस ग़ज़ल में शाइर ने शेअरियत की सआदत में जो ख़ुदा-ए-बख़्शिन्दा से मिलती है, उसका गिला सादे और जज़्बाती अल्फ़ाज़ में सवाल किया है कि अगर मैं क़ाबिल न था तो चमन में आशियाना, आब-ओ-दाना मिज़ाज आशिक़ाना, बुलंद परवाज़, ज़ौक़ तराना, ग़म-ओ-आलाम का दर्द, न-क़द्र ज़माना और जबांबंदी के दौर में मज़ाक़-ए-शाइराना क्यों बख़्शा था। हमें आज मालूम है कि वो इसलिए भी बख़्शा था कि ‘नैरंग’ सरहदी के इंतक़ाल के पचास बरस बाद उनका कलाम फ़ैज़े आम हो और यही ग़ज़ल दूसरे तख़्लीक़ कारों की दास्ताँ बन जाए। इस ग़ज़ल में न सिर्फ़ ‘नैरंग’ की ज़ात और उनकी बात है बल्कि उनके फ़न और क़ादिरुल कलामी की रुदाद भी शामिल है। किसी ने बहुत सच कहा किः

ग़ज़ल में ज़ात भी है और कायनात भी है
हमारी बात भी है और तुम्हारी बात भी है

◆◆◆

ग़ज़ल अरबाब-ए-फ़न की आज़माईश है

इस ग़ज़ल से हम मतला मक़ता के अलावा तीन शेर बग़ैर तशरीह के इसलिए भी पेश कर रहे हैं कि वो सलीस ख़ूबसूरत अंदाज़ में पेश हुए हैं।

मतलाः

चमन में तू ने मुझ को आशियाना किस लिए बख़्शा
किसी क़ाबिल न था तो आब-ओ-दाना किस लिए बख़्शा

◆◆◆

मुहब्बत की है मैं ने एतराफ़-ए-जुर्म करता हूँ
गुनाह था तो मिज़ाज-ए-आशिक़ाना किस लिए बख़्शा

अगर गुमनाम रहने की मुझे तलक़ीन थी यारब
मेरे इज़हार को ज़ौक़-ए-तराना किस लिए बख़्शा

◆◆◆

मेरे जज़्बात जब देते हैं पैग़ाम-ए-बक़ा सब को
मुझे ना-क़द्रदाँ तू ने ज़माना किस लिए बख़्शा

◆◆◆

ज़बाँ बंदी का मेरे वास्ते गर हुक्म था 'नैरंग'
तो फिर मुझ को मज़ाक़-ए-शाइराना किस लिए बख़्शा

‘नैरंग’ के क़तआत में समाजी क़द्रें

‘नैरंग’ सरहदी एक अच्छे शाइर के साथ अच्छे इंसान भी थे, उनकी ग़ज़लों, नज़्मों और क़तओं में समाज के मसाईल, इंसानी हुक़ूक़, ज़ात और मसावात के मतालिब जगह जगह बहुत पुर-असर तरीक़े से बयान किये गए हैं। हमारी यह तहरीर मज़मून के इख़्तिसार की वजह से सिर्फ़ क़तआत का अहाता किये हुए है। ‘नैरंग’ ख़ुद तमाम उम्र माली मुश्किलात से दो-चार रहे हैं इसलिए उनको ग़रीबों मज़दूरों और ज़हमत कशों के मसाईल समझने के लिए ज़्यादा वक़्त न लगा।

जलवा-ए-बर्क़-ए-सर तूर से वाक़िफ़ हूँ मैं
न सही तुरे मगर नूर से वाक़िफ़ हूँ मैं
मुझको मालूम है हाल-ए-ग़म मुफ़लिस ‘नैरंग’
ग़मज़दा हूँ ग़म-ए-मज़दूर से वाक़िफ़ हूँ मैं

कभी कहते हैं

बार-ए-ग़म-ए-दौराँ तो उठाते रहे ‘नैरंग’
वल्लाह गिरानी से कमर टूट गई है

◆◆◆

नहीं मरने वाला था ‘नैरंग’ किसी से
उसे मार डाला परेशानियों ने

वो मुल्क में फ़िरक़ावारियत के ख़िलाफ़ हमेशा पेश पेश रहे। बिस्मिल सईदी के शेर पर क़तआ तज़मीन करके कहते हैं

जिससे न बुझे तशनगी ऐ हज़रत-ए-‘नैरंग’
उस साग़र-ए-मय को कभी साग़र नहीं कहते

''काबा में मुसलमाँ को भी कह देते हैं काफ़िर
बुतख़ाने में काफ़िर को भी काफ़िर नहीं कहते''

ज़ैल के दो क़तआत देखिएः

वेद में ढुंठ न तू, और न क़ुरआन में देख
शक्ल-ए-अल्लाह, जो चाहे तो वो इंसान में देख
न-सहा रिंद-ए-ख़राबात की कुछ बात न कर
बढ़ कि नादान ज़रा अपने गिरेबान में देख

◆◆◆

हिन्दू नहीं समझे हैं मुसलमाँ नहीं समझे
सद हैफ़ कि वो मक़सद-ए-ईमाँ नहीं समझे
क्या अहल-ए-ज़माना से मैं वाक़िफ़ नहीं 'नैरंग'
अब तक भी जो इंसान को इंसाँ नहीं समझे

'नैरंग' जिस मुक़ाम पर मुहाजिरत करके फ़ैमिली के साथ ज़िंदगी गुज़ार रहे थे वहाँ कभी पानी की कमी, कभी गंदगी की ज़्यादती, अमीरों और ग़रीबों में फ़र्क़ बढ़ता जा रहा था। अमीरों के पास कपड़ों की नुमाइश और ग़रीबों का कोई पुरसान-ए-हाल न था। ऐसे मुश्किल ज़माने में 'नैरंग' मुक़ामी अख़बरों में अपने क़तआत छपवाकर गर्वन्मेंट के ओहदेदारों को इत्तिला दिया करते थे। यानि यह उर्दू परस्तार, यह हुस्न-ओ-इश्क़ का शाइर समाज और क़ौम के मसाइल और ज़रुरियात को भी अपनी शाइरी में दो आतिशा करके हत्तुल्मक़दूर कमी को पूरा करवाता था।

हम चंद मुंतख़िब क़तआत को यहाँ नमूने के तौर पर नक़ल कर रहे हैं। इससे पता चलता है कि 'नैरंग' की शाइरी में ग़म-ए-दौराँ और ग़म-ए-जानाँ दोनों शरीक हैं और यही मक़सदी शाइरी है।

नवाज़िश होगी सर बार-ए-गिराँ से उनका हो हल्का
मज़ा आ जाए उस कूचे में लग जाए अगर नल्का

ग़र्ज़ कुछ शायरी से है न मक़सद शे'र ख़्वानी से
अगर मतलब है कुछ 'नैरंग' तो वो मतलब है पानी से

◆◆◆

क़ायल अज़मत-ए-ख़ुद साज़ ख़ुदाई तो रहे
न हो गर यह भी तो फिर शान-ए-गदाई तो रहे
काम करने के मेरी जान बहुत हैं लेकिन
हम यह चाहेंगे महलों में सफ़ाई तो रहे

◆◆◆

आजकल गर्मी-ए-बाज़ार फ़क़त हैं कपड़े
आदमियत के भी आसार फ़क़त हैं कपड़े
कल तो इंसान का मैयार था अख़्लाक़-ए-बुलंद
आज इंसान का मैयार फ़क़त हैं कपड़े

◆◆◆

बच्चों को बिलकता हुआ देखा नहीं जाता
यूँ जाम छलकता हुआ देखा नहीं जाता
दिल ग़म से उबलता हुआ देखा नहीं जाता
गिर-गिर के सँभलता हुआ देखा नहीं जाता

◆◆◆

गंदुम की गरानी ने है इंसान को मारा
कपड़े की गरानी से है इंसान बे-चारा

अगर फ़नी तौर पर इन क़तआत का तज्ज़िया किया जाए तो 'नैरंग' की कोहना मश्क़ी, क़ादिरुल कलामी, अल्फ़ाज़ पर कुदरत के अलावा तश्बीहात, इस्तेआरात, तलमीहात और छोटी मुतवस्सित बहर में ग़िनायत से लबरेज़ मिसरे मतलब को साफ़ और वाज़ेह तौर पर आसान, सलीस रवां दवां जबान में ऐसे पेश कर देते थे कि आसानी के साथ आमी और आलिम बल्कि दूसरी जबानों से ताल्लुक़ रखने वाले बाशिन्दे भी सुनकर महज़ूज़ होते हैं। जहाँ तक 'नैरंग' के कलाम

की तरसील और इब्लाग़ का मसला है वो इस मैदान के शहसवार थे। इन क़तआत से यह भी मालूम हो रहा है कि : ''सारे जहाँ का दर्द इन्ही के जिगर में है'' ऐसी शाइरी जिसमें मख़्लूक़ के हुक़ूक़ की वकालत की जाए बड़ी शाइरी की सफ़ में आती है। यक़ीनन यहाँ अदब बराए अदब और अदब बराए हदफ़ दोनों की तरफ़ इशारा है।

'नैरंग' आलिम थे और इसके अलावा उनका उर्दू और फ़ारसी शोअरा का मुताला अच्छा था। ऊपर बयान किये गए क़तओं के पहले अश्आर देखिए किस क़द्र उम्दा और मायने ख़ेज़ हैं ऐसा लगता है दरिया को कूज़े में बंद कर दिया है।

वेद में ढुंढ न तू, और न कुरआन में देख
शक्ल-ए-अल्लाह, जो चाहे तो वो इंसान में देख

◆◆◆

जलवा-ए-बर्क़-ए-सर तूर से वाक़िफ़ हूँ मैं
न सही तुरे मगर नूर से वाक़िफ़ हूँ मैं

◆◆◆

जिससे न बुझे तशनगी ऐ हज़रत-ए-'नैरंग'
उस साग़र-ए-मय को कभी साग़र नहीं कहते

इन अशआर की तश्रीह के लिए दफ़्तर दरकार हैं इसीलिए इस मज़्मून के दफ़्तर को हम यहाँ बंद करते हैं।

‘नैरंग’ की शाइरी में रेवाड़ी का तज़्किरा

रेवाड़ी की अगर तारीख़ लिखी जाएगी तो नंद लाल ‘नैरंग’ सरहदी की शाइरी उसकी ज़ीनत में इज़ाफ़ा करेगी। हम जानते हैं ‘नैरंग’ अगरचे ख़ुद मुहाजिर थे लेकिन उन्होंने रेवाड़ी में हर क़िस्म के रिफ़ाह-ओ-बहबूद के काम भी किये। कभी गर्वनर से हिन्दू स्कूल की तौसीअ की पुर-ज़ोर सिफ़ारिश कर रहे हैं।

हाँ एक बात की है गुज़ारिश हुजूर में
फुर्सत अगर मिले तो करूँगा बयान आज

◆◆◆

मौजूद शहर में है यहाँ हिन्दू हाई स्कूल
शोहरा है जिसके इल्म का विर्द-ए-ज़ुबान आज

◆◆◆

इस मदरसे में एक इमारत की है कमी
लाज़िम अता हो उसको ज़मीं-ओ-मकान आज

यहाँ यह ज़िक्र भी बेजा नहीं कि ‘नैरंग’ अशआर में अपना लहजा अपनी जबान जो अदीबाना है, इस्तेमाल करते हैं वो अवाम के लिए अपनी जबान को टकसाल बाहर नहीं करते। चुनांचे ‘नैरंग’ सरहदी की सिफ़ारिश पर इस स्कूल में इज़ाफ़ा किया गया।

अफ़सोस इस बात का है कि ‘नैरंग’ के नाम पर स्कूल या कोई हाल तो एक तरफ़ उनकी याद में एक तस्वीर भी स्कूल के दफ़्तर में मौजूद नहीं।

'नैरंग' कभी रेवाड़ी के अवाम की जानिब से पानी के नल की दरख़्वास्त लिखते हैं और फ़ौरी नल लगाया जाता है। इस नज़्म ''एक दरख़्वास्त'' के चंद शेर सुनिये।

हुदूद-ए-शहर में मुद्दत हुई है हम भी बसते हैं
ग़ज़ब यह है कि इक इक बूंद पानी को तरसते हैं

◆◆◆

बहुत ही दूर से मटकों में पानी भर के लाते हैं
ब-मुश्किल प्यास घर वालों की बेचारे बुझाते हैं

◆◆◆

नवाज़िश होगी सर बार-ए-गिराँ से उनका हो हल्का
मज़ा आ जाए उस कूचे में लग जाए अगर नल्का

◆◆◆

ग़र्ज़ कुछ शायरी से है न मक़सद शे'र ख़्वानी से
अगर मतलब है कुछ 'नैरंग' तो वो मतलब है पानी से

यही नहीं बल्कि जब नल में पानी कम हो जाता है तो म्युनिस्पैलिटी के ओहदेदार को इस बारे में ऐसी नज़्म लिखते हैं जिस में तंज़-ओ-मिज़ाह और शाइरी की झलक भी छलकती है। कुछ शे'र इस ग्यारह अश्आर की नज़्म से सुनिए।

इक नल है मोहल्ले में बड़ी शान थी उससे
पानी से तर-ओ-ताज़ा हर इक जान थी उससे

◆◆◆

आते थे जहाँ साठ (60) घड़े चाह-ए-ज़क़न से
आते हैं वहाँ सात घड़े गुंचा दहन से

◆◆◆

हो जाता है यक-लख़्त ही पानी का ख़सारा
दम तोड़ता है हिचकियाँ लेके वो बेचारा

◆◆◆

यूँ क़ालिब आबी ही से ताराज है नलका
यानि किसी तीमार का मोहताज है नलका

◆◆◆

है इतनी गुज़ारिश कि तवज्जोह कोई दम हो
पानी की मुसीबत तो यह फ़िल-फ़ौर ही कम हो

इन अशआर से पता चलता है कि 'नैरंग' के पास ग़मे जानाँ के साथ ग़मे दौराँ फ़रावान था। क्या रेवाड़ी के बसने वाले जानते हैं कि 'नैरंग' ने इस बस्ती के बसाने के लिए क्या क्या मुश्किलें उठाईं।

रेवाड़ी में एक उजाड़ मैदान में बोसीदा पुरानी दीवार थी जिसके नीचे छोटे बच्चे जमा होकर खेलते थे, 'नैरंग' जान रहे थे कि यह दीवार एक दिन गिर पड़ेगी और उनके नीचे दबकर कई बच्चे हलाक हो जाएंगे। 'नैंरग' हस्सास तबियत के मालिक थे। शे'र कहना आसान नहीं बल्कि ख़ून-ए-जिगर पीना है रातों को जागना है ताकि दूसरे आराम से सो सकें। 'नैंरग' ने सिर्फ़ हुस्न-ओ-इश्क़ की ग़ज़लें नहीं लिखीं बल्कि अपनी शाइरी से ऐसे ऐसे मसबत काम किये कि आज हम उनका एहतराम के साथ नाम ले रहे हैं और एहतराम ऐसा ईनाम है कि जो कभी तमाम नहीं होता। 'नैरंग' ने एक नज़्म सदर म्युनिसिपल कमेटी को लिखी। पहले सदर को अलक़ाब और इज़्ज़त से नवाज़ कर यह बताया इस म्युनिसिपल सदर की वजह से शहर की रौनक़ बढ़ी है। शे'र आप भी सुन लें।

किस ओज पर पहुँची हुई है आज रेवाड़ी
ऐ ज़ीनत शहर! आपकी बरकत यह है सारी

◆◆◆

सड़कें हुईं तामीर नई शान हुई है
सब आमद-ओ-रफ़्त इसलिए आसान हुई है

◆◆◆

ख़िदमत में गुज़ारिश है यह अदना सी मेरी भी
हो जाए जो यह काम तो इज़्ज़त है मेरी भी
दीवार है इक ख़स्ता जहाँ घर है हमारा
गिरने के सिवा जिसके नहीं कोई भी चारा

◆◆◆

हर शाम वहाँ लगता है बच्चों का ही मेला
नीचे है खड़ा कोई तो ऊपर कोई खेला

◆◆◆

ज़ख़्मी हो मुसाफ़िर हो काई अहल-ए-मोहल्ला
भगवान का बंदा हो या हो बंदा-ए-अल्लाह

◆◆◆

हट जाए जो दीवार वहाँ से तो मज़ा हो
जब शाम को घर पहुचुँ तो मैदान सफ़ा हो

'नैरंग' ख़ुद तंग दस्त थे ग़रीबों मज़दूरों किसानों और मिस्कीनों के दर्द से वाक़िफ़ थे। एक तरफ़ काम की कमी और दूसरी तरफ़ रोज बरोज़ बढ़ती मंहगाई। रेवाड़ी के मुक़ामी अख़बारों में क़तओं और नज़्मों की सूरत में गरानी के ख़िलाफ़ और हुकूमत के लोगों को बताने के लिए मुसलसल लिखते रहे।

'नैरंग' एक फ़ितरी तख़्लीक़कार और अपनी सदी के मुतहर्रिक शाइर थे। वो इस ख़ुदादाद सलाहियत से महरुमों, सितमकशों, मज़दूरों की नुमांयदगी कर रहे थे। 'नैरंग' ने मुसद्दस की हैय्यत में एक नौ-बंद यानि सत्ताईस(27) अशआर की नज़्म ''गरानी और सरकार-ए-हिन्द'' के उनवान से लिखी जो इस तर्ज़ की नज़्मों में नुमायाँ हैसियत रखती है। हम इस नज़्म के चंद मिसरों को चुनकर पेश करते हैं लेकिन लुत्फ़ तो जब है आप पूरी नज़्म का मुताला करें।

ऐ हाल की रौदाद-ए-गरानी तेरे सदक़े

◆◆◆

उठती है जिधर आँख उधर दौर-ए-ख़िज़ाँ है

◆◆◆

मेहमाँ की तवाज़ो' तो नहीं होती जुबाँ से

◆◆◆

जब पास न हो कुछ तो तवाज़ो हो कहाँ से

◆◆◆

बच्चों को बिलकता हुआ देखा नहीं जाता

◆◆◆

इस हाल में ख़ामोश कोई रह नहीं सकता

◆◆◆

महरूमी-ए-गंदुम ने है इंसान को मारा

◆◆◆

रोटी का सवाल आज हर इक विर्द-ए-जुबाँ है

◆◆◆

मुफ़लिस का कोई हामी ब-जुज़ यास नहीं है

◆◆◆

आ सकता है जम्हूर में इक ऐसा समाँ भी
उठ सकता है जब क़ल्ब से इंसाँ के धुआँ भी

◆◆◆

इक आग लगा सकती है शाइर की जुबाँ भी

सच तो यह हे कि सच्चे लफ़्ज़ों में रोटी का मरसिया है। इस नज़्म का उसलूब, इस में रवानी इसकी सलीस सादा जबान यक़ीनन भूक की कहानी है जो हमने 'नैरंग' की जबानी सुनी जो दिल तक उतर गई। आज 'नैरंग' को गुज़रे तक़रीबन पैंतालीस पचास साल हो रहे लेकिन अभी दुनिया में भूक, बरहनगी, बीमारी, और हक़ तलफ़ी जारी है। इस लिए हम यह कह सकते हैं कि 'नैरंग' की शाइरी इक्कीसवीं सदी के ग्लोबल विलेज को उसी तरह मुतस्सिर कर सकती है जैसे उनके दौर में थी।

कलाम-ए-'नैरंग' में वतन के ख़िदमत-गुज़ारों का ख़ैर-मक़्दम

'नैरंग' सरहदी एक उम्दा शाइर होने के साथ साथ एक नफ़ीस नस्तालीक़ इंसान भी थे। वो अगरचे तन्हाई को इज्तिमा और ख़िलवत को जलवत पर तरजीह देते थे लेकिन वो एक मिलनसार दिलसोज हमदर्द दर्दमंद शख़्सियत के हामिल थे। इसलिए लोगों के दिलों में जल्द जगह बना लेते थे ऐसी ही हस्तियों को हम मनमोहिनी शख़्सियत भी कहते हैं। मुहाजिरत के बाद एक क़दीम लेकिन छोटे मुक़ाम पर उनका क़याम जहाँ यह बताता है कि एक तरफ़ यह उन लीडरों, रहबरों, जनता के ख़िदमत-गुज़ारों की तारीफ़ में शे'र कहते थे ताकि उनकी तरग़ीब और हिम्मत इज़्ज़त अफ़ज़ाई के साथ उनकी शिनाख़्त और तशहीर भी हो जाए जिससे अवाम और मुक़ाम से उन शख़्सियतों का रिश्ता बंध जाए जिनका तज़्किरा हम इसी मज़मून में करेंगे। यहाँ हम इस नुक्ते पर रौशनी डाल रहे हैं कि दरबारी शाइरों की मदाह सराई का लहजा और मौज़ु नहीं बल्कि अच्छे काम करने का ऐतराफ़ और सिला है क्योंकि अहसान का बदला अहसान से दुनिया शराफ़त और अज़्मत की अलामत है। दूसरी तरफ़ 'नैरंग' सरहदी की ज़िंदगी बहैसियत मोअल्लिम जो क़ौम की आईंदा नसल को तैयार करता है और इल्म-ओ-तरबियत से समाज को अच्छे लोगों से भर देता है उनके कैरियर से दरख़्शाँ है। 'नैरंग' अवाम से कई रिश्तों से जुड़े हुए थे। वो बज़ाहिर सिर्फ़ एक मोअल्लिम और शाइर थे जिसकी तख़्लिक़ात मुक़ामी अख़बारों, रिसालों और जरीदों में शाया

होते रहते थे, जो कभी कभार ख़ुद घर पर शे'री निशस्तें बर-गुज़ार करते और मुशाइरों में रौनक़ अफ़रोज़ होते लेकिन इसके साथ साथ अवाम से उनके मसाइल और उनकी महरुमियों से अपना रिश्ता जोड़े रहते। चुनांचे कभी रेवाड़ी में पानी के बंदोबस्त के लिए हुकूमत से कह कर नल लगवा रहे हैं, कभी गलियों, कूचों बाज़ार की सफ़ाई की तरफ़ तवज्जोह दिलवा रहे हैं, कभी बच्चों के खेलने के मैदानों से बोसीदा दीवारें हटवा रहे हैं और कभी गरानी के ख़िलाफ़ कभी मसावात मुहब्बत अख़ूवत से फ़िरक़ावराना ज़ेहनियत को मिरा रहे हैं। इन मतालिब को उनके शे'रों में आपने क़तओं में सुना।

रेवाड़ी के हिन्दू हाई स्कूल की नज़्म में इस स्कूल को बड़ा बनाने और मज़ीद कुशादा करने की बातचीज का सहरा इन्ही के सर है रेवाड़ी में जो मिर्ज़ा ग़ालिब का सौ साला जश्न मनाया गया वो भी इन्ही की कोशिशों से हुआ, बाज़ बड़े मुशाइरे जिसमें डिप्टी कमिश्नर बेदी और कई नामवर शाइरों ने शिरकत की और जिन्हें उस ज़माने में दूरदर्शन से नश्र भी किया गया, 'नैरंग' सरहदी की बदौलत था। यहाँ इस बात का भी ज़िक्र ज़रुरी है कि 'नैरंग' सरहदी ने 13 अक्टूबर 1953 ईंसवी को बज़्म-ए-अदब की बुनियाद रखी जो आज भी टोरंटो में रजि॰'नैरंग' सरहदी बज़्म-ए-अदब मेमोरियल की शक्ल में मौजूद है।

इन ख़िदमात के एतराफ़ में रेवाड़ी की एक सड़क 'नैरंग' सरहीद के नाम पर है। यह सच है कि हरियाणा और ब-खुसूस रेवाड़ी की तारीख़ 'नैरंग' सरहीद के ज़िक्र के बग़ैर मुकम्मल नहीं हो सकती।

'नैरंग' सरहदी ने हर एक ऐसे वाक़िए या शख़्सियत को नज़्म किया है जिससे रेवाड़ी की तरक़्क़ी, तामीर और अहमियत में इज़ाफ़ा हुआ। 'नैरंग' की शाइरी में सिक्के के दोनों रुख़ देख सकते हैं और यही सदाक़त भी है। शाइर अपने एक शे'र से वो तासीर पैदा कर देता है जो दूसरा शख़्स पूरी किताब लिखकर भी नहीं कर सकता।

तारीख़ में ऐसे वाक़िआत महफ़ूज़ हैं कि शाइरों की शोला बयानी जंगों की फ़तह का बायस हुई हैं, उनकी वतनदोस्ती और दयार-ए-इश्क़ की मन्ज़रकशी लोगों को अपनी तरफ़ ऐस जज़्ब की हुई है जैसे मक़नातीस से लोहे के ज़र्रात।

रेवाड़ी की ज़मीं पर कब सियाह-बख़्ती नहीं आती
कभी पानी नहीं आता, कभी बिजली नहीं आती
हमारी आँख से किस रोज़ तूफ़ानी नहीं आती
मगर अफ़सोस नल से बूंद पानी की नहीं आती
यहाँ सदियों से अब तक सूरत-ए-इंसान बाक़ी है
ताज्जुब है कि ज़िंदा किस तरह से जान बाक़ी है

रेवाड़ी को आज की तरक़्क़ीयाफ़्ता रेवाड़ी बनाने में जो अहम शख़्सियतों ने ज़ेहमतें बर्दाश्त कीं जिनकी वजह से यहाँ अमन आसायश का चलन है उनको नज़राना-ए-मुहब्बत पेश करना इंसान की आला क़द्रों में शुमार किया जाता है। ज़ैल के बंदों में 'नैरंग' कहीं तुलाराम तो कहीं बाई जी की तारीफ़ कर रहे हैं लेकिन उनका महवर और मरकज़ राव बीरेंद्र सिहं ही हैं।

तुलाराम इस ज़मीं के साहिबे एजाज़-ए-आलिम थे
वो अहल सैफ़ थे, जंग आज़मा थे, राज़-ए-आलम थे
वो हर हंग-ए-अजल थे, जंग-जू, जांबाज़-ए-आलम थे
वो फ़ख़र-ए-ख़ानदाँ, सरमाया-ए-सद-ए-नाज़-ए-आलम थे
किये साबित बुज़ुर्गों के चलन अंग्रेज़ के आगे
नहीं झुकने दिये अहल-ए-वतन अंग्रेज़ के आगे

◆◆◆

फ़िदा-ए-मुल्क-ओ-मिल्लत बाई जी शान-ए-वतन भी है
वो हमर्दद-ए-ज़ईफ़ाँ और निगहबान-ए-वतन है
यह वो दिल है कि जिस में जोश-ओ-अरमान वतन भी है
उसी का मद्दह ख़्वाह 'नैरंग' सुख़न-दान-ए-वतन भी है

गुज़ारी उम्र जिसने ख़िदमत-ए-उर्दू जुबाँ करते
गुज़र जाएगी बाक़ी भी यूंही आह फुग़ाँ करते

◆◆◆

यहाँ के रहनुमा-ए-मुल्क-ओ-मिल्लत राव साहब हैं
यहाँ के आफ़ताब-ए-इल्म-ओ-हिकमत राव साहब हैं
यहाँ के जलवा फ़रमा-ए-विज़ारत राव साहब हैं
यहाँ के मुम्बा बहर-ए-सख़ावत राव साहब हैं

अगर ख़्वाहिद दिलश, क़ारुं कुन्द हर रोस्ता-ए-रा
शहंशाहे बगर दांद अगर ख़्वाहिद गदा-ए-रा

यही नहीं बल्कि जब अहम लोग जैसे गर्वनर साहिब, इंसपेक्टर साहिब, डिप्टी कमिश्नर, वज़ीर-ए-तालीम या वो क़ौम के ख़िदमत गुज़ार जो रेवाड़ी की ख़िदमत गुज़ारी करके वापिस होते हैं तो उनकी तहसीन और आफ़रीन भी करके 'नैरंग' यह बताते हैं कि ज़िंदा क़ौमें हमेशा अपने लीडर, क़ायद, हीरोज़ और जांबाज़ों को याद करके ज़िंदा रहती है। 'नैरंग' ने एक ग़ज़ल की हैय्यत में बारह शेरों की ख़ूबसूरत नज़्म हरियाणा के गर्वनर सर चंदू लाल की आमद पर रेवाड़ी में लिखी जिस में उन्होंने गर्वनर के औसाफ़ का ज़िक्र करके रेवाड़ी के हिन्दू स्कूल की तौसीअ की अपील की, जिसको गर्वनर ने कुबूल किया। इस नज़्म के कुछ शे'र देखिएः

वारिद हुए हैं अफ़सर-ए-आला पंजाब के
नाज़ाँ है जिनकी ज़ात पर हिंदुस्तान आज

◆◆◆

खुश ख़लक़-ओ-खुश मिज़ाज अक़्ल-ओ-ग़य्यूर में
हाकिम हमारे सर पे हैं क्या मेहरबान आज

◆◆◆

है तुझ पे नाज़ सब बजा सर चंदूलाल जी
सूबे की तुझसे बढ़ गई है आन-बान आज

हाँ एक बात की है गुज़ारिश हुजूर में
फुर्सत अगर मिले तो करूँगा बयान आज

◆◆◆

मौजूद शहर में है यहाँ हिन्दू हाई स्कूल
शोहरा है जिसके इल्म का विर्द-ए-जुबान आज

◆◆◆

इस मदरसे में एक इमारत की है कमी
लाज़िम अता हो उसको ज़मीं-ओ-मकान आज

एक तरफ़ हिन्दू स्कूल की तौसीअ के बारे में कह रहे हैं तो दूसरी तरफ़ लड़कियों का कॉलेज जो रेवाड़ी में है जो ''राव बहाल सिंह'' साहब के नाम से मन्सूब है जो उनकी तारीफ़ में मुसद्दस में कह रहे हैं। 'नैरंग' सरहदी चूंकि उर्दू फ़ारसी तहज़ीब के दिलदा हैं इसीलिए इन हस्तियों को मरहूम व मग़फ़ूर कहकर माअरफ़ी कर रहे हैं। कुछ शे'र आप भी सुनिये।

तर्ब अंगेज़ है कैसी यह ज़मीं कॉलेज की
रुख़-ए-महबूब से बढ़कर है जबीं कॉलेज की
दिल-कशी हूर से बढ़कर है कहीं कॉलेज की
नज़र आती है हर इक चीज़ हसीं कॉलेज की
दिल ख़ामोश से ख़ामोश सी फ़रियाद आई
यानि इक साहिब-ए-तौक़ीर की फिर याद आई

◆◆◆

इस की ज़ीनत में इसी शख़्स का हिस्सा है ज़रुर
हो न हो यह उसी बेबाक का क़िस्सा है ज़रुर

◆◆◆

इसी रेवाड़ी में स्कूल में वज़ीर तालीम आते हैं तो कहते हैं।

नागाह स्कूल इल्म की ख़ुश्बू से भर गया
है इस लिए नसीम यहाँ इत्र बार आज

◆◆◆

करते हैं ख़ैर मक़दम आली-जनाब हम
अंजाम-कार ख़ात्म हुआ इंतज़ार आज

डिप्टी कमिश्नर की आमद पर कहते हैं।

तेरे तशरीफ़ लाने से हमें है नाज़ क़िस्मत पर
कि मक्तब की ज़मीं अब रह गई है आसमाँ होकर

◆◆◆

बहुत मुद्दत के बाद आख़िर बहार-ए-जाँफ़िज़ा आई
पड़े थे ख़ुश्क बे-आब-ओ-गिया महव-ए-ख़िज़ाँ होकर

जब सरदार भाई शे'र जंग सिंह ए. डी. एम. की तब्दीली हुई तो पाँच बंद मुसद्दस में ख़ूबसूरत नज़्म लिखी। हम यहाँ अपनी बात ख़त्म करते हुए एक दो बंद नक़ल करते हैं।

एक ही तर्ज़ पर चलता है यह क़ुदरत का निज़ाम
है अगर कूच किसी का तो किसी का है मुक़ाम
जाने वाले तुझे सद-बार हमारा हो सलाम
ख़त्म होता है इसी शे'र पे 'नैरंग' का कलाम
हम को भी गुलशन-ए-आलम से चले जाना है
फ़र्क़ कुछ भी नहीं यह एक ही अफ़साना है

◆◆◆

आशियाँ बुलबुल गुलशन से हुआ है ख़ाली
बुलबुल बाग़ ही आएगी चहकने वाली

बाग़ आबाद हो जिस बाग़ का तू हो माली
गुल फ़िशाँ नख़्ल-ए-तमन्ना की हो डाली-डाली

''तेरे ही दम से रहे मेरे वतन की रौनक़
''जिस तरह फूल से होती है चमन की रौनक़''
(अल्लामा इकबाल)

‘नैरंग’ सरहदी, और राव मोहर सिंह

रेवाड़ी की तारीख़ी और सक़ाफ़ती दास्तान तौलानी है। यहाँ चंद गिरोहों में हमेशा मुक़ाबला और चश्मश्क रही है जो आज भारत बनने के सत्तर साल बाद भी देखी सुनी और बोली जाती है। मगर यह मुकाबला और चश्मक सब रेवाड़ी को सजाने और तरक्की देने के मसबत रास्तों के लिए था! आज़ादी और तक़सीम-ए-हिन्द से भी पहले अंग्रेज़ों के ख़िलाफ़ एक बड़ी शख़्सियत उभरी जो राव मोहर सिंह थे वो दर हक़ीक़त बुध पर हाउज़ की बुनियाद गुज़ार थे। भारत बनने के बाद राव मोहर सिंह एम.एल.ए. के ओहदे पर 1957 ईंसवी तक यानि इंतक़ाल तक काम करते रहे। राव मोहर सिंह ने रेवाड़ी की अवाम को सूद की रक़म से निजात दिलाने के लिए गुड़गांव में पहला को-आपरेटिव बैंक खोला। इसके अलावा कई उम्दा और समाजी काम अपनी तमात ज़िंदगी में करते रहे। आज भी उनके नेबरे (Great Grand Son) राव नबीर सिंह एम. एल. ए. हैं। ‘नैरंग’ सरहदी ने मोहर सिंह के लिए चार मिसरे लिखे जो पत्थर में कुंदा हैं।

राव मोहर सिंह के बुत संगीन के नीचे
अहीर कॉलेज में बतौर-ए-यादगार
पत्थर पर कुन्दा हुआ है

गुरेज़ाँ जिन से ‘नैरंग’ वसफ़-ए-इंसानी नहीं होते
वो चश्म-ए-दहर से पिन्हाँ ब-आसानी नहीं होते
जो कार-ए-ख़ैर में क़ौम-ओ-वतन पर जान देते हैं
वो इस दुनिया-ए-फ़ानी में कभी फ़ानी नहीं होते

‘नैरंग’ सरहदी और वज़ीर-ए-आला हरियाणा राव बीरेंद्र सिंह

‘नैरंग’ सरहदी की शाइरी के आईने में

इतना तो हमें मालूम है कि ‘नैरंग’ सरहदी उर्दू के आशिक़ और क़ादिरुल कलाम शाइर भी थे। वो हर शख़्स जो उर्दू का मोहसिन, मख़्दूम, मुजाहिद और परस्तार होता उसके भी मद्दाह ख़्वाँ हो जाते। चुनांचे उनका कलाम ऐसे मिदहत के फूलों से गुलदस्ता बना हुआ है। इस मद्दाह ख़्वानी में दरबारी शुअरा की तरह कोई ज़ाती मुनफ़अत से काम न था न उससे शोहरत और ईनाम की कोई उम्मीद थी बल्कि यह मुहब्बत का आबशार था जो दिल से निकलकर दूसरे दिल पर गिरता था। ‘नैरंग’ के कलाम के मुतालिए से हमें यह भी पता चलता है कि वो राव बीरेंद्र सिंह के दिलदादा थे और जब तक ‘नैरंग’ ज़िंदा रहे उनको अशआर में नज़राना-ए-अक़ीदत पेश करते रहे। यह शे’री तोहफ़ा कभी क़तआत की शक्ल, कभी ग़ज़ल में और ज़्यादातर नज़्मों में नज़र आता है। ‘नैरंग’ ज़ोदगो शाइर थे।

उनका ज़्यादातर कलाम जो महफ़ूज़ है उस वक़्त बीरेंद्र सिंह हरियाणा के चीफ़ मिनिस्टर थे। अगरचे बीरेंद्र सिंह की सियासी ज़िंदगी में मुख़्तलिफ़ अदवार आए लेकिन उनका रिश्ता अवाम से कभी मुन्क़ता नहीं हुआ।

यह भी सच है कि ‘नैरंग’ सरहदी का पूरा कलाम महफ़ूज़ न रहा लेकिन जो मौजूद कलाम है उसमें बीरेंद्र सिंह पर कम अज़ कम तीन क़तआत और चार नज़्में शामिल हैं। वज़ीर-ए-आला हरियाणा

राव बीरेंद्र सिंह की तशरीफ़ आवरी का शुक्रिया यूँ अदा करते हैं।

छाया हुआ है अबर-ए-करम कुछ न पूछिये
सब मिट गए हैं रंज-ओ-अलम कुछ न पूछिए
उर्दू को जो मुक़ाम मिला है तेरे तुफ़ैल
कितने हैं शाद अहल-ए-क़लम कुछ न पूछिए

शाइर ने इस्तिआऐं में जो अहल-ए-क़लम को वज़ीर-ए-आला के दफ़तर से मदद मिली, इस का ज़िक्र करके कहा कि उनके माद्दी और अदबी मुश्किलात के मसायल हल हो गए। इसके अलावा हरियाणा स्टेट में जो उर्दू को मुक़ाम दिया गया उसका भी ज़िक्र इस क़ताअ में है।

एक और क़ताअ जिसमें चीफ़ मिनिस्टर की आमद का ज़िक्र है उससे मालूम होता है कि लोगों की उम्मीदें फिर पूरी होंगी।

चार सू हुस्न की है जल्वा-गरी आज के दिन
बंद शीशे में हुई आके परी आज के दिन
हाकिम-ए-आला की आमद की ख़बर है 'नैरंग'
शाख़-ए-उम्मीद हुई अपनी हरी आज के दिन

'नैरंग' की शाइरी का यह भी कमाल है के मुहावरों में जो जल्द समझ में आ जाए मज़मून को ऐसे बन्द करदेते हैं। जैसे ''शिशे में परी'' और जिस को देख ''हुस्न की नुमाइश'' और शाख उमिद फिर से हरी हो जाती है।

कभी दो शे'रो में उनका एहसान बताने कि कोशिश करते हैं।

आमद से तेरी आज गुल-ओ-लाला खिले हैं
कल तो यहाँ फूल थे कम ख़ार ज़्यादा
तक़दीर ने बख़्शा है हमें शर्फ़-ए-मुलाक़ात
अहसान तेरा हम पे है सरकार ज़्यादा

शाइर ने सादगी और सलासत से दिल की कैफ़ियत गुल-ओ-लाला के खिलने से जोड़ दी। यक़ीनन एक शाइर का चीफ़

मिनिस्टर से मुलाक़ात का शर्फ़ हासिल करना भी मुक़द्दर है। मिसरे चहारम में इस अहसान ज़्यादा को बयान कर दिया है। यहाँ इस बात का भी ज़िक्र ज़रुरी है कि राजा राव बीरेंद्र सिंह के बेटे राव इंद्रजीत सिंह जो आजकल मिनिस्टर ऑफ़ स्टेट हैं और Statistics और दीगर प्रोग्रामों का इजरा करवाने का क़लमदान रखते हैं। रेवाड़ी ही में पैदा हुए। उन्होंने देहली यूनिवर्सिटी के हिन्दू कॉलेज से क़ानून की डिग्री हासिल की। वो गुड़गांव से लोकसभा के मेम्बर ऑफ पार्लियामेंट भी हैं। खुद बीरेंद्र सिंह ने उनकी सियासी तरबियत की है। यह ख़ानदानी शर्फ़ जो अवाम की ख़िदमत के जज़्बे से सरशार है उनकी रगों में ख़ून बनकर दौड़ रहा है जिसकी उम्दा मिसाल खुद राव इंद्रजीत सिंह की बेटी आरती सिंह राव हैं। जब 'नैरंग' सरहदी का इंतक़ाल हुआ उस वक़्त राव इन्द्रजीत सिंह की उम्र तेईस (23) साल के लगभग थी। जहाँ तक राव बीरेंद्र सिंह की सियासी कशमकश और जद्द-ओ-जहद का मसला है 1954 ईंसवी से एम.एल.ए., फिर पंजाब गर्वन्मेंट में वज़ीर रहे। और स्पीकर भी रहे। मगर शर्मा साहब के बाद 1967 ईंसवी में वो हरियाणा के चीफ़ मिनिस्टर बनाए गए। 'नैरंग' सरहदी ने बीरेंद्र सिंह के चीफ़ मिनिस्टर बनने पर ख़ूबसूरत नज़्म लिखी है। यही नहीं बल्कि दो तीन और नज़्में लिखी हैं जिनके उन्वानात और मतलाअ के मिसरे यह हैं।

- फ़िदा-ए-हरियाणा राव बीरेंद्र सिंह का अहदे ज़र्रीन

  आँखों में है शादाबी गुलज़ार ज़्यादा
- शैदा-ए-मुल्क-ओ-मिल्लत-ओ-फ़ख़रे ख़ानदान राव बीरेंद्र सिंह साहब (साबिक़ वज़ीर-ए-आला हरियाणा)

  ऐ ज़िया-ए-मुल्क तनवीर-ए-वतन
- निदा-ए-हरियाणा

  हमें जिस रोज़ से हासिल हुआ ईनाम हरियाणा
- ऐलान फ़तह इंतिख़ाब/महबूब हरियाणा अपने हरीफ़ से वोटों

की कसीरुल तादाद से कामयाब हुए।

फ़िदा-ए-हरियाणा राव बीरेंद्र सिंह का अहद-ए-ज़र्रीन चौदह शे'र की नज़्म है जो मुरद्दिफ़ है।

''ज़्यादा'' की रदीफ़ ने इसमें ख़ूबसूरती और ग़िनायत ज़्यादा कर दी है। मज़मून मदहिया है, ज़मीन गुलिस्तानी है। शे'रों में सनअत तकरार, (गुलज़ार-गुलज़ार) सनअत इश्तिक़ाक़ (गुलज़ार-गुलरेज़-गुलबार) सनअत मुराआतुन्नज़ीर (शाख़-ख़ार-नख़ल-गुलबार-मुग़िलयाँ), (मसीहा-शिफ़ा-तन-बीमार) सनअत तज़ाद (ख़ामोश-गुफ़्तार) (मुसर्रत-ग़म-रंज) शाइरी का कमाल यह भी है कि क़ाफ़िये को रदीफ़ में इस तरह बिठा दिया है कि रदीफ़ का अहसास जुदागाना महसूस नहीं होता। कुछ शे'र यहाँ दरज किए जाते हैं।

आँखों में है शादाबी-ए-गुलज़ार ज़्यादा
गुलज़ार में गुलरेज़ हैं अश्जार ज़्यादा

हर शाख़-ए-मुग़लियाँ है निगूंख्सार ज़्यादा
हर नख़्ल बर-ओ-मंद है गुलबार ज़्यादा

रास आएँगी अब सबको मुसर्रत की फ़ज़ाएँ
होंगे न ग़म-ओ-रंज के अंबार ज़्यादा

ख़ामोश-ए-जुबाँ फूल भी होंगे न चमन में
शायद गुल-ओ-बुलबुल में हो तकरार ज़्यादा

अब कश्त-ए-गुल-ओ-लाला में खटका हो तो कैसे
आग़ोश-ए-चमन में नहीं जब ख़ार ज़्यादा

मंज़िल पे रसाई का यक़ीं हो तो चला है

जब आ ही गई कुव्वत-ए-रफ़तार ज़्यादा

अय्याम-ए-गुज़श्ता में सुनी किसने हमारी
कहने को तो कहते रहे हर बार ज़्यादा

सुनते हैं मसीहा की है आमद की ख़बर आज
पायेगा शिफ़ा हर तन-ए-बीमार ज़्यादा

है मुझको ताज्जुब मेरी ख़ामोश-ए-जुबाँ में
क्यों आने लगी ताक़त-ए-गुफ़तार ज़्यादा

मुमकिन है रसाई के लिए हज़रत-ए-'नैरंग'
बन जाएं वसीला मेरे अश्आर ज़्यादा

'नैरंग' ने बीरेंद्र सिंह की कामयाबी और हरीफ़ की शिकस्त पर ख़ूबसूरत नज़्म अठारह अशआर की कही है उस में एक ख़ूबसूरत शे'र मौलाना ज़फ़र अली ख़ान का भी तज़मीन किया गया है। चूंकि नज़्म सहल और बहुत ख़ूबसूरत तर्ज़ में लिखी गई है हम मज़मून की तवालत का ख़्याल रखते हुए बग़ैर किसी तब्सरे के इसके बंद पेश करते हैं।

ऐलान-ए-फ़तह इंतख़ाब

(महबूब-ए-हरियाणा अपने हरीफ़ से वोटों की
कसीरुल तादाद से कामयाब हुए)

ऐ आफ़ताब-ए-हुस्न, ऐ रश्क-ए-माहे मुबीं
ऐ फ़ख़्र क़ौम, नाज़िश-ए-इक़बाल-ओ-हश्म-ओ-दीं
दुश्मन की लाख कोशिश के बावजूद भी
आई है तेरी शान में हरगिज़ कमी नहीं

◆◆◆

हमको तो इंतख़ाब से पहले भी था यक़ीं
होगा तू कामयाब ब-सद शान-ओ-आफ़रीं
इस बात का सबूत ज़माने ने दे दिया
तेरे सिवा हमारा कोई रहनुमा नहीं

◆◆◆

ऐ रश्क-ए-नौ-बहार, बहार-ए-चमन है तू
इस सरज़मीन-ए-ख़ार में मुश्के ख़त्न है तू
अब हो गया है अहल-ए-ज़माने पे मुन्कशिफ़
दरअसल इस ज़मीं का फ़िदा-ए-वतन है तू

◆◆◆

दानिशवरी में आपकी किस को कलाम है
अहल-ए-नज़र में आपका नक़्श-ए-दवाम है
सब जलने वाले आतिश-ए-दोज़ख़ में जल गए
अर्श-ए-बरीं से आपका ऊँचा मुक़ाम है

◆◆◆

दुश्मन से दिल का दाग़ दिखाया न जाएगा
ता-ज़ीस्त उससे होश में आया न जाएगा
''नूर-ए-खुदा है कुफ्ऱ की हरकत पे ख़ंदाज़न
फूंकों से यह चिराग़ बुझाया न जाएगा''
(मौलाना ज़फ़र अली ख़ान)

◆◆◆

तू साहब-ए-शऊर है दाना-ए-राज़ है
तेरी ज़मीं को तेरी विज़ारत पे नाज़ है
'नैरंग' सुना है अहल-ए-सियासत से इस क़द्र
शाइर नहीं है तू मगर शाइर नवाज़ है

◆◆◆

कुछ मय-कशो के हाल की, जाँ की भी फ़िक्र कर
रंगे बहार देख ख़िज़ाँ की भी फ़िक्र कर
'नैरंग' की बात जान-ए-बरोदर क़बूल कर
अहल-ए-ज़ुबाँ के बाद, ज़ुबाँ की भी फ़िक्र कर

'नैरंग' सरहदी ने बीरेंद्र सिंह के कारनामों पर एक ग़ज़ल की हैय्यत में चौदह (14) शे'र की मरद्दफ़ नज़्म लिखी जिसके उन्वान में वज़ीर आला को शैदाए मुल्क-ओ-मिल्लत और फ़ख़र-ए-ख़ानदान से ख़िताब किया। हम जानते हैं यह फ़ख़र आज भी सत्तर अस्सी साल से इस ख़ानदान में जारी और सारी है। चुनांचे अब उनकी दूसरी तीसरी पीढ़ी भी सियासत और समाजी कामों में नज़र आती है। जिसकी ज़िंदा मिसाल उनके फ़रज़ंद मिनिस्टर इंद्रजीत सिंह और उनकी पोती आरती सिंह हैं।

मतला देखिएः

ऐ ज़िया-ए-फ़ल्क! तन्वीर-ए-वतन
ऐ फ़िदा-ए-क़ौम, ऐ मीर-ए-वतन

◆◆◆

शान-ए-हरियाणा-ओ-तौक़ीर-ए-वतन
तेरा दम है और तामीर-ए-वतन

यानि बीरेंद्र सिंह की वजह से मुल्क में रौशनी हरियाणा की इज़्ज़त और शान है। यहाँ की अवाम इस पर फ़ख़र करते हैं कि बीरेंद्र सिंह जैसा रहबर उन्हें मिला है जिसने मुल्क की तक़दीर बदल दी और उसको फ़िरदौस-ए-बर्रीं बना देगा। शाइर कहता है यहाँ के बासियों में ख़िदमत का शौक़ बढ़ा दे और इल्म और दानिश की फ़रावानी की वजह से हर जवान को एक मुदब्बिर बुज़ुर्ग कर दे। मतालिब को ज़ैल के मिसरों में सुनिए।

सुनते आए हैं सना फ़िरदौस की
खींच दे वैसी ही तस्वीर-ए-वतन

मोजज़न दरिया-ए-दानिश हो यहाँ
हर जवाँ आए नज़र पीर-ए-वतन

अवाम को मालूम है कि बीरेंद्र सिंह दौर में हरियाणा में तालीमी, तामीरी और रिफ़ाही काम बहुत हुए। लोगों की मआशी हालत बेहतर हुई और अवाम से ग़रीबी, मुफ़लिसी, जहालत दूर हुई। यह सब उस अज़ीम रहनुमा की बदौलत इसलिए भी हुआ कि वो एक सुलझे हुए मुदब्बिर थे। इसीलिए कहते कि यह तरक़्क़ी आगे बढ़ती रहे और रुकने न पाए।

ख़त्म होने दे न हद-ए-इरतक़ा
बढ़ती जाए और तदबीर-ए-वतन

और इसी तदबीर से तक़दीर-ए-वतन बदल सकती है।

है मुसल्लत तुझ पर तहरीर-ए-वतन
तुझसे वाबस्ता है तक़दीर-ए-वतन

हरियाणा की ज़मीन अकसीर और कशमीर बनाने में बीरेंद्र सिंह की ख़िदमात का ऐतराफ़ भी किया है।

'नैरंग' लिखते हैंः

तेरी बरकत की बदौलत है कि आज
इसका हर ज़र्रा है अक्सीर-ए-वतन

◆◆◆

है बहर सू नहर इशरत की रवाँ
है निशात अंगेज़ कशमीर-ए-वतन

'नैरंग' सरहदी उर्दू के बाग़ को फूला फला देखना चाहते थे और वो जानते थे कि इस बाग़ की अज़्मत उसके शाइरों, अदीबों, तख़्लीक़ निगारों और मोअल्लिमों से है। इसी लिए हमेशा गर्वन्मेंट को उनकी तंगदस्ती और परेशानियों को दूर करवाने के लिए हर क़िस्म का तअय्युन ज़रुरी समझते थे। वो जानते थे कि बीरेंद्र सिंह उर्दू के हामी हैं, इसी लिए इस नज़्म के आख़िर में उनकी अज़्मत और उनकी

वजह से मुल्क की इज़्ज़त और शान-बान और पहचान का ज़िक्र करके कहते हैं।

शायरान-ए-क़ौम पर भी हो नज़र
यह हुआ करते हैं जागीर-ए-वतन

शाइर को वतन की जागीर कहना उम्दा और नया मज़मून है। दोनों मिसरों को साफ़ और सलीस जबान में दलील के साथ पेश किया है।

बीरेंद्र सिंह क्योंकि चीफ़ मिनिस्टर थे और हर रिफ़ाही और सक़ाफ़ती काम की महार उनके हाथ में थी इस लिए कहते हैं।

हाथ में हे तेरे दौलत की अनाँ
तू बदल सकता है तक़दीर-ए-वतन

शाइर इस पूरी नजम में वज़ीर-ए-आला की शख़्सियत, उनके कारनाम, क़ेयादत और रहबरी का उम्दा ज़िक्र करके क्यों न फ़ख़र-ओ-नाज़ करे। इसीलिए तो मक़ते में कहते हैं।

नाज़ जितना हो तुझे 'नैरंग' बजा
शाइरी तेरी है तश्हीर-ए-वतन

मसनवी सावित्री का मुख़्तसर तज्ज़िया

शाइर ख़ुश-नवा नंद लाल 'नैरंग' ने उर्दू शाइरी में दास्तान सावित्री को मसनवी की शक्ल लिखकर उर्दू परस्तारों को इस उम्दा फ़िक्री, तजल्लियाती हिकायत की तरफ़ मुतवज्जोह किया है। अगरचे बाज़ उर्दू शाइरों ने कुछ इशारे ज़रुर किये हैं लेकिन जिगर बरेलवी मुतवफ़्फ़ी 1975 ईंसवी ने पूरा एक किताबचा ''पैयाम-ए-सावित्री'' नाम से शाए कर दिया है। 'नैरंग' चूंकि उर्दू, फ़ारसी, हिन्दी के अलावा अंग्रेज़ी और संस्कृत से भी वाक़िफ़ थे, इसलिए उन्होंने यह तर्जुमा सलीस अशआर में मसनवी की हैय्यत से (96) शे'रों में किया। यहाँ इस बात की तौज़ीह भी ज़रुरी है कि यह हिकायत महाभारत जो संस्कृत में मज़हबी अक़ीदती रजमिया किताब से ली गई है। इस नज़्म को श्री अरबिंदों ने फ़्री वरस के चौबीस हज़ार मिसरों में अंग्रेज़ी लिखा है। श्री अरबिंदों बीसवीं सदी की पहली चार दहाईयों में यह मसनवी तसनीफ़ कर रहे थे। सावित्री को अरबिंदों ने पहले तीन हिस्सों में तक़सीम करके इस रजमिया नज़्म को बारह किताबों में रक़म किया। फिर हर किताब को आहंग या नग़मों या क़तओं में या canto में बयान किया। इस आहंग के भी मज़ीद सैक्शन बनाए गए, जो हर मज़मून ओर मतलब के एतेबार से जुदा है। अगरचे सावित्री असातीरी हिकायात में शामिल है लेकिन उसकी अज़मत और अहमियत इस लिए भी है कि इस में ज़ात, कायनात, जहान, आंसूवी जहाँ, जिस्म-ओ-रुह के साथ मौत की बालीदा और गहरी बातें भी हैं।

अरबिंदो ने आत्मा, परमात्मा, दर्द-ओ-रंज, ज़िंदगी रुह की तरबियत और तरक़्क़ी और फ़ना से बक़ा की तलाश को उम्दा तरीक़े से बयान किया है जिससे इंसान का मा'बूद से रिश्ता और मा'बूद की सिफ़ात का हामिल होना शामिल है।

'नैरंग' सरहदी ने ज़्यादातर तवज्जोह इस दास्तान के असातीरी और वाक़िआती मसायल पर देकर बाज़ मिसरों में फ़िक्र और सोच की बुलंदियों की तरफ़ ईशारा किया है। यहाँ मसनवी छोटी बहर में नग़मगी से सरशार है बयान साफ़ सलीस शगुफ़्ता और आम फ़हम है। दास्तान में जो तसुलसुल होता है जो उसकी जान और अहमियत का हामिल रहता है वो लुत्फ़-ए-बयान पूरी मसनवी में नज़र आता है।

मसनवी की तम्हीद में उर्दू, फ़ारसी, हिन्दी और संस्कृत के अल्फ़ाज़ का संगम मुलाहिज़ा कीजिए। अहद-ए-सलफ़ (पुराना ज़माना), नेक फ़रजाम (नेक अंजाम), म-लक़ा (चांद का टुकड़ा) हवन की पवित्र (इज़्ज़त की पाक), सावित्री का राग (बुलंद फ़िक्री का नग़मा)

ये अहद-ए-सलफ की है इक दास्ताँ
कि था वारिस-ए-तख़्त-ए-हिंदुस्ताँ
निको सीरत-ओ-नेक फ़र्जाम था
हर इक तरह का उस को आराम था

◆◆◆

तबीयत में था जौहर-ए-रास्ती
उसे लोग कहते थे अश्वापती
वो बे-लोस पाक और मासूम था
मगर हक़-ए-पिदरी से महरूम था

◆◆◆

इबादत में मसरूफ़ रहता था वो
ख़ुदा से दिली राज़ कहता था वो

हवन की पवित्र जलाता था आग
वो गाता था उस पे सावित्री का राग

◆◆◆

अचानक उस आतिश से इक मह-लक़ा
नज़र आई राजा को और ये कहा,
''तुझे हक़ से बख़्शी गई बरतरी
तेरे घर में आएगी सावित्री

◆◆◆

जो होगी तेरे घर का रौशन दिया
वो फैलाए गी चार जानिब ज़िया।''
यही था दुआओं का उसकी असर
कि लड़की से रौशन हुआ उस का घर

उर्दू में जो मसनवियाँ लिखी गई हैं वो नरम लहजा और रवानी में बेमिसाल हैं। यह मसनवी भी उसी ज़मरे में शामिल होती है। शाइर को जबान और बयान पर कुदरत हासिल है। अशआर की रवानी बहता हुआ पानी के मानिंद है जो बड़ी शाइरी की निशानी है।

सरापा निगारी जिसको सख नख भी कहते हैं शाइर ने बहुत ही अच्छे तरीक़े से सूरत सीरत और अख़्लाक़ को सावित्री के पैकर में उतार दिया।

वो थी ख़ुब-रू और तनोमंद भी
वो दुख़्तर थी काहे को फरज़ंद थी
थी पाक और मुनज़्ज़ा ख़यालात में
लियाक़त, शराफ़त, इबादात में

◆◆◆

वो रौशन दिमाग़ और बेबाक थी
हर-इक बात में चुस्त-ओ-चालाक थी

शगुफ़ता था दिल उसके माँ-बाप का
न था उसमें ज़र्रा कोई पाप का

तमाम ख़ूबियाँ और औसाफ़ हमीदा बड़ी ख़ूबी के साथ शाइर ने चार शे'रों में मसनवी के बयान करके यह लिखा है कि राजा और रानी को बेटी की शादी की फ़िक्र हुई तो सावित्री ने कहा कि पहले मुक़द्दस मुक़ामात पर जाएगी, चुनांचे वो जंगलों से जब गुज़र रही थी तो उसने एक ख़ूसूरत जवान देखा और उसकी आशिक़ हो गई। सावित्री के आशिक़ का नाम सतवान था। जब वो घर वापस हुई और वालदैन को सतवान से शादी करने का इरादा बताई तो जो नजूमी नारद रिशी महल में था उसने बताया कि सतवान एक साल में मर जाएगा लेकिन सावित्री ने कहा मैं बहरहाल उसकी बीवी हूँ।

सावित्री ने सुनकर कहा ऐ पिता
जो होना था मुझ से वही हो गया
मैं जो कर चुकी हूँ रहेगा वही
मैं पत्नी हूँ उसकी, वो मेरा पती

बहरहाल शादी की रसूमात हो गईं। दूल्हे का बाप अंधा था जंगलों में ज़िंदगी बसर कर रहा था। सावित्री और सतवान मियां बीवी की ज़िंदगी गुज़ार रहे थे कि वो वक़्त आ गया कि मौत का फ़रिश्ता सतवान की रुह क़ब्ज़ करने आ गया।

शाइर ने जो मौत के फ़रिश्ते का हुलिया लिखा है दिलचस्प है।

सावित्री ने देखा जो सर को उठा
सियाह मर्द इक पास ही था खड़ा
बड़ी उसकी मूँछें बड़े सर के बाल
घनी उसकी दाढ़ी थी मुँह उसका लाल

◆◆◆

जो देखा उसे तो वो घबरा गई
कि है मौत का देवता वाक़ई

कहा उस फ़रिश्ते ने सावित्री
इसे छोड़ दे जो नहीं शय तेरी

◆◆◆

सावित्री ने पहले मिन्नत समाजत की कि वो शौहर की रुह को क़ब्ज़ न करे। लेकिन फ़रिश्ता मजबूर था। वो उसकी रुह लेकर चला लेकिन सावित्री भी उसके पीछे पीछे जाती रही। फ़रिश्ते ने कहा! दूसरी तीसरी कोई ख़्वाहिश है। सावित्री ने कहा मेरे ख़ुसर की बीनाई दे दे, फ़रिश्ते ने बीनाई लौटा दी, लेकिन वो सतवान की रुह उसके बदन में नहीं कर रहा था। सावित्री ने कहा मेरा घर पोतों से भरा रहे, फ़रिश्ते ने मंजूर कर लिया, तो सावित्री ने कहा बग़ैर बाप के बच्चे कैसे पैदा होंगे। आख़िर में शाइर ने सावित्री की नज़्म को यूँ तमाम किया है।

फ़रिश्ता ये सुनते ही घबरा गया
सावित्री को सतवान वापस मिला

◆◆◆

इक आवाज़ चारों तरफ से उठी
कि 'जय हो सदा तेरी सावित्री'
चली फिर हवा हौके आई वहाँ
कि थी लाश मुर्दा पती की जहाँ

◆◆◆

क़रीब इसके उसके आई जगाया उसे
जो गुज़रा था सच-सच बताया उसे
अभी फिर रहा था मैं अफ़लाक पर
जो उठ्ठा तो देखा कि हूँ ख़ाक पर।

◆◆◆

चली साथ लेकर वो सतवान को
किया याद दोनों ने भगवान को

जैसा कि हमने लिखा है यह अंग्रेज़ी से उर्दू में तजुर्मा है। श्री अरबिंदो ने चौबीस हज़ार अशआर जो बारह किताबों में तक़सीम हुए, बड़े तफ़सील से लिखा है। 'नैरंग' ने इस की फ़िक्री, अक़ीदती, फ़लसफ़ियाना मतालिब को इस लिए नजम नहीं कहा कि यह मतालिब हज़ारों अशआर के मतक़ाज़ी हैं। इस नज़्म से हमें यह रौशनी मिलती है कि हम इस तवील नज़्म को अंग्रेज़ी में पढ़ें और उसके पैयाम से ज़िंदगी की अब्दी कैफ़ियात और मुहब्बत-ओ-ख़ुशी को दुनिया में फैलाएं। सावित्री की फ़लक पर सीर और ऋषीयों अवतारों और महा-आत्माओं से मुलाक़ात और उनसे अज़्म इस्तक़लाल और बेदारी क़लब को हामिल करना इंसानियत की मैराज बताया गया है जिससे इंसान अमर हो जाता है और उसका वजूद माअबूद में हल होकर बक़ा का हिस्सा हो जाता है।

‘नैरंग’ के क़तआत में अख़्लाक़साज़ी

क़तआ उर्दू शाइरी की वो सिनफ़ है जिस में उमूमन एक मज़मून या एक वाक़िआ को क़सीदा या ग़ज़ल की उरुज़ी तरकीब में लिखते हैं। मतला के अलावा उमूमन क़तआ में कम अज़ कम चार शेर होत हैं। मगर दो शे’र का भी क़तआ हो सकता है क़तआ की जमा क़तआत है। अगरचे क़ताआ की ज़्यादा अश्आर पर पाबंदी नहीं। एक उम्दा कामयाब कुहना मश्क़ शाइर उस वक़्त क़तआ लिखता है जब उसे शे’री मज़मून में एक कैफ़ियत, अहसास, जज़्बा, वाक़िआ, मसायल ख़ारजी या दाख़ली मन्जूम करना होता है। इसलिए क़तआ में मौज़ुआत की फ़रावानी और मतालिब की बू-क़लमूनी होती है। क़तआ किसी भी बहर में रदीफ़ के साथ या रदीफ़ के बग़ैर लिखा जा सकता है। शाइरों की यह भी कोशिशें रहती हैं के क़तऐ में क़सीदे या ग़ज़ल का तमतराक़ और रंग न आ जाए। उर्दू के दौर-ए-क़दीम में इस सिनफ़ पर बहुत कम लिखा गया, लेकिन ज़माने के साथ साथ उसका इस्तेमाल बढ़ता गया। ख़ुसूसन जब से सफ़हात और क़तऐ का रिश्ता जुड़ा है हर तरफ़ उम्दा क़तआ निगारी हो रही है। और उमूमन क़तआत में अशआर की तादाद भी कम होती है। दौर-ए-क़दीम से तारीख़ी क़तआत लिखने का अमल जारी है जिस में हुरुफ़ के आदाद से तारीख़ निकाली जाती है। इस मुख़्तसर तम्हीद के बाद जब हम नंदलाल ‘नैरंग’ की शाइरी में क़तआत पर नज़र डालते हैं तो हमें पता चलता है कि वो एक कामयाब क़तआ निगार हैं जिनके क़तआत की तादाद तक़रीबन (180) के क़रीब है। ‘नैरंग’ ने कुछ क़तआत फ़ारसी में भी लिखे हैं। अमूमन उनके क़तआत में दो शे’र होते हैं। मौज़ुआत

और मतालिब की फ़रावानी क़तआत में नज़र आती है। बाज़ क़तआत को पढ़ने से यह मालूम होता है कि शाइर ने रुबाई की तरह क़तऐ में भी दूसरा शे'र या आख़िरी मिसरा मज़मून की मायनी आफ़रीनी या शे'री बालिदगी पर ख़त्म किया है। शाइर माहौल और समाज के मसायल से अलग नहीं रह सकता, ब-खुसूस ऐसा शाइर जिसकी शाइरी का मक़सद और महवर हुक़ूक़-ए-बशर जिसमें मसावात, इख़ुवत, एहतराम और इज़्ज़त-ए-नफ़स से ज़िंदगी गुज़ारने का मश्वरा और अमल की ताकीद का ज़िक्र हो।

हम 'नैरंग' के क़तआत को अदबी, इल्मी, तहज़ीबी, समाजी, सियासी, आज़ादी और शख़्सी मज़ामीन और मतालिब के तहत तक़सीम कर सकते हैं। यहाँ इस बात का ज़िक्र भी ज़रुरी है कि 'नैरंग' के क़तआत उर्दू और हिन्दी के बाज़ रोज़नामों और रिसालों में छपते थे और क़तआत से उनकी शिनाख़्त और शोहरत भी थी। इक्कीसवीं सदी के हमारे ग्लोबल विलेज में उर्दू शाइरों और उर्दू परस्तारों की नज़रें क़तआत, नज़्में और ग़ज़लियात ही हैं। 'नैरंग' क़तआ निगारी के कामयाब शाइर इसलिए भी हैं कि वो इख़्तिसार के रमूज़ से आशना और फ़न क गुर से वाक़िफ़ थे इसी लिए वो चार मिसरों में वो बात कह देते थे जो दूसरा शाइर पूरी नज़्म में भी नहीं कह पाता। 'नैरंग' के क़तआत की मज़मून आफ़रीनी से मुतास्सिर होकर उन्हें रेवाड़ी में किसी भी मोअतबर शख़्सियत के इस्तक़बाल में मदऊ करके ख़ैर मक़दम के अशआर पढ़वाए जाते, यही नहीं बल्कि उनके यह जाविदाना मिसरे ज़ेहनों के अलावा पत्थरों पर कुंदा करवाए जाते जिसकी ज़िंदा मिसाल मोहर सिंह के मुजस्समे के नीच अंग्रेज़ी अश्आर के साथ उनके उर्दू अशआर आज भी मौजूद हैं।

क़तआत के लिए 'नैरंग' ने उसी मेयार, लहजे और सादगी-ओ-तमतराक़ के अल्फ़ाज़ इस्तेमाल किये हैं, जिस से मज़्मून की तर्सील और इस के समझने में आसानी हो। उमूमन क़तआत की

जबान आमियाना और सादिक़ाना होती है।

यह बात ठीक है कि 'नैरंग' कोई फ़लसफ़ियाना या किसी ख़ास नज़रिया की प्रचार के आदमी न थे वो अपने क़तआत से अवामी दर्द को दूर करने का हुनर जानते थे, वो नफ़सियात से वाक़िफ़ थे। दर्द, तहम्मुल, गुरबत, मुहाजिरत, तंगदस्ती, तास्सुब, फ़िरक़ावारियत और हक़-ओ-हुक़ूक़ से महरुमी वग़ैरह चूंकि ख़ुद पर गुज़री हुई थी इस लिए उस की तर्जुमानी दिल की गहराईयों से करते थे। 'नैरंग' ने ख़ुद यह ज़हर का जाम पिया था इसी लिए उसकी तल्ख़ी और दर्दनाक तासीर उनके मिसरों से ज़ाहिर है।

इंसान जो हैवान-ए-नातिक़ है वो अख़्लाक़ और किरादार की बदौलत ही इंसान कहलाने का मुस्तहिक़ है। ज़ैल में चंद अख़्लाक़ी क़तआत मज़ीद किसी तफ़सील के पेश करते हैं।

जिससे न बुझे तशनगी ऐ हज़रत-ए-'नैरंग'
उस साग़र-ए-मय को कभी साग़र नहीं कहते
''काबा में मुसलमाँ को भी कह देते हैं काफ़िर
बुतख़ाने में काफ़िर को भी काफ़िर नहीं कहते''

◆◆◆

ज़िंदगी को हुबाब कहते हैं
और ज़माने को ख़्वाब कहते हैं
अपनी शोहरत के वास्ते 'नैरंग'
हम हर इक को ख़राब कहते हैं

वेद में ढुंढ न तू, और न क़ुरआन में देख
शक्ल-ए-अल्लाह, जो चाहे तो वो इंसान में देख
न-सहा रिंद ए ख़राबात की कुछ बात न कर
बढ़ कि नादान ज़रा अपने गिरेबान में देख

◆◆◆

तालीम की कमी है न अस्बाक़ की कमी
हम में नहीं है शोहरत-ए-आफ़ाक़ की कमी
यूँ तो हर इक चीज़ है हिंदुस्तान में
लेकिन कोई कमी है तो अख़्लाक़ की कमी

आज की शे'री तफ़हीम की ज़रुरत यह भी है कि उसे ज़मान और मकान के तक़ाज़ों के तहत और फिर उन तक़ाज़ों के अलावा भी उसकी मा'नी आफ़रीनी और ज़रुरत के अहसास पर रौशनी डाल कर की जाए। दुनिया सकड़ रही है। बनी आदम अगरचे एक दूसरे से मकानी फ़ासला रखते हैं लेकिन कभी मिले हुए रहते हैं और कभी फ़ासला न होने बावजूद जुदा रहते हैं इस लिए हमें एक दूसरे को जानने और समझने की ज़रुरत है और शाइरों के कलाम का तर्जुमा और तर्जुमानी इस दौर की अहम ज़रुरतों में शामिल है। इसी लिए शायद बज़्म-ए-अदब सरहदी मेमोरियल के मंसूबों में इस शाइर की आफ़ाक़ी इंसानी और आलमी पैग़ाम को दूसरी क़ौमों और जबानों में तर्जुमा करके पहुंचाने का काम भी शामिल है। शाइर ने हिंदुस्तान में अख़्लाक़ की कमी का गिला किया है। जो बहत सही है लेकिन यह बीमारी सारी दुनिया में फैली हुई है और उसके नफ़सियाती इलाज में शाइरी मोस्सिर हो सकती है और यहाँ जाकर शाइरी पयंबरी कहलाती है। न-क़द्री और इंसान की क़द्र-ओ-मंज़िलत का ख़सारा क़दीम मसअला है। जैसे कि 'नैरंग' ने इन क़तआत में लिखा है।

ज़िंदगानी में कई दौर बदलते देखे
देखे बदले हुए कुछ और बदलते देखे
रंग-ए-तक़दीर बदलने लगा जिसदम 'नैरंग'
यार-ओ-अहबाब भी फ़िल-फ़ौर बदलते देखे

◆◆◆

अफ़सोस किसे होता है गुलज़ार के अंदर
जब फूल खिलें वादी-ए-कोहसार के अंदर

ना-क़द्री-ए-आलम तो नई चीज़ नहीं है
यूसुफ़ का भी नीलाम था बाज़ार के अंदर

हमारे तब्सरे और मुख़्तसर तशरीह का एक मक़सद यह भी है कि 'नैरंग' के कलाम की रौशनी से इंसानियत के जौहर को ख़ुदसाज़ी और जहाँ साज़ी से मिला कर पेश करें। मुक़ाम, इंसान, एहतराम इंसान, हुक़ूक़-ए-इंसान और अज़मत-ए-इंसान से आशनाई हो तो इंसानियत की मंज़िल का पता होगा। और इस कठिन मसले के लिए ख़ुदी की तरबियत और तालीम की ज़रुरत है। 'नैरंग' भक्ति के राज़ से वाक़िफ़ थे इसीलिए तो कहते हैं।

सीरत ख़ास-ओ-आम देखी है
सब की तर्ज़-ए-कलाम देखी है
मुझको दुनिया ने गो नहीं देखा
मैंने दुनिया तमाम देखी है

अख़्लाक़ का मोअल्लिम बद-अख़्लाक़ और बद-किरदार कैसे हो सकता है। अख़्लाक़साज़ी ज़ात से शुरु होती है। यह नशा उस को चढ़ता है जिसने ख़ून-ए-जिगर पिया है यह वो सकून है जो ज़िंदगी के दर्द रंज और मुश्किलात से हासिल होता। जिन अफ़राद को जिस्मानी राहतें मयस्सर होती हैं वो आराम तो हासिल कर सकते हैं लेकिन उन्हें सकून नहीं मिलता। यह दुनिया चढ़ते सूरज की पुजारी है यहाँ ग़र्ज़मंदी ही एहतराम गुज़ारी की वजह है।

कोई झुक कर सलाम करता है
ज़ाहिरन एहतराम करता है
बे-ग़र्ज़ आजकल ज़माने में
कौन किससे कलाम करता है

◆◆◆

किस किस का शिकवा कीजिए किसका न कीजिए
बेहतर तो है यही कि जुबाँ वा न कीजिए

है कौन राज़दार जहाँ में ब-जुज़ ख़ुदा
चर्चा किसी के राज़ का असलन न कीजिए

इसी तरह के कई क़तआत 'नैरंग' के मिलते हैं। हम मज़मून की तवालत से बचने की ख़ातिर एक दो-मायने ख़ेज़ क़तओं पर बात ख़त्म करते हैं।

इस ज़माने के ख़ुराफ़ात को समझे कोई
इन बदलते हुए हालात को समझे कोई
रग़बत-ए-माल-ओ-मताअ से पहले
मसला-ए-मर्ग-ए-मुफ़ाजात को समझे कोई

◆◆◆

गुमराह मुझको राह बताएगा किस तरह
ज़ुल्मत पसंद रौशनी पायेगा किस तरह
जिस शख़्स को गिराँ हो किसी आदमी की बात
बार-ए-ग़म-ए-हयात उठाएगा किस तरह

◆◆◆

अल्लाह रे यक़ीन जो अहल-ए-जहाँ पे है
और ऐतेबार उनकी हर इक दास्ताँ पे है
अहल-ए-नज़र समझते हैं इसकी हक़ीक़तें
दिल में नहीं वो बात जो उनकी ज़ुबाँ पे है

‘नैरंग’ फ़हमी का मुख़्तसर त’आरुफ़

नंद लाल ‘नैरंग’ सरहदी उन शाइरों में शामिल हैं जिन्होंने अपनी ज़िंदगी के हर पहलू को अपनी शाइरी में उजागर किया है। ‘नैरंग’ ‘‘अर्ज़-ए-हाल’’ में लिखते हैं मेरी शाइरी मेरी ज़िंदगी का आईना है। जो कुछ कहता हूँ, ज़िंदगी के वाक़िआत की झलक इससे साफ़ नुमांयाँ होती है। हम इस तहरीर में यह कोशिश करेंगे कि सिर्फ़ क़तआत ही की मदद से उनकी शख़सियत और फ़िक्र पर रोश्नी डाल सकें चुनाचें नैरंग के बिखरे हुए क़तआत को मज़मून की नोअय्यत से जमा करके ‘नैरंग’ सरहदी को जानने की कोशिश होगी। हम इस तहरार में तशरीह और तफ़सीर से गुरेज़ इसलिए कर रहे हैं कि यह क़तआत आम फ़हम हैं और मज़मून में तफ़सील की गुंजाईश भी नहीं है।

मोहताज तेरे दर का हर इक शाह-ओ-गदा है
अंदाज़-ए-करम सबके लिए तेरा जुदा है
हर चीज़ अता की है कहीं अपने करम से
मुझ पे भी करम तेरा है, ग़म मुझ को दिया है

◆◆◆

आँखों के लिए ज़ौक़ ए नज़ारा ही बहुत है
और दिल के लिए ग़म का सहारा ही बहुत है
दुनिया की हर इक चीज़ अबस मेरे आगे
मेरे लिए रहमत का इशारा ही बहुत है

अर्श से आई निदा-ए-दिल-फ़िगार
शाइर-ए-बातिल परस्त ओ ना-बकार
मिदहत-ए-इंसाँ नहीं है शाइरी
शाइरी है मिदहत-ए-परवरदिगार

मुहाजिरत का दर्द, दर-बदर होने का ग़म जो तक़सीमे हिन्द के साथ उनकी ज़िंदगी में जमा हुआ, उसकी झलक इन क़तओं में महसूस कीजिए।

किये हम पे क्या क्या गुमां दोस्तों ने
मिटाया हमारा निशाँ दोस्तों ने
आसासा हमारा तो दोनो ने लूटा
मकाँ दुश्मनों ने ज़ुबाँ दोस्तों ने

◆◆◆

ऐसा तो कोई दौर नहीं गुज़रा नज़र से
तारीख़ के औराक़ उलट जाओ जिधर से

◆◆◆

इलाही! तेरी रहमत ख़ाना-ए-अग़यार पर बरसे
अंगूरों के वतन का दाना-ए-अंगूर को तरसे

◆◆◆

मंज़िल मुझे मिले न मिले इसका ग़म नहीं
मंज़िल की जुस्तजु में मेरा कारवाँ तो है
गो मैं नहीं चमन में ऐ अहल-ए-चमन तो क्या
अब तक भी उस चमन में मेरा आशियाँ तो है

◆◆◆

'नैरंग' की शाइरी में मुल्क के तक़सीम होने से जो फ़िरक़ावाराना वारदात, नफ़रत और ज़हरीली फ़िज़ा जो माहौल मे फैली इसमें इनकी

साबित क़दमी क़ाबिल-ए-तहसीन और तक़लीद भी है।

हिन्दू हूँ ज़्यादा न मुसलमान ज़्यादा
ने क़ायल-ए-नाक़ूस न अज़ान ज़्यादा
मैं दाम-ए-मज़हब में नहीं उलझा हूँ 'नैरंग'
इंसान मुझे समझे है इंसान ज़्यादा

◆◆◆

वाइज़ की नज़र-ए-तंग में काफ़िर था उन दिनों
काफ़िर यह जानता है मुसलमाँ हूँ आजकल
'नैरंग' बदल रहा है ज़माने का रंग ख़ूब
तर्ज़-ए-अदा-ए-नौ में ग़ज़ल ख़्वाँ हूँ आजकल

◆◆◆

हिन्दू नहीं समझे हैं मुसलमाँ नहीं समझे
सद हैफ़ कि वो मक़सद-ए-ईमाँ नहीं समझे
क्या अहल-ए-ज़माना से मैं वाक़िफ़ नहीं 'नैरंग'
अब तक भी जो इंसान को इंसाँ नहीं समझे

अगरचे कि जै़ल के क़तओं से उनकी परेशानियाँ, तन्हाईयाँ और मुश्किलें ज़ाहिर होती हैं लेकिन वो ना-उम्मीद नहीं बल्कि मेहनत और जद्दोजहद ही को अपना हथियार बनाकर ज़िंदगी फ़तह कर लेते हैं और उनके कलाम का यह पैग़ाम अवाम के लिए ईनाम है। चंद मुंतख़िब क़तआत देखिए।

सरज़मीन-ए-इश्क़ में सुबह ब-शक्ल-ए-शाम है
यह ज़मीं वो है जहाँ इरफ़ान-ए-रहमत आम है
हज़रत-ए 'नैरंग' न घबरा इश्क़ के अंजाम से
कामयाबी असल में नाकामियों का नाम है

इंक़लाब आ गया है पल भर में
कोई आता नहीं तसव्वुर में
मैं ही जाता हूँ सबके घर 'नैरंग'
कौन आता है अब मेरे घर में

◆◆◆

क़िसमत में नहीं आई कभी शाम-ए-तमन्ना
अफ़सोस मुझे मिल न सका जाम-ए-तमन्ना
अहबाब मेरी शक्ल से बेज़ार हैं'-नैरंग'
हर शख़्स मुझे कहता है ''नाकाम-ए-तमन्ना''

◆◆◆

बहुत ज़िंदगी में सुबह-ओ-शाम आए
मुक़द्दर में लेकिन न आराम आए
किसी ने भी हाल-ए-ग़म-ए-दिल न पूछा
मिरे ग़म ही अक्सर मेरे काम आए

◆◆◆

अगर हम सिर्फ़ क़तआत ही को मरकज़ बनाकर 'नैरंग' फ़हमी शुरु करें तो मालूम होगा कि उनकी फ़िक्र का एक बड़ा हिस्सा मुख़्तलिफ़ मौज़ुआत के तहत उसी एक सिनफ़ में इतना ज़्यादा है कि उनका मक़सद समझा जा सकता है। चंद क़तआत जिनमें कायनात का तजस्सुस और ज़िंदगी की हक़ीक़त आसान-ओ-सहल बयान में आशकार है यहाँ नक़ल किये जाते हैं।

कौन कहता है कि कुदरत के नज़ारों को न देख
बर-सर-ए-अर्ज़-ओ-समा फूल सितारों को न देख
चश्म-ए-रौशन तुझे गर हक़ ने अता की 'नैरंग'
देख अंजाम को आग़ाज़-ए-बहारों को न देख

शमा से यह कह रही है ख़ाक-ए-परवाना अभी
रात आख़िर हो गई बाक़ी है अफ़साना अभी
ख़त्म हो जाएगी इस के बाद तफ़सीर-ए-हयात
ज़िंदगी कहने को है इक और अफ़्साना अभी

◆◆◆

अब न पहली सी शान बाक़ी है
है ग़नीमत कि जान बाक़ी है
सब बलाएं तो देख लीं 'नैरंग'
मौत का इम्तिहान बाक़ी है

◆◆◆

हालत-ए-बेबसी से डरते हैं
और तेरी बे-रुख़ी से डरते हैं
लोग डरते हैं मौत से अक्सर
हम मगर ज़िंदगी से डरते हैं

◆◆◆

बहार-ए-ऐश कहाँ लज़्ज़त-ए-ख़िज़ाँ भी गई
चमन के साथ ही बुनियाद-ए-आशियाँ भी गई
किसी भी चीज़ के जाने का ग़म नहीं 'नैरंग'
जो रंज है तो यही है कि अब ज़ुबाँ भी गई

◆◆◆

हो गई जब से मय-नाब से उल्फ़त साक़ी
न रहे सज्दा-ओ-तस्बीह-ओ-इबादत साक़ी
पूछते क्या हो निशाँ रिंद ख़राबात का नाम
नाम 'नैरंग' है रेवाड़ी में सकूनत साक़ी

◆◆◆

मेरी हस्ती भी कोई हस्ती नहीं
पारसाई न मय-परस्ती है
दर्द-ओ-ग़म का हुजूम है दिल में
एक दुनिया यहाँ भी बस्ती है

◆◆◆

कुछ ताल्लुक़ नहीं 'नैरंग' को किसी फ़िरक़े से

नंद लाल 'नैरंग' फ़रज़ंद साधूलाल पेशावर के हिन्दू घराने में पैदा हुए और आज उनकी औलाद जो दुनिया के मुख़्तलिफ़ मुल्कों में है वो भी हिन्दू धर्म को मानने वाली है। अगरचे 'नैरंग' हिन्दू थे लेकिन मज़हबी तअस्सुब उन में न था। वो हर मज़हब और मज़हब के दीगर फ़िरक़ों को इज़्ज़त की नज़र से देखते और दूसरों को उसकी ताकीद भी करते थे।

उनका वसीयतनामा जो उर्दू अख़्बार ''हिन्द संदेश देहली'' में 25 मई 1974 ईसवीं को ''शाइर किसी ख़ास मज़हब का क़ायल नहीं होता'' शाया हुआ और उसकी एक कॉपी इस किताब में भी मौजूद है। 'नैरंग' लिखते हैं, ''मेरे फ़रज़ंद अगर हो सके तो ख़्वाहिश-ओ-अक़ाईद मंदरजा ज़ैल बातों पर अमल सरा हों ताकि मेरी रुह को तस्कीन नसीब हो।'' (1) मैं रज़ा का क़ायल हूँ और आह-ओ-बका को ख़िलाफ़-ए-अक़ीदा समझता हूँ। (2) मेरे बेटों में से कोई भी सर न मुंडवाए। सादा तरीक़े से लकड़ियों में रखकर आग लगा दें। कोई मन्तर वग़ैरह न पढ़ा जाए।(3) अगर चौथे रोज़ हड्डियाँ (फूल) चुनने की नौबत आए तो उन हड्डियों को बजाए हरिद्वार ले जाने के किसी इत्तिफ़ाक़ से दिल्ली जाकर अपनी मर्ज़ी से दरिया-ए-जमुना में इस तरह डाल दें जैसे कोई चीज़ डाल दी जाती है। (5) मरने के बाद किसी बाईस या किसी मज़हबी आदमी के कहने सुनने से मेरे नाम खाना पहुँचाना मेरे अक़ीदे के ख़िलाफ़ होगा। अगर कभी भूले से

मेरी याद आ जाए तो दुआ-ए-मग़फ़िरत फ़रमाकर मुझ पर अहसान करें।''

यहाँ इस बात का ज़िक्र भी ज़रुरी है कि 'नैरंग' के बेटों ने जैसा वसीयत में लिखा था उसी तरह किया। 'नैरंग' सरहदी ख़ुद अमली आदमी थे वो जैसा दूसरों को ताकीद करते अपने लिए भी वही करते थे। उन्होंने अपने बेटों के नामों के साथ इस्लामी तहज़ीब के नाम भी रक्खे थे। जैसे राजकुमार ख़ाँ, नरेश 'सलीम', सतीश शकील, अदीब 'इक़बाल' वग़ैरह। जैसा कि हमने लिखा है वो जब घर से बाहर जाते तो काली शेरवानी, शैनील की टोपी पहने रहते। वो कभी निज़ामुद्दीन औलिया की दरगाह में आरिफ़ साहब की दरख़्वास्त पर नाअतिया मुशायरे में शिरकत कर रहे हैं। उस नाअत का तज्ज़िया हमने इस किताब में भी किया है। और यहाँ इसकी तकरार की ज़रुरत नहीं। कभी 24 मार्च 1967 ईसवीं को जामिया मिलिया देहली में ख़ूबसूरत ग़ज़ल की हैय्यत में नज़्म सुना रहे हैं। आप भी इस नज़्म के चंद शेर सुनिये और सर धुनिये।

निगाह-ए-लुत्फ़-ओ-करम हो तो ईद होती है
नसीब दौलत-ए-ग़म हो तो ईद होती है

कभी जो आँख में नम हो तो ईद होती है
ख़ुशी ब-शक्ल अलम हो तो ईद होती है

उरुज-ए-इश्क़ यही है किसी के नाम के साथ
हमारा नाम रक़म हो तो ईद होती है

जबीन-ए-शौक़ ने सज्दे कहाँ कहाँ न किये
तुम्हारे दर पे जो ख़म हो तो ईद होती है

निशात शेर-ओ-सुख़न में यही तो है 'नैरंग'
जुबाँ हो ज़वूर-ए-क़लम हो तो ईद होती है

कितनी ख़ूबसूरत नज़म है जिसके सिर्फ़ चंद शे'र हमने यहाँ नक़ल किये हैं। कभी मुहर्रम के मौक़ा पर नवासा-ए-रसूल सल्ल॰ ईमाम हुसैन अलिहिस्सलाम की अज़मत में कह रहे हैं।

सज्दों का नाम है न नियाज़-ओ-दुआ का नाम
है असल बंदगी तो ख़ुदा की रज़ा का नाम
साबित किया है अहल-ए-जहाँ पर हुसैन ने
निकला ब-वक़्त-ए-क़त्ल भी लब से ख़ुदा का नाम

भारत में कई मज़हब के लोग बसते हैं इसलिए भी क़ौमी यकजहती मुल्क की तरक़्क़ी के लिए ज़रुरी है। 'नैरंग' ने हिन्दू धर्म और भारत के मिल्ली त्यौहारों पर ख़ूबसूरत नज़में लिखी हैं जो इस मजमुए में शामिल हैं और उनका ज़िक्र इस तहरीर में ज़रुरी नहीं इसके अलावा महाभारत की असातीरी हिकायत ''सावित्री'' (96) अशआर की ख़ूबसूरत मसनवी में पेश किया है। 'नैरंग' ने गुरु नानक साहब गुरु गोबिंद साहब, अहिंसा के पयंबर महावीर स्वामी और महर्षि दयानन्द के बारे में जो अक़ीदती नज़में लिखी हैं उससे 'नैरंग' की क़लबी वुसअत, इल्मियत, रवादारी और उन मज़हबी हस्तियों की अज़मत का सबूत मिलता है। यह तमाम नज़में इसी मजमुए में शामिल हैं हम आईंदा इनकी इक़्तिबासात पेश करेंगे। यह मतलब भी दिलकश है कि अल्लामा इक़बाल ने भी राम और नानक पर उम्दा तम्जीदी नज़में ''बांग-ए-दरा'' में लिखी हैं।

'नैरंग' के इस कुलियात ''तामीर-ए-बक़ा'' में गुरु नानक पर तीन नज़में और गुरु गोबिंद सिंह पर एक नज़म नज़र आती है।

अ : गुरु नानक..... यह नज़म मुसद्दस की शक्ल में पाँच बंदों में लिखी गई है। यहाँ गुरु नानक की तालीमात का असर उस

ज़माने के बिगड़े माहौल को सुधारने के लिए शाइर ने सलीस और शगुफ़ता लहजे में नज़्म किया है।

उफ़क़-ए-हिन्द पे ज़ुल्मत के निशाँ थे ज़ाहिर
यानी इस बाग़ में असार-ए-खिज़ाँ थे ज़ाहिर
हक़-परस्ती की जगह वहम-ओ-गुमाँ थे ज़ाहिर
जिस कदर ज़ुल्म थे सारे वो यहाँ थे ज़ाहिर
तू यहाँ आया तो फिर हिन्द का तारा चमका
ज़ुल्मतें दुर हुईं बख़्त हमारा चमका

गुरु नानक से मुख़ातिब होकर शाइर कह रहा है तेरी तालीमात से लोग बहरावर हैं। तू बंदों से प्यार करता है, उनके ग़म दूर करता है। 'नैरंग' कहते हैं जब भी ग़मगीनी में तुझको आवाज़ दी मुझे तूफ़ान-ए-ज़िंदगी में किनारा मिल गया।

तेरी तालीम का दुनिया पे असर है अब भी
देख! मस्जूद-ए-ख़लाइक़ तेरा दर है अब भी
अपने बन्दों पे तेरी ख़ास नज़र है अब भी
तुझपे रहमत की नज़र शाम-ओ-सहर है अब भी
दिल-ए-ग़मगीं से तुझे जब भी पुकारा मैं ने
पा लिया बहर-ए-मुहब्बत का किनारा मैं ने

हिन्द में नानक ने ग़फ़लत से लोगां को जगाकर सीधे रास्ते पे चलाया। वहम और गुमान को निकाल कर यक़ीन उनके दिलों में भर दिया। तौहीद की ख़ुश्बू से गुलिस्तान-ए-हिन्द मोअतर किया। अख़्लाक़ साज़ी से देवों को इंसान बना दिया।

ख़्वाब-ए-ग़फ़लत से जहाँ भर को जगाया तू ने
रास्ता सिदक़-ओ-मुहब्बत का दिखाया तू ने
सफ़हा-ए-दहर से बातिल को मिटाया तूने
दर्स-ए-तौहीद ज़माने का पढ़ाया तूने

वहम का नाम ज़माने से मिटाकर छोड़ा
देव ज़ादों को भी इंसान बनाकर छोड़ा

गुरु साहब की तालीम-ओ-तरबियत से मुल्क में फैले ऊंच नीच के फ़र्क़ नुमायाँ हुए, उन्होंने हक़परस्ती का इस अंधेरे माहौल में चिराग़ जलाया।

ऊँच और नीच का सब फ़र्क मिटाया तू ने
और ग़रीबों को सर-ए-अर्श बिठाया तू ने
हक़ परस्ती का सबक़ हमको पढ़ाया तू ने
एक ओंकार की मशअल को जलाया तू ने

ब : दूसरी उम्दा मगर मुख़्तसर मसनवी गुरु नानक साहब पर तेरह (13) अशआर की मिलती है जिसमें तौहीद को महवर बनाकर मयख़ाने की फ़िज़ा में उम्दा नज़्म निगारी की है। गुरु साहब की तालीमत की कशिश और रौशनी को ज़माने की ज़रुरत और बीमार ज़ेहनों की शिफ़ा के लिए लाज़िम बताया है। हम इस मसनवी के दूसरे अशआर जिस पर मयख़ाना वहदत का असर है बग़ैर तशरीह के बयान करते हैं।

तूने फूंकी है दिलों में वो हवा तौहीद की
झूमती है नशा-ए-हस्ती में हर गुल की कली

नाम-ए-नक़्श दो जहाँ मिट जाए पर बाक़ी है तू
इस जहाँ के मय-कदे का एक हसीं साक़ी है तू

पी रहे हैं बाद-ए-तौहीद के जाम-ओ-सुबू
सच तो यह है सारे रिंदों को फ़क़त साक़ी है तू

चल रहा है दौर मय हर हर घड़ी शाम-ओ-सहर
ऐसी मस्ती है कि रिंदों को नहीं इसकी ख़बर

चढ़ के मस्ती फिर न उतरे दौर-ए-पैमाना रहे
कैफ़ियत रिंदों पे तारी वज्द-ए-मस्ताना रहे

मुझको 'नैरंग' वो अता कर मस्ती जाम-ओ-सुबू
जिसके हर हर सांस से निकले सदा-ए-तू ही तू

ज : 'नैरंग' की तीसरी नज़्म गुरु नानक पर ''इज़हार-ए-अक़ीदत'' के उन्वान से मिलती है। जो मुरद्दीफ़ ग़ज़ल की हैय्यत में आठ अशआर पर मुबनी है। मतला है

हमारी क़ौम के इक क़ाफ़िला सालार नानक थे
न था जिसका कोई वाली उसी के यार नानक थे

अल्लामा 'इक़बाल' ने अपनी नज़्म नानक में लिक्खा थाः

फिर उठी आख़िर सदा तौहीद की पंजाब से
हिंद को इक मर्द-ए-कामिल ने जगाया ख़्वाब से

'नैरंग' की इस नज़्म का भी जौहर नानक की रहबरी, दर्स वहदत, तालीमात की रौशनी और मुहब्बत है। चंद मिसरे ही हमारे बयान के लिए काफ़ी हैं।

हमारी क़ौम के इक क़ाफ़िला सालार नानक थे

◆◆◆

मगर इस रास्ते के रहबर होशियार नानक थे

◆◆◆

मय वहदत के रंगीं जाम से सरशार नानक थे

◆◆◆

मलायक की नज़र में काशिफ़-ए-असरार नानक थे

◆◆◆

ज़रुरत थी कि दुनिया को कोई बेदार तब करता
न आया काम जब कोई अलम बरदार नानक थे

द : 'नैरंग' सरहदी ने गुरु गोबिंद सिंह पर भी एक चार बंदों में

मुसद्दस नज़्म लिखी और उनको ख़िराज-ए-अक़ीदत पेश किया। उन्होंने मुश्किल वक़्त में मुल्क और क़ौम की ख़िदमत की। हमारे सामने तारीख़ी हक़ायक़ मौजूद हैं इसी लिए हम चंद अशआर इन बंदों के पेश करते हैं।

मरहबा ऐ कौम के सालार-ए-आज़म मरहबा
तेरे कदमों पर हुए सात आसमाँ ख़म मरहबा

◆◆◆

तूने अपनी कौम की मुश्किल को आसाँ कर दिया
मोरिक-ए-नाचीज़ को दम में सुलेमाँ कर दिया

◆◆◆

"मेरी चिड़ियों में अभी तक जज़्बा-ए-जांबाज़ है"
यह सदा तेरी नहीं, यह ग़ैब की आवाज़ है
रुह आज़ादी की फूंकी तूने मुर्दा जान में
आ गई परवाज़ मुश्त-ए-ख़ाक को इक आन में

◆◆◆

कारवान-ए-राह-ए-गुमकरदा का तू सरदार है
तेरी इस तौसीफ का दुश्मन को भी इकरार है
सर-ज़मींन हिन्द पर बारान-ए-रहमत हो गई
ज़िंदगी तेरी सरासर ख़ैर-ओ-बरकत हो गई

◆◆◆

इस जहाँ पर जबकि तारी हालते-सैलाब थी
कश्ती-ए-हिन्दोस्ताँ जब मायल-ए-ग़र्काब थी
अज़्मत-ए-कौमी कोई दम में ख़याल-ओ-ख़्वाब थी
रहमत-ए-हक पर्दा-ए-ज़ुल्मत में तब बेताब थी

◆◆◆

डूबती कश्ती को वो तेरा सहारा याद है
तेरे बच्चों की शहादत का नज़ारा याद है

ह : 'नैरंग' सरहदी की शाइरी में ''अदब बराये अदब'' और ''अबद बराये हदफ़'' दोनों नज़र आते हैं। वो अमन और मुहब्बत के पुजारी हैं। वो मज़लूमों, सितमकशों, ग़रीबों और कमज़ोरों के हामी हैं। उन्हें हर उस शख़्स से मुहब्बत है जिसके अमल और क़ौल में इश्क़-ओ-मुहब्बत हो। इसीलिए उन्होंने हिंदुस्तानी अवाम के मज़ाहिब पर उम्दा शाइरी की है। 'नैरंग' क्योंक अहिंसा के हामी और सपूत थे इसीलिए वो कभी अहिंसा के पयम्बर महावीर स्वामी, कभी महर्षि दयानन्द और कभी गांधी जी पर अक़ीदती फूल निछावर कर रहे थे। 'नैरंग' की नज़्मों में हमें महावीर स्वामी पर दो नज़्में और महर्षि दयानन्द पर एक नज़्म और दो क़तआत भी मिलते हैं।

व : अहिंसा के पयंबर महावीर स्वामी के उन्वान से मसद्दस की शक्ल में चार बंदों पर मुशतमिल दिलकश नज़्म है। हम यहाँ चंद इस नज़्म के मिसरे और शे'र चुनकर गुलदस्ते की शक्ल में पेश करते हैं ताकि नज़्म के रस और जस का पता चल जाए। याद रहे कि एक पूरी अलैहदा नज़्म भी अहिंसा पर 'नैरंग' ने रक़म की है जो इसी मजमुए में शामिल है।

ऐ ज़माने को अहिंसा के दिखाने वाले
गुमरहों को भी रह-ए-रस्त पे लाने वाले

◆◆◆

तू तो वो है कि जिसे हक़ का पयम्बर कहिए
हुस्न-ए-यूसुफ़, दम-ए-ईसा या डिगंबर कहिए

◆◆◆

वाक़ई हक़-ओ-सदाक़त का महावीर है तू
है जहाँ ख़्वाब अगर, ख़्वाब की ताबीर है तू

◆◆◆

आज भी तेरे उसूलों पे है दुनिया का निज़ाम
हो गए जोर-ओ-तशद्दुद तो जहाँ में नाकाम

◆◆◆

नूर-ए-रेज़ी रहे दुनिया में तेरे नाम के साथ
कैफ़ तारी हो जहाँ वालों पे हर जाम के साथ

ज़ : महावीर स्वामी की पैदाइश पर ''वीर जयन्ती'' के उन्वान से ग़ज़ल की हैय्यत में 'नैरंग' के मज्मुए कलाम में ग्यारह अशआर की उम्दा क़सीदा नुमा नज़्म मिलती है जिसकी तम्हीद दुनिया की रीत और रिवायत से जोड़ी गई है।

चमन की आब-यारी को हज़ारों बाग़बाँ आए
निज़ाम-ए-गुलिस्ताँ बदले निगहबान-ए-जहाँ आए

◆◆◆

परेशानी कभी आई, कभी अमन-ओ-अमाँ आए
बहारों हो गईं रुख़्सत तो सामान-ए-ख़िज़ाँ आए

◆◆◆

सियासत ने बदल डाला है अक्सर अहल-ए-ईमाँ को
बसा-औक़ात झगड़ें में मज़ाहिब दरमियाँ आए

◆◆◆

कभी सूरत बनाई ज़ुल्म ने महमूद-ओ-नादीर की
गुबार-ए-आतिशीं के कारवाँ दर कारवाँ आए

ख़ू-सूरत तश्बीब या तमहीद के बाद करके गुरेज़ कहते हैंः

इसी तारीक आलम में न आई काम जब ताक़त
पैयाम-ए-मेहर-ओ-उल्फ़त लेके वीर-ए-मेहरबाँ आए

◆◆◆

झुका दी सबकी गर्दन एक शमशीर सदाक़त से
मिटा जौर-ओ-सितम, मेहर-ओ-मुहब्बत कामराँ आए

◆◆◆

झुकी जाती है अहसानों से गर्दन अहल-ए-आलम की
जुबाँ पर जब कभी ऐ वीर तेरी दास्ताँ आए

ह : इस तहरीर के आख़िर में हम 'नैरंग' के ममदूह महर्षि दयानन्द के बारे में शाइर ने जिन ख़्यालात और जज़्बात को शे'रों में ढाला है पेश करते हैं। यहाँ दो क़तआत और एक दस अशआर की ग़ज़ल की हैय्यत में जो नज़्म है नक़ल करते हैं।

ऐ महर्षि ज़माने में तू शान-ए-हिन्द है
और जिस्म पाक-ए-हिन्द में तू जान-ए-हिन्द है
तहज़ीब-ए-असूर नौ के गुलिस्ताँ के बाग़बाँ
शादाब तेरे दम से गुलिस्ताँ-ए-हिन्द है।

क़तआ

कुव्वत-ए-क़ल्ब-ओ-जिगर, रुह-ए-बदन, जान-ए-वतन
फ़ख़्र है ज़ात पे तेरी ऐ निगहबान-ए-वतन
तेरी तालीम का है आज असर यह 'नैरंग'
रश्क-ए-सद रंग-ए-बहाराँ है गुलिस्तान-ए-वतन

'नैरंग' इन तहनीयती अक़ीदती नज़्मों को क़सीदे की तरह तमहीद या तश्बीब से सजा देते हैं। वो ज़मानाजब यह बड़े लोग पैदा हुए तारीकी जहालत और मायूसी का दौर था। फिर उन ऋषियों, क़ायदों, अवतारों, पैगंबरों के क़ौल-ओ-अमल, मुसलसल मेहनत और खुदाकारी से सहरा गुलशन में तब्दील हो गया। रौशनी होते ही अंधेरे ग़ायब हो जाते हैं।

नग़मा-ए-ज़ाग़ से मानूस थे गोश-ए-इंसाँ
बुलबुल-ए-बाग़ का कोई भी तलबगार न था

◆◆◆

इक ज़माना था यहाँ जिन्स बुताँ-ए-का तालिब
जिन्स-ए-वहदत का मगर कोई ख़रीदार न था

रहबर-ए-हिन्द तेरा आना मुबारक सबको
जादा-ए-दूरी-ए-मंज़िल तुझे दुश्वार न था
है तेरा दर्स ज़माने को हिदायत का चिराग़
तुझ सा बढ़कर तो कोई मतला-ए-अनवार न था

◆◆◆

क्यों न हो तेरे लिए वक़्फ़ कलाम-ए-'नैरंग'
तेरा बंदा था कोई शायर-ए-अग़यार न था

फ़ैज अहमद 'फ़ैज'
और 'नैरंग' सरहदी

फ़ैज़ अहमद 'फ़ैज़' के बाज़ असातज़ा जिनसे वो बाज़ औक़ात अशआर की इस्लाह की ख़ातिर मुराजआ करते थे और बाज़ वक़्त ताकीद भी करते थे कि देखो यह नज़्म चिराग़ हसन हसरत का दिखा लेना वग़ैरह जुमले सुनने में आते हैं अगरचे हम सब जानते हैं कि फ़ैज़ ने रस्मी तौर पर किसी की शगिर्दी अख़्तियार नहीं की थी। उसी तरह उनके शागिर्दों का भी पता लगाना मुश्किल है। लेकिन हमारे पास दस्तावेज़ की शक्ल में यह मौजूद है कि नंदलाल 'नैरंग' सरहदी उनके शागिर्द थे। फ़ैज़ अहमद फ़ैज़ और 'नैरंग' सरहदी हमउम्र थे। दोनों 1912 ईसवी में पैदा हुए। फ़ैज़ सियालकोट में और 'नैरंग' डेरा इस्माईल ख़ान के एक छोटे से क़स्बे मंधरा में पैदा हुए। 'नैरंग' ''मेरी शाइरी'' में लिखते हैंः

> पेशावर पहुँचकर मैंने ब-क़ायदा ग़ज़ल, क़तअ, रुबाई, मुख़मस, मुसद्दस वग़ैरह इस्नाफ़-ए-सुख़न में तबअ आज़माई की। मेरी ख़ुश-क़िस्मती से जनाब फ़ैज़ अहमद ख़ान साहब 'फ़ैज़' से मुझे मुलाक़ात का मौक़ा नसीब हुआ। आंहज़रत सुर्ख़-पोश लीडर ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ान के पैरो थे। पश्तो, फ़ारसी और उर्दू में उनका कलाम बहुत बुलंद पाया है। मैंने अपना कलाम उनको दिखाया। वो मेरी जुबान-दानी

को देख मुतजस्सिस हुए और मामूली इस्लाह के बाद मेरा कलाम वापिस देकर फ़रमाया कि ''आप का कलाम किसी इस्लाह का मोहताज नहीं, बेखटके लिखा कीजिए।'' मैं उनकी इजाज़त से कभी कभी अपने कलाम का कुछ हिस्सा जहाँ शक होता दिखाता। और इस्लाह कुबूल करता। इस वक़्त साहब मौसूफ़ हयात हैं ख़ुदा उनकी उम्र दराज़ करे। चूंकि हम सबके ताल्लुक़ात सूबा सरहद के सुर्ख़-पोश लीडर रहनुमा-ए-आज़म मुहिब्बे वतन ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ान साहब से बराहे रास्त रहे हैं। इसलिए वहाँ के तमाम शुअरा और उदबा अपने नाम के साथ सरहदी लिखना और इस निस्बत से ख़ान कहलाना बाइस-ए-फ़ख्र समझते हैं।

इस मुस्तनद तहरीर से यह भी मालूम हुआ कि फ़ैज़ पश्तो में भी अच्छी ख़ासी शाइरी करते थे। अगरचे हमारे दरमियान उनके सिर्फ़ फ़ारसी और उर्दू मन्ज़ूमात मौजूद हैं।

'नैरंग' सरहदी ने जो अपनी मन्ज़ूम सवानेह हयात मुसद्दस की शक्ल में छत्तीस (36) बंदों में लिखी है जो फ़ारसी और उर्दू में है और हमने इस सवानेह हयात को उन्ही के ख़ुश-ख़त में इस मज्मुए में शामिल किया है, फ़ैज़ को एक बंद में बहुत एहतराम से ख़ूबसूरत ख़िराज-ए-तहसीन पेश करते हैं।

हम पहले फ़ारसी का बंद लिखते हैं फिर इसका सलीस तर्जुमा दर्ज करेंगे।

मेरा शर्फ़-ए-तलमुज़शुद ब क़दम-ए-'फ़ैज़' अहमद ख़ाँ
ब-दो ज़ानू निश्स्ता अम ब पेश-ए-ख़िदमत-ए-ईशाँ
रुजुअ ख़िदमतश यक साल करदम बा हमा याराँ
फुनून-ए-शाइरी आमुख़्ता अम बेश अज़ दिगराँ

नमी दानम कि अहसानिश चिगूना बर जुबाँ आरम
न तर्ज़े गुफ़्तगु दारम कि आँ रा दरमियाँ आरम

तर्जुमाः-

मुझे फ़ैज़ अहमद ख़ान से शागिर्दी का शर्फ़ मिला। मैंने उनके सामने शागिर्दी का ज़ानू तह किया, मैं एक साल तक दोस्तों के हमराह उनकी ख़िदमत में जाता रहा। शाइरी के फ़न को दोस्तों की निस्बत मैंने उन से ज़्यादा सीखा। मुझे नहीं मालूम कि उनके अहसान को किस तरह से जबान से अदा करुं। न मुझे वो गुफ़्तगू करने का तरीक़ा आता है जिस से उनका अहसान अदा कर सकूं।

'नैरंग' सरहदी के कलाम में उन्ही के हाथ की लिखी हुई ग़ज़ल मिलती है जो उन्होंने फ़ैज़ के मशहूर शेर की बेहर, क़ाफ़िये और रदीफ़ में 9 अशआर में लिखी है। फ़ैज़ का शे'र है

वो बात सारे फ़साने में जिसका ज़िक्र न था
वो बात उनको बहुत नागवार गुज़री है

उस्ताद के मिसरे पर शागिर्द की ग़ज़ल के चंद अशआर देखिए:

जिधर भी बर्क़-ए-तजल्ली-ए-यार गुज़री है
निगाह-ए-शौक उधर बार-बार गुज़री है

◆◆◆

किये हैं फ़र्त-ए-मुहब्बत से सैकड़ों सज्दे
जहाँ ख़याल में तस्वीर-ए-यार गुज़री है

◆◆◆

वही है आँख हक़ीक़त में आदमी के लिए
शब-ए-फ़िराक में जो अश्क-बार गुज़री है

◆◆◆

न जाने कह दिया क्या बेख़ुदी के आलम में
''वो बात उनको बहुत नागवार गुज़री है''

◆◆◆

अज़ीज़ क्यूँ न हों रंज-ओ-ग़म-ओ-अलम 'नैरंग'
इन्हीं में ज़िंदगी-ए-ख़ाकसार गुज़री है

यही नहीं बल्की 'नैरंग' की ग़ज़लियात को ख़िराज-ए-अक़ीदत पेश करते हुए ये दो शे'र भी मिलते हैं:

हज़रत-ए-फ़ैज़ की सोहबत का असर है 'नैरंग'
साहिब-ए-सैफ़ भी इक अहल-ए-क़लम होके रहा

◆◆◆

फ़ैज़-ए-क़दम से जिनके में 'नैरंग' फ़ैज़याब हूँ
मेरे दिल-ए-नियाज़ में उनका मुक़ाम और है

◆◆◆

غزل

عزیز کیوں نہ ہوں رنج و غم و الم نیرنگ
انہیں میں زندگی خاکسار گزری ہے

‘नैरंग’ सरहदी
कामयाब तज़मीन निगार

कुदरत ने ‘नैरंग’ सरहदी को ज़िंदगी गुज़ारने के लिए सिर्फ़ इकसठ बासठ साल दिये। चुनांचे उन्होंने कुन्बा-परवरी, मआशी मसाइल, तंगदस्ती, मुहाजिरत की सओबतें सब कुछ झेल कर भी शाइरी के सहीफ़े में वो दस्तावेज़ें जमा कर दीं जो उन्हें अमर करने के लिए काफ़ी हैं। यह सच है कि जब कभी हम इस दुनिया से कूच करेंगे बहुत से काम अधूरे और न मुकम्मल रहेंगे। ‘नैरंग’ सरहदी के कलाम में चंद तज़मीनात नज़र आती हैं। अगर उन्हें मौक़ा मिलता तो ज़रुर कई तज़मीनात लिखते यहाँ हम सिर्फ़ एक क़तआ और दो ग़ज़लों के अशआर पर जो उनकी तज़मीनात हैं, गुफ़्तगू करेंगे।

तज़मीन वो शेर या नज़्म है जिसमें शाइर किसी शाइर के मिसरे या शे’र पर अपने मिसरे जोड़ देता है। ‘नैरंग’ ने असतज़ा में ख़्वाजा मीर दर्द और मिर्ज़ा ग़ालिब की ग़ज़ल के चंद मुंतख़िब शे’रों पर तज़मीन बांधी की है। उन्होंने बिस्मिल सईदी की ग़ज़ल के शे’र पर दो मिसरे इज़ाफ़ा करके क़तआ बना दिया।

जिससे न बुझे तशनगी ऐ हज़रत-ए-‘नैरंग’
उस साग़र-ए-मय को कभी साग़र नहीं कहते
‘‘काबा में मुसलमाँ को भी कह देते हैं काफ़िर
बुतख़ाने में काफ़िर को भी काफ़िर नहीं कहते’’

(बिस्मिल सईदी)

तज़मीन निगारी आसान नहीं यहाँ कोहनामश्क़ी और क़ादिरुल

कलामी की ज़रुरत इसलिए भी ज़रुरी है कि एक कामयाब तज़मीन में शाइर मायनी आफ़रीनी के साथ तज़मीन किया गया शे'र मज़मून के असर को दो आतिशा कर दे और सुनने वाला तज़मीन के दोनों अशआर के मुक़ाम की बुलंदी का अहसास कर सके। 'नैरंग' ख़ुद भगत थे उनकी शाइरी में भक्ति शाइरी की तमाम क़द्रें नुमायाँ हैं। वो तसव्वुफ़ के दिलदादा थे उनकी ग़ज़लों, नज़्मों, क़तओं और मसनवी में इशारे मौजूद हैं।

'नैरंग' सरहदी ने ख़्वाजा मीर 'दर्द' की मशहूर ग़ज़ल के तीन शे'रों पर मख़्मस में तज़मीन की और इस तज़मीन का नाम ''नग़मा-ए-तौहीद'' रखा। यहाँ यह भी ज़िक्र ज़रुरी है कि 'नैरंग' वहदत के क़ायल थे और फ़लसफ़ा-ए-तौहीद पर यक़ीन रखते थे। हम यहाँ तीनों बंद को इसलिए भी पेश कर रहे हैं कि 'नैरंग' के मिसरों की ग़िनायत, मिसरों में क़ाफ़ियों की हलावत और अलफ़ाज़ की बंदिश वग़ैरह ऐसे जोड़े गए हैं कि पैवंद मुश्किल से नज़र आता है। चूंकि ख़्वाजा दर्द की ग़ज़ल में अरबी और फ़ारसी के अल्फ़ाज़ और तराकीब का जाह-ओ-चश्म है। इसी लिए 'नैरंग' ने भी इसी रंग में तज़मीन को रंग दिया जिसको देखकर उर्दू का परस्तार हैरत से दंग हो जाता है। तीनों बंद मुलाहिज़ा करें।

वो सर जो मुनकिर हो तेरे लुत्फ़-ओ-करम का
उस सर पे चले वार तेरी तेग़-ए-सितम का
मुमकिन नहीं तहरीर में हो ज़िक्र निअम का
''मक़्दूर हमें कब तेरे वस्फ़ों के रकम का
हक्का कि ख़ुदावंद है तू लौह-ओ-क़लम का''

◆◆◆

कुन कहने से आलम को बपा तूने किया है
और ख़ुद तु उसी गुलशन-ए-हस्ती में छिपा है

हैरान हूँ रहने की तेरे कौन सी जा है
''इस मसनद-ए-इज़्ज़त पे कि तू जलवा नुमा है
क्या ताब गुज़र होवे तअक़्कुल के कदम का''

◆◆◆

होते हैं तजल्ली से तेरी नूर के मस्कन
शाहों के शबिस्तान गदाओं के नशेमन
दोनों हैं करमयाब वो है दोस्त कि दुश्मन
''बसते हैं तेरे साए में सब शैख़-ओ-ब्रह्मण
आबाद तुझी से तो है घर दैर-ओ-हरम का''

◆◆◆

अगरचे कि इस तज़मीन में बहुत से शे'री हुस्न हैं लेकिन हम सिर्फ़ यहाँ तराकीब और मिसरों में तज़ाद और मायनीख़ेज़ अल्फ़ाज़ पर तवज्जोह मरकूज़ करते हैं। लुत्फ़-ओ-करम, तेग़-ए-सितम, ज़िक्र-ए-नईम, नूर का मसकन, गदाओं के नशेमन के साथ शाह-ओ-गदा, दोस्त दुश्मन और मुतरादिफ़ अल्फ़ाज़ की तरतीब ने शे'र को सोने पे सुहागा कर दिया।

'नैरंग' ग़ालिब के आशिक़ थे। उनके फ़रज़ंद नरेश सलीम सरहदी कहते हैं हमेशा ग़ालिब के दीवान का मुताअला करते रहते। उनके घर में बड़ी फ़्रेम वाली तस्वीर ग़ालिब की थी वही उनके मुशाइरों और शेरी नशिस्त की ज़ीनत भी थी। 'नैरंग' ने ग़ालिब की छोटी बहर की मायने ख़ेज़ ग़ज़लों के अच्छे शेरों पर मख़्मस की हैय्यत में तज़मीन किया है। हम जानते हैं इस ग़ज़ल में ग़ालिब की ज़राफ़त की चाशनी भी है। जिसके मज़े को 'नैरंग' ने अपने मिसरो में भी भर दिया है यानि जैसा शेर उसी तरह की तज़मीन भी की।

मतले का बंद देखिएः

जोश-ए-श्बाब में उसे सरशार देखकर
ज़र्रे में एक हुस्न का अम्बार देखकर

पेश-ए-निगाह मतला-ए-अनवार देखकर
''क्यूँ जल गया न ताब-ए-रुख़-ए-यार देखकर
जलता हूँ अपनी ताकत-ए-दीदार देखकर।''

◆◆◆

अब तंगी-ए-ज़माना से उकता गया हूँ मैं
सामान-ए-लुत्फ़-ए-दश्त में कुछ पा गया हूँ मैं
हर एक संग-ए-राह को ठुकरा गया हूँ मैं
''इन आबलों से पाँव के घबरा गया हूँ मैं
जी ख़ुश हुआ राह को पुर-ख़ार देख कर''

''नैरंग'' ग़ालिब के मक़्ते के शे'र पर आख़िरी बंद में ग़ालिब की अज़्मत और उनके कमाल का इक़रार उनकी शाइरी में जमालियात की रौशनी से करते हुए तज़्मीन को नूरानी बना देते हैं।

'नैरंग' ये है ज़िक्र उस इक बा-कमाल का
आशिक वो एक साहिब-ए-हुस्न-ओ-जमाल का
तालिब रहा वो उम्र भर उस के विसाल का
''सर फोड़ना वो 'ग़ालिब' शोरीदा हाल का
याद आ गया मुझे तेरी दीवार देख कर।''

‘नैरंग’ की क़लबी वारदात शे’रों की जबानी

शाइर-ए-हिंदुस्तान होना ख़ुदा का क़हर है
‘नैरंग’

‘नैरंग’ सरहदी ने ख़ुद लिखा था कि ‘‘मेरी शाइरी मेरी शख़्सियत और ज़िंदगी का आईना है।’’ उनकी आप बीती, जग बीती इसलिए भी है कि वो आज बहुत से लोगों की नुमाइंदगी कर रहे हैं। उन्होंने दिल में ज़्यादा न रखा बल्कि सब फ़िज़ाओं में बिखेर दिया। मुहाजिरत के बाद उन्होंने एक अच्छे शे’र की अहसासाती, जज़्बाती और दाख़िलियत से ममलू नज़्म ‘‘नज़र-ए-अहबाब’’ लिखी है और इसी नज़्म में जिस तरह से उन्होंने कहा था, आख़िरी उम्र तक अपनी ज़िंदगी का अफ़साना दुनिया को सुनाते रहेंगे। चुनांचे कभी पाँच बंद मुसद्दस की नज़्म अपनी शरीक-ए-हयात पुष्पा के लिए लिखी, कभी ‘नैरंग’ अस्पताल में कभी दिल का गुबार क़तआत से धो डाला। हम शाइर की नज़्म से पहले नज़र-ए-अहबाब पेश करते हैं जो डेरा इस्माईल ख़ान से रेवाड़ी का सफ़र या दूसरे अल्फ़ाज़ में उनकी ज़िंदगी का सफ़र है। तमाम नज़्म रोज़मर्रा, सादा सलीस पैराए में है इसलिए किसी मज़ीद तशरीह और तब्सरे के यहाँ नक़ल करते हैं।

सुनाएँ किसे जाके अपनी ज़ुबाँ से
निकाले गए किस तरह हम मकान से

◆◆◆

अभी याद ताज़ा है अपने चमन की
अभी उड़ के पहुँचे हैं हम आशियाँ से

◆◆◆

नहीं जानते हम किधर जा रहे हैं
नहीं यह भी मालूम आए कहाँ से

◆◆◆

करें फिर से अफ़साना-ए-ग़म बयाँ हम
जहाँ से कहें हम सुनाएँ वहाँ से

◆◆◆

पता पूछने वाले अहबाब सुन लें
हम आगाह करते हैं अपने निशाँ से

◆◆◆

तकालीफ़-ओ-ज़हमात से बच के 'नैरंग'
रेवाड़ी में पहुँचे है डी आई ख़ाँ से

'नैरंग' ने एक नज़्म ''एक शाइर बे-ज़र और उसकी बीवी'' के नाम से लिख अपनी शरीक-ए-हयात की महनतों, फ़िदा-कारियों और ज़िंदगी निभाने की कुर्बानी का तज़्किरा करके तहेदिल से उनको शुक्रिया अदा करके अपने दिल का बोझ हल्का किया है। यह नज़्म मुसद्दस के पंद्रह अशआर पर फैली हुई है। जो शाइर ने मरने से कुछ साल क़बल तसनीफ़ की है। पुष्पा 'नैरंग' सरहदी से उम्र में बारह साल छोटी थीं। पुष्पा ने तक़रीबन बत्तीस साल शौहर के साथ ज़िंदगी की और उनके बतन से आठ बच्चे पैदा हुए। नरेश सलीम सरहदी ने अपनी माँ की फ़िदाकारियों का हमेशा ज़िक्र किया है। यह नज़्म जो 'नैरंग' सरहदी की बयाज़ में महफ़ूज़ है इत्तिफ़ाक़ से Mother Day ''रोज़-ए-मादर'' मैंने नरेश को सुनाई जिससे घर का कोई फ़र्द वाक़िफ़ न था। यह नज़्म इस मज्मुए में मौजूद है। हम सिर्फ़ कुछ अशआर यहाँ सुनाते हैं। हम यह नज़्म इसलिए भी नुमायाँ कर रहे

हैं कि बहुत कम उर्दू शाइरों को ऐसी सआदत नसीब होती है।

ऐ मेरी मोनिस, मेरी हमदर्द, मेरी ग़म-गुसार
ज़ीनत काशाना-ए-ज़ुल्मत मेरी इफ़्फ़त शुआर
मेरी बद-बख़्ती पे तु दायम रही है अश्क-बार
तेरे दम से है ख़िज़ाँ में भी मुझे लुत्फ़-ए-बहार
गो ज़ुबाँ ख़ामोश है लेकिन दिल-ए-अहसास है
मेरे हर लफ़्ज़-ए-तमन्ना को भी तेरा पास है

◆◆◆

कातिब-ए-तक़दीर ने की सादगी तुझको अता
मुझको फ़ितरत ने बनाया शाइर-ए-रंगीं नवा

◆◆◆

क्या ख़बर थी ज़िंदगी गुज़रेगी इस ज़िल्लत के साथ
तेरी भी क़िस्मत है वाबस्ता मेरी क़िस्मत के साथ

◆◆◆

मैं सरापा सोज़ हूँ और तू सरापा साज़ है
तुझको मुझ पर हो न लेकिन मुझको तुझ पर नाज़ है
मेरे हर इक दर्द-ओ-ग़म में तु मेरी दम-साज़ है
मेरे हर इक शे'र की ले मैं तेरी आवाज़ है
रंग-ए-उल्फ़त भर दिया है तूने हर इक तस्वीर में
देखता हूँ तुझको पिन्हाँ शेर की तासीर में
''शाइर-ए-हिंदुस्ताँ होना ख़ुदा का क़हर है''

'नैरंग' इस नज़्म के आख़िरी बंद में जो अपनी शरीक-ए-हयात पुष्पा को आगाह कर रहे हैं वो आज बिल्कुल आशकार है आज हम यह मज़मून और इस तरह से पुष्पा की क़द्र-दानी इसी ग़रीब शाइर की नज़्म से कर रहे हैं जिसने ये अशआर लिखकर अपनी बेगम की क़द्र-दानी की जिसकी क़ीमत सोने और चांदी के जवाहरात और ज़ेवरात से कहीं ज़्यादा है।

'नैरंग' कहते हैंः

सीम-ओ-ज़र से है ज़्यादा शे'र की दौलत मेरी
क़द्र-दानों में है अब भी अज़मत-ओ-शोहरत मेरी
अहल-ए-दानिश के दिलों में है सिवा इज़्ज़त मेरी
पूछिये अहल-ए-अदब से आज भी क़ीमत मेरी
सीम-ओ-ज़र का शाइरी से एक फ़ितरी बैर है

यहाँ इस बात का ज़िक्र भी जरुरी है कि जब 'नैरंग' सरहदी शे'री नशिस्त और मुशाइरे घर पर करते थे तो उनकी बीवी पुष्पा तक़रीबन तमाम रात शाइरों और सामेईन को चाय बना बना कर तवाज़ेअ करती थीं और उस तंगदस्ती और माली मुश्किलात में भी शौहर जो शाइर था उसकी ख़्वाहिशात और अदबी शेरी महाफ़िल की ज़रुरियात को हंसी ख़ुशी पूरा करती थी। जिसका ज़िक्र मुसलसल उनके बेटे नरेश 'सलीम' करते रहते हैं। नरेश की बेगम सुनीता (Sunita) जिन्होंने कभी अपने ख़ुसर को नहीं देखा। 'नैरंग' साहब की तमाम शे'री बियाज़ों को अपने दिल से लगाकर महफ़ूज़ रखा अगर सुनीता इन बियाज़ों को भारत से लाकर महफ़ूज़ न करतीं तो तमाम 'नैरंग' का कलाम ख़त्म हो जाता। आज इस कलाम की हिफ़ाज़त का सेहरा सुनीता के सर है, और इसी कलाम की वजह से 'नैरंग' हमेशा अमर रहेंगे जैसा कि ज़ौक़ ने कहा हैः

रहता सुख़न से नाम क़यामत तलक है ज़ौक़
औलाद से रहे यही दो पुश्त चार पुश्त

कलाम-ए-'नैरंग' में मुल्क के आज़ाद ख़्वाहों की जलवागरी

नंद लाल 'नैरंग' एक तरक़्क़ी पसंद शाइर थे चूंकि तरक़्क़ी पसंदी का मरकज़ हुक़ूक़े बशर है और हुक़ूक़ का बुनियादी नुक्ता यह है कि इंसान जो आज़ाद पैदा हुआ है और वो जो ज़िंदगी इस दुनिया में बसर करता है वो भी आज़ाद क़द्रों से सजी रहे जिसमें मसावात, हुर्रियत, आज़ाद ख़्याली, समाज और मज़हब की आज़ादियां हों और इस दुनिया में मवाक़ीअ और मुतालबों की यकसूई शामिल हो। यहाँ इंसान को रंग, क़ौम, क़बीलों, जिन्स और इक़्तिसाद की बुनियाद पर तक़सीम न किया जाए। अगर हम 'नैरंग' की शाइरी का जायज़ा लें तो हमें मालूम होगा कि यह नादरात उनके अश्आरों में बिखरे पड़े हैं। बर्र-ए-सग़ीर पर यूरोप क मुमालिक ने सदियों यहाँ के अफ़राद को, कोलीनिज़्म (Colonism) के तहत महकूम किया जिनमें इंग्लिश एम्पायर सब से आगे और शदीद थी। जिन लीडरों, क़ायदों, जांबाज़ों ने दामे, दरमे सुख़ने और यहाँ तक कि अपनी जान की बाज़ी भी लगा दी। शाइर के दिल में उनकी बड़ी इज़्ज़त है और वो उनको ख़िराज-ए-मुहब्बत और अक़ीदत पेश करता है जो उसके दिल से निकले हुए अशआर हैं जो क़रतास पर मुनव्वर हैं और हम तक़रीबन पचास साल बाद इन क़ीमती मोतियों को चुनकर आज़ादी के धागे में पिरोकर पेश कर रहे हैं। यहाँ यह बात भी जाननी चाहिए कि 'नैरंग' के पास रंग रंग में ऐस अशआर की तादाद ज़्यादा है और तमाम

आज़ादी के हीरोज़ और मुजाहिदों पर इस तहरीर में गुफ़्तगू मुमकिन नहीं। 'नैरंग' सरहदी ने जिन अफ़राद पर नज़्में और क़तआत लिखे हैं वो या तक़सीम हिन्द-ओ-पाक से क़बल अंग्रेज़ों से मुक़ाबला कर रहे थे या भारत के आज़ाद हो जाने के बाद दिन रात अपने मुल्क को उनके क़ौल के मुताबिक़ जन्नत निशान और फ़िरदौस मुक़ाम बनाने में लगे हुए थे। हम इस तहरीर में पहले तम्हीद के तौर पर उन अहम हस्तियों के नाम के साथ उन नज़्मों का ज़िक्र करके फिर नमूने के तौर पर हर नज़्म से कुछ इक़्तिबास पेश करेंगे। नज़्म के उन्वानात 'नैरंग' साहब के दिये हुए हैं।

1. महात्मा गांधी = छः (6) शे'र की ग़ज़लनुमा नज़्म है।

मतलाअ :

क्या दिल नवाज़ मौज-ए-सबा का ख़िराम है

2. महात्मा गांधी = आठ (8) शे'र की ग़ज़ल नुमा नज़्म है।

मतलाअ :

मर्द-ए-ख़लीक़-ओ-ख़ुश्तर गांधी महात्मा था

3. महात्मा गांधी और हिंदुस्तान = पाँच मुसद्दस के बंद हैं।

मतलाअ :

ऐ वतन की सरज़मीं ऐ रश्क-ए-फ़िरदौस-ए-बरीं

4. मरसिया वफ़ात पंडित जवाहर लाल नेहरु
= मुसद्दस की शक्ल में छः बंद की नज़्म है।

मतलाअ :

वाए हसरत हामी-ए-अमन-ओ-अमाँ रुख़्सत हुआ

5. सुभाष चन्द्र बोस के योम-ए-पैदाईश पर
= यह सात शे'र की ग़ज़ल नुमा नज़्म है।

मतलाअ :

ऐ माया-ए-सद नाज़-ए-वतन तेरी क़सम है

6. शहीद-ए-आज़म सरदार भगत सिंह

= चार बंद की मुसद्दीस में नज़्म है

मतलाअ :

ऐ कि तेरा नाम है नक़्श-ओ-निगार-ए-अजुंमन

7. लाला लाजपत राय ''शे'र-ए-पंजाब''

= चार बंद की मुसद्दस में नज़्म है।

मतलाअ :

दुश्मनों की लाठियों से तेरी कुर्बानी हुई

8. मरसिया बर-वफ़ात आंजहानी हंसराज

= सात बंद की मुसद्दस में नज़्म है।

मतलाअ :

महव-ए-ख़राम बाद-ए-सबा आज क्यों नहीं

9. लाल बहादुर शास्त्री वज़ीर-ए-आज़म हिन्द की याद में

= चार क़तआत हैं।

मतलाअ :

छुप गया रुस में वो माहे मुबीं

10. ''अब्दुल ग़फ़्फ़ार, ईद और वतन''

= बारह अशआर शे'र की मसनवी है

मतलाअ :

ज़मीन-ए-सुर्ख़ पोश शान-ए-पेशावर याद आती है

11. ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ान को सलाम

= सोलह शे'र की मसनवी है।

मतलाअ :

कुछ दूर है यहाँ से एक ख़ित्ता-ए-ज़मीं

'नैरंग' सरहदी ने महात्मा गांधी पर तीन नज़्में लिखीं। यहाँ यह भी बता दें कि महात्मा का ख़िताब गांधी जी के रवाबित तमाम फ़िरक़ों के सरबराहों से थे, उनका ख़त अल्लामा इक़बाल के नाम भी मौजूद है। गांधी अहिंसा और आज़ादी की तहरीक से तमाम दुनिया

में जाने पहचाने जाते थे। 'नैरंग' की एक छेः शे'र की ग़ज़ल नुमा नज़्म है जिसके मतलाअ को मौज-ए-सबा और बाग़ से जोड़ा है।

क्या दिल नवाज़ मौज-ए-सबा का ख़राम है
गांधी के दम से बाग़ का यह एहतमाम है

एक शे'र में गांधी के क़ौल को नज़्म किया हैः

''लाज़िम हर एक बशर पे है आज़ादी-ए-वतन''
कितना हसीं ज़माने को उसका पयाम है

मक़ताअ में गांधी की शोहरत को यूँ पेश किया है

मौक़ूफ़ बज़्म-ए-हिन्द पर 'नैरंग' कुछ नहीं
जिस बज़्म में चलें वहाँ गांधी का नाम है

दूसरी नज़्म जिसका मतलाअ है

मर्द-ए-ख़लीक़-ओ-ख़ुश्तर गांधी महात्मा था
सब रहबरों का रहबर गांधी महात्मा था

इस नज़्म में शाइर ने गांधी जी की शख़्सियत उनके अज़्म-ओ-इस्तक़लाल और लीडरशिप पर सादगी में लेकिन पुर-असरबात की है। हम यहाँ इस नज़्म के चंद शे'र बग़ैर किसी तशरीह और तब्सरे के इस लिए भी पेश कर रहे हैं कि शाइर ने ख़ूब-सूरत नग़मगी से सरशार रदीफ़ में अशआर जो मायनेख़ेज़ हैं गुलदस्ता बनाकर पेश किया है।

सदक़-ओ-सफ़ा का मज़हर गांधी महात्मा था
इस नूर से मुनव्वर गांधी महात्मा था

अहद-ए-शबाब में था बे-बाक मर्द-ए-कामिल
पीरी में भी दिलावर गांधी महात्मा था

बहर-ए-फ़ना में अक्सर आकर सफ़ीने डूबे
इस बहर का शनावर गांधी महात्मा था

जिस जौहर-ए-वफ़ा की दुनिया को जुस्तजू है
वो रास्ती का जौहर-ए-गांधी महात्मा था

अंग्रेज़ जिसकी हैअत दुनिया पे छा रही थी
लर्ज़ां थे जिससे अक्सर गांधी महात्मा था

अपने वतन की ख़ातिर कुर्बान जान कर दी
यानि शहीद-ए-अकबर गांधी महात्मा था

'नैरंग' सरहदी ने तीसरी नज़्म महात्मा गांधी और हिंदुस्तान में बताया है कि जिस तरफ़ मुल्क जा रहा है और जिसमें ग़रीबों और बेकसों का कोई यार-ओ-मददगार नहीं वो गांधी जी की फ़िक्र से अलेहदा हो चुका है। गांधी जी के क़त्ल के बाद उस बाग़ का माली जो उसकी निगेहदाश्त और नशो नुमा करे नज़र नहीं आता। मतलाअ के बंद के दो शे'र देखिए:

ऐ वतन की सरज़मीं ऐ रश्क-ए-फ़िरदौस-ए-बरीं
तुझ को बख़्शी है यद-ए-कुदरत ने नूरानी जबीं
यूँ तो शाद-ओ-खुर्रम हैं अब इस ज़मीं के सब मकीं
हैफ़ लेकिन इस चमन का बाग़बाँ इस में नहीं

फिर सवाल उठाते हैं कि यह वो सहर तो नहीं जिसका इंतिज़ार थी, जिस की ज़िम्मादारियाँ यहाँ के लीडरों और हुक्मरानों पर है कि मुल्क को मुश्किलात और ख़राबियों से दूर करें।

क्या यही नक़्शा है उस आज़ाद हिंदुस्तान का
क्या तसव्वुर है यही उस नेक दिल इंसान का
क्या यही ने'मुल-बदल है रहबरी की शान का
क्या तहफ़्फ़ुज़ है यही उस क़ीमती सामान का

कल जो ज़ामिन था हर इक फ़र्द-ए-ज़माने के लिए
आज ख़ुद मोहताज है वो दाने-दाने के लिए

◆◆◆

मेरे हम-वतनों जीने की अदा बाक़ी नहीं
इसके मर्द-ओ-ज़न में पहली सी हया बाक़ी नहीं
बाग़-ए-जन्नत है वही लेकिन फ़िज़ा बाक़ी नहीं
साकिनान-ए-हिन्द में ख़ौफ़-ए-ख़ुदा बाक़ी नहीं
रिखतों की इस ज़मीं में गर्म बाज़ारी है आज
हर जगह न-अहल किरदारों की सरदारी है आज

◆◆◆

काश समझें अहल-ए-हिन्द उन रहबरों की शान को
ख़ून से सींचा जिन्होंने कश्त-ए-हिन्दुस्तान को
दर्स-ए-आज़ादी दिया, था जिसने हर इंसान को
जान बख़्शी जिन शहीदों ने तन बेजान को
उनकी क़ुर्बानी का बदला बरमला है साफ़-साफ़
क्या हुआ अंजाम ऐ वतन वालो! यह गुस्ताख़ी माफ़

जब 27 मई 1964 ईसवी को पंडित जवाहर लाल नेहरु का इंतक़ाल हुआ तो मुसद्दस की शक्ल में अठारह शे'र के मरसिया लिखा जिसके बाज़ अशआर पर अल्लामा 'इक़बाल' के तर्ज़-ए-बयान की छाप नज़र आती है। मतलाअ के बंद के दो शे'र देखिए।

वाए हसरत हामी-ए-अमन-ओ-अमाँ रुख़्सत हुआ
अहल-ए-आलम के दिलों का दिलस्ताँ रुख़्सत हुआ

◆◆◆

इस चमन की शाख़ पर तूने बनाया आशियाँ
नग़मा ज़न हैं गुलशन-ए-हस्ती के तायर सब जहाँ

◆◆◆

बाब-ए-जन्नत ऐ 'जवाहर' तेरे आगे बाज़ है
सौए-फिरदौस-ए-बरीं तू माइल-ए-परवाज़ है

तेरी मय्यत सु-ए-जमना आज ज़ैब-ए-दोश है
बाग़बान-ए गुलिस्ताँ-ए-हिन्दुस्ताँ ख़ामोश है

◆◆◆

आख़िर में अपने दिल को शाइर मुत्मईन करना है।
और होंगे इस चमन में जाँ निसारान-ए-चमन
होगा फिरदौस-ए-बरीं से भी सिवा तेरा चमन
रौशनी देती रहेगी चार सू ये अंजुमन
चलती जाएगी यूँ ही अपनी रवायात-ए-कुहन

जब भारत के वज़ीर-ए-आज़म लाल बहादुर शास्त्री का ताशक़ंद में इंतक़ाल हुआ जो ताशक़ंद मुआहिदे के लिए रुस गए हुए थे तो सारे भारत में ग़म की लहर फैल गई। 'नैरंग' सरहदी ने भी चंद क़तआत लिखे हम सिर्फ़ एक क़ता और क़तओं के कुछ मुन्फ़रिद शे'र यहाँ नक़ल करते हैं जो सादा और सलीस हैं।

छुप गया रूस में वो माह-ए-मुबीं
हो गया अर्श पर वो ख़ुल्द नशीं

◆◆◆

हाय भारत का पासबाँ न रहा
रास परदेस की न आइ ज़मीं

◆◆◆

मुर्दनी छा गई है गुलशन पर
हाय रुख़सत हुई बहार-ए-चमन

◆◆◆

गो ब-ज़ाहिर था ख़िर्क़ा पोश वतन
बातिनन शहरयार बन के रहा

सुभाष चंद्र बोस की पैदाईश पर एक तक़रीब मुन्अक़िद की गई थी जिस में 'नैरंग' ने यह सात अशआर की ग़ज़ल नुमा नज़्म में ख़ूबसूरत ख़िराज-ए-अक़ीदत पेश किया है यह नज़्म सुभाष चंद्र

बोस पर लिखी जाने वाली उर्दू नज़्मों में अपनी जबान-ओ-बयान और मज़्मून के लिहाज़ से सफ़े अव्वल की नज़्मों में शुमार की जा सकती है।

ऐ माया-ए-सद नाज़-ए-वतन तेरी क़सम है
तेरा न करें ज़िक्र अगर हम तो सितम है

◆◆◆

हिम्मत का तेरी चर्चा अभी तक है जहाँ में
अफ़्साना तेरा दुनिया के सीनों पे रक़म है

◆◆◆

हर ज़र्रा है रश्क मह-ओ-ख़ुर्शीद वतन का
तू काश इसे देखता, इस बात का ग़म है

◆◆◆

अब मुर्दा दिली ख़त्म हुई तेरी बदौलत
क्या तेरा यह अहसान वतन वालों पे कम है

◆◆◆

मुद्दत हुई कुर्बान हुए राह-ए-वतन में
तू ज़िंदा अभी तक है यह लोगों का भरम है

◆◆◆

होता है तेरा ज़िक्र शहीदों के बय्याँ में
मस्जूद जवानान-ए-वतन तेरा क़दम है

◆◆◆

हैराँ हूँ तेरी हिम्मत-ए-मर्दाना पे 'नैरंग'
आजिज़ तेरे औसाफ़ के लिखने से क़लम है

'नैरंग' सरहदी ने पंजाब के दो सपूत शहीद सरदार भगत सिंह और शेर-ए-पंजाब लाला लाजपत राय पर दो ख़ूबसूरत नज़्में चार चार बंद मुसद्दस की शक्ल में लिखीं।

शहीद भगत सिंह के लिए कहते हैं:

ऐ कि तेरा नाम है नक़्श-ओ-निगार-ए-अंजुमन
तेरा क़िस्सा दिलनवाज़-ओ-दिलफ़िगार-ए-अंजुमन
ऐ कि तेरा ख़ून है ज़ौक़-ए-निसार-ए-अंजुमन
ऐ कि तू है अब तलक भी यादगार-ए-अंजुमन
तू हुआ कुर्बान नामूस-ए-वतन के वास्ते
बुलबुलें कुर्बान होती हैं चमन के वास्ते

◆◆◆

है कहीं मंशा-ए-इंसाँ शान-ओ-शौकत के लिए
या कोई वारिद हुआ है अपनी शोहरत के लिए
ऐश-ए-फ़ानी के लिए कोई इबादत के लिए
या कोई आता है तामीर-ए-हकूमत के लिए

◆◆◆

जब दिलो में ख़ाक से तामीर-ए-इंसानी हुई
अहल-ए-दुनिया में तेरी तख़्लीक़ लासानी हुई
तेरे हिस्से में रक़म ईसार-ओ-कुर्बानी हुई
तेरी कुर्बानी से दुश्मन को भी हैरानी हुई

◆◆◆

तेरी हस्ती इक शुआ-ए-इश्क़-ए-बातिल सोज़ है
ज़िंदगानी तेरी कितनी वाए दर्स आमोज़ है

◆◆◆

तख़्ता-ए-दार-ए-सितम पर तेरी कुर्बानी हुई
फूल वो टूटा कि गुलशन भर में वीरानी हुई

◆◆◆

उसी तरह शेर-ए-पंजाब लाला लाजपत राय को शेर-ए-पंजाब कह कर चार मुसद्दस के बंद में एतराफ़ किया है कि वो मुजस्समा ईसार-ओ-कुर्बानी और आज़ादी थे। हमारे दरमियान उनके ख़ुतूत जो उन्होंने सर सैयद अहदम ख़ान का लिखे थे उम्दा सरमाया है।

दुश्मनों की लाठियों से तेरी कुर्बानी हुई
तेरी कुर्बानी से दुनिया भर को हैरानी हुई

◆◆◆

बारगाह-ए-ईज़दी में जाके फ़रियादी हुआ
तू शहीद-ए-क़ौम होकर फ़ख्र-ए-आज़ादी हुआ

◆◆◆

ज़िंदगी क्या है फ़क़त इक दर्द की आवाज़ है
थरथराती चंद तारों का तिलिस्मी साज़ है

◆◆◆

तायर-ए-हस्ती दमादम मायल-ए-परवाज़ है
तेरी हस्ती पर मगर तेरे वतन को नाज़ है

◆◆◆

आ रही है यह सदा कानों में सक़फ़-ओ-बाम से
ज़िंदा-ए-जावेद है तू लाजपत के नाम से

◆◆◆

आज उस तेरे वतन की सरज़मीं में आज़ाद है
यानि अंग्रज़ों की चौखट से जबीं आज़ाद है

◆◆◆

'नैरंग' ने एक सात बंद मुसद्दस में आंजहानी पंडित हंसराज का मरसिया लिखा। हम यहाँ कुछ मिसरों को जमा करके मतलब पेश करते हैं। शाइर ने सही कहा था कि : ''मातम कुनाँ हर एक तेरा हंस राज है''

कल जो फ़िज़ा थी शहर की अब वो फ़िज़ा नहीं
महव-ए-ख़राम नाज़ अब बाद-ए-सबा नहीं
वो कौन सा बशर है जो मातम सरा नहीं
है कौन सी जगह जहाँ चर्चा तेरा नहीं

◆◆◆

हिन्दू चला गया न मुसलमाँ चला गया
अपनी ज़मीं का आज इक इंसाँ चला गया

◆◆◆

आज़ाद हो के बंद-ए-ग़मी शेर-ए-नर गया
उसकी तलाश है कि कहाँ है किधर गया

◆◆◆

जादू भरा हुआ था वो तेरे बयान में
अपने वतन में जी रहा था अपनी शान से

'नैरंग' सरहदी को सरहदी गांधी ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ान से दिली लगाव था। वो लिखते हैं: ''हम ख़ान साहब के साथ सुर्ख़ पोश गिरोह में शरीक थे और इसी गिरोह में फ़ैज़ भी आते जाते थे।'' ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार पर 'नैरंग' ने अपनी सवानेह हयात के अलावा दूसरे मुक़ामात पर भी ज़िक्र किया है। उन्होंने दो नज़्में ''अब्दुल ग़फ़्फ़ार ईद और वतन'' मसनवी की हैय्यत में लिखी और ''ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ान को सलाम'' मसनवी की शकल में सोलह शे'र की मसनवी लिखी है। जो हम पहले पेश कर रहे है।।

'नैरंग' ने यह नज़्म लखनऊ में पढ़ी। वहाँ के उर्दू अदब के कारकुनान ने 'नैरंग' सरहदी को ''मुजाहिद हुब-ए-वतन'' का ख़िताब देते हुए कहा।

> ''इस नज़्म के सुनने के बाद आज मुझे हुब्ब-ए-वतन के सही मतलब से आगाही हुई। लिहाज़ा मैं ब-हैसियत महल यू.पी. ''इदारा सुख़न-दाँ'' के नायब सदर जनाब 'नैरंग' सरहदी को इदारा मज़कूर के उसूल के तहत ''मुहिब्ब-ए-वतन'' के ख़िताब से मुख़ातिब कर रहा हूँ।

'नैरंग' ने पहले उस सरज़मीन जिससे ख़ुद उनका ताल्लुक़ था ख़ूबसूरत मन्ज़रकशी करके पठानों का ज़िक्र किया और फिर ख़ान

अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ान का तार्रुफ़ और तारीफ़ की। पूरी नज़्म मजमुआ में मौजूद है हम यहा 'नैरंग' पर चंद शे'र पेश करते हैं।

उस सरज़मीं का नाम पठानों की है ज़मीं
दुनिया में जिस ज़मीन का सानी कोई नहीं

◆◆◆

देखा कभी हो जाके इलाक़ा वो पार का
शायद सुना हो नाम भी अब्दुल ग़फ़्फ़ार का

◆◆◆

वो आसमान-ए-हुस्न का माह-ए-तमाम है
हर एक ख़ान, ख़ान का अदना गुलाम है

◆◆◆

बस सादगी ही सादगी उनके उसूल हैं
उनकी नज़र में रंग ए तकल्लुफ़ फ़िज़ूल हैं

◆◆◆

हर इक बशर के दिल में समाई है उसकी चाह
कहते हैं सब पठान उसे ख़ान बादशाह

◆◆◆

हुब्ब-ए-वतन से काम शब-ओ-रोज़ है उसे
रखता यही ख़्याल जिगर दोज़ है उसे

◆◆◆

सद हैफ़ ऐसा शे'र हो जेलों में ख़स्ता हाल
अब तक किसी के दिल में न आया है कुछ मलाल

◆◆◆

हुब्ब-ए-वतन नहीं है मेरी जाँ कोई कुसूर
क़ैद-ए-गराँ से शे'र वो निकलेगा अब ज़रुर

इस तहरीर के आख़िर में हम ''अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ान ईद और वतन'' मसनवी के चंद अशआर नक़ल करते हैं। इस मसनवी में

'नैरंग' ने अपने अहसासात और दिली जज़्बात को अपनी पुरानी यादों में शामिल करके उम्दा तरीक़े से पेश किया है।

मतले में कहते हैंः

ज़मीन-ए-सुर्ख़ पोश शान-ए-पेशावर याद आती है
बुज़ुर्गान-ए-सल्फ़ की याद दिल में गुदगुदाती है

◆◆◆

वही नग़मे बलाबल के वही सुर-ओ-सुमन अपने

◆◆◆

पेये गुल गश्त-ए-शाही बाग़ की जानिब रवाँ होना

◆◆◆

वो घंटा घर से आगे गोर-गठड़ी से गुज़र जाना

◆◆◆

किंगहम पार्क के फूलों के मंज़र दिलक़शा होना

◆◆◆

ज़ियारत गाहे दिल वो आस्ताना बादशाह ख़ाँ का
जहाँ अब तक भी सर झुकता है इस नाचीज़ व नादाँ का

◆◆◆

वतन वालो! मुबारक हो ये नग़में जाँ-फ़ज़ा तुम को
रखे शादाब-ओ-सरसब्ज़ ख़ुर्रम-ए-दायम ख़ुदा तुम को

अज़ ज़ौक़े दिल कलाम ब-गोयम ब-फ़ारसी (‘नैरंग’)

‘नैरंग’ सरहदी की फ़ारसी शाइरी

(क़ंद पारस-ओ-लुत्फ़-ए-अजम)

‘नैरंग’ सरहदी न सिर्फ़ फ़ारसी जबान के मोअल्लिम थे बल्कि वो फ़ारसी जबान के मुंशी फ़ाज़िल थी थे। वो जवानी में सय्याहों को अफ़ग़ानिस्तान के सफ़र पर गाईड बनकर ले जाया करते थे। इन हक़ाइक़ का ‘नैरंग’ ने एक फ़ारसी ख़त में भी लिखा है, जो इस किताब में शामिल है। ‘नैरंग’ सरहदी ने जो अपनी मन्जूम सवानेह छत्तीस (36) मुसद्दस के बंद में लिखी वो फ़ारसी और उर्दू में है। ‘नैरंग’ सरहदी के कलाम की इशाअत उनके दिल ही में घुट कर रह गई लेकिन उसको उनके फ़रज़ंद नरेश ने अहसन तरीक़े से शायाअ किया। ‘नैरंग’ ने शाइरी की बियाज़ में अपने ही ख़त से एक सफ़हे पर इसको ‘‘क़न्द पारस-ओ-लुत्फ़-ए-अजम’’ का नाम देकर ‘‘हिस्सा सोयम’’ लिखकर दस्तख़त की और तारीख़ 25 मई 1968 लिखी।

हम इस तहरीर में ‘नैरंग’ का ही मुन्तख़िब फ़ारसी कलाम जो क़तआत और ग़ज़िलयात पर मुश्तमिल है पेश करेंगे। उन्होंने अपनी सवानेह हयात में चार बंद फ़ारसी में लिखकर मज़ीद बाज़ उर्दू बंद के टेप के शेर भी फ़ारसी में लिखे हम यहाँ इन का सलीस तर्जुमा इस लिए भी पेश कर रहे हैं कि सब क़ारईन को समझने में सहूलत हो। ‘नैरंग’ सरहदी ग़ालिब के कलाम के आशिक़ थे उसकी एक ख़ास वजह यह भी थी कि वो ग़ालिब की उर्दू और फ़ारसी शाइरी से वाक़िफ़ थे और यह सआदत हर शख़्स के हिस्से में नहीं आती।

'नैरंग' सरहदी का जो फ़ारसी का इंतिख़ाब है उसमे हस्ब-ए-ज़ैल मन्ज़ूमात हैं।

1 : फ़ारसी में एक ख़त जिसका उर्दू तर्जुमा राक़िम ने किया है उस मज्मुए में शामिल है।

2 : सवानेह हयात में शामिल चार बंद और पांच मुन्फ़रिद शेर यानि कुल सत्रह शे'र जिसका तर्जुमा राक़िम ने किया और यहाँ मौजूद है।

3 : फ़ारसी की पाँच ग़ज़लें जिनकी मज्मु-ई अशआर की तादाद चालीस है जो राक़िम के तर्जुमा के साथ मौजूद है।

4 : तीन क़तआत जिनके मज्मू-ई अशआर की तादाद छः है।

हम इस मुख़्तसिर तहरीर में फ़ारसी शाइरी का इंतिख़ाब दर इंतिख़ाब करके यह बताना चाहते हैं कि 'नैरंग' को फ़ारसी शाइरी पर मुकम्मल उबूर था। अफ़सोस यह था कि फ़ारसी सुनने और समझने वाले मौजूद न थ। वर्ना यह फ़ारसी शाइरी का कुदरती चश्मा अपनी बहार पूरी तरह से दिखाता लेकिन फिर भी संगलाख़ ज़मीनों को उबूर करता हुआ यह चश्मा शीरीन पानी हमारे साग़र तक पहुँच गया जिसका लुत्फ़ आज हम सब ले रहे हैं अगरचे यह तो 'नैरंग' सरहदी का दिल ही बताएगा कि उन्होंने जो दिल से निकली दर्द से भरी हक़ीक़त को बयान करते हुए कहा था।

शाइर-ए-हिंदुस्तान होना ख़ुदा का क़हर है

'नैरंग' सरहदी ने किसी जबान की तख़्सीस नहीं की लेकिन उनका इशारा उर्दू की तरफ़ ज़्यादा था जब उर्दू के शाइर का यह हाल हो तो फ़ारसी का ग़म किस से कहें। हमें नहीं मालूम कि फ़ारसी को वो ख़त जो हमारे तर्जुमे के साथ इस दीवान में शामिल है किसके लिए लिखा गया था। जिसमें 'नैरंग' ने अपनी इल्मी अदबी तालीमी और सक़ाफ़ती क़ाबिलियतों को बयान करके यह कहा था कि अगर मुझे किसी सिफ़ारत या किसी कल्चरल हाउस में जो फ़ारसी जबान के

मुमालिक में हैं ब-हैसियत मशाविर भेजा जाए तो मैं मुल्क के लिए बहुत मसबत काम कर सकता हूँ लेकिन अफ़सोस मन्फ़ी ज़ेहनों ने नफ़ी में जवाब दिया होगा तब ही तो यह फ़ारसी का आलिम, शाइर और मोअल्लिम बर्र-ए-सग़ीर के मुहावरे ''फ़ारसी पढ़ेंगे तो बेचेंगे तेल'' का मिस्दाक़ हो गया।

हम यहाँ दो क़तआत तर्जुमे के साथ पेश करते हैं।

न गंज-ए-माल-ओ-ज़र ख़्वाहम न शान-ए-क़ैसरी ख़्वाहम
न जाह-ओ-हश्मत-ए-दुनिया न बरकस बरतरी ख़्वाहम
ब-फ़ज़्ल ख़्वीश अज़ लुत्फ़-ओ-करम बरमन निगाही कुन
इलाही! अज़ दुरत नक़्द-ए-मताअ-ए-शाइरी ख़्वाहम

तर्जुमाः- न तो मुझे सोने और गिराँ अश्या का ख़ज़ाना चाहिए और न रोम की बादशाहत, न मुझे दुनिया की इज़्ज़त और फ़ख़्र और न किसी पर बरतरी चाहिए। तू मुझ पर अपने फ़ज़्ल-ओ-करम की नज़र इनायत कर दे। मेरे मालिक तेरे दरवाज़े से सच्ची शाइरी की दौलत चाहता हूँ।

दानम मताअ-ए-शेर-ओ-सुख़न हम फ़िज़ूल नीस्त
दर मजलिस, न-क़द्र-दाँ, रफ़तन उसूल नीस्त
ख़्वाही ज़बाँ दराज़ हम आँचा मेरा बगो
तौहीन-ए-शाइरी मेरा हरगिज़ कुबूल नीस्त

तर्जुमाः-

मैं जानता हूँ शेर-ओ-सुख़न की दौलत मामूली चीज़ नहीं। इसीलिए न-क़द्रों की महफ़िल में हमारे जाने का क़ायदा नहीं। आप जो चाहें ज़बान दराज़ कहें मुझे लेकिन शाइरी की तौहीन मैं बर्दाश्त नहीं कर सकता।

'नैरंग' सरहदी ने अपने फ़ारसी इंतिख़ाब में जो पाँच फ़ारसी ग़ज़लें बियाज़ में लिखी थीं उसका सलीस उर्दू तर्जुमा राक़िम ने कर दिया है ताकि मालुम हो कि यह ग़ज़ल का शाइर जब फ़ारसी ग़ज़ल

भी कहता है तो अपना सिक्का मनवा लेता है।

हम यहाँ हर ग़ज़ल से तीन चार शे'र नस्री तर्जुमे के साथ पेश करते हैं।

मन आनम इश्तियाक़ दीदन-ए-ज़ुल्फ़त हमी दारम
असीरे रा दर ईं ज़िंदान ज़ंजीरे पसंद आयद

तर्जुमाः-

मैं तेरी ज़ुल्फ़ को देखने का सिर्फ़ शौक़ रखता हूँ
इस क़ैदी को ज़िंदान में सिर्फ़ ज़ंजीर पसंद है

◆◆◆

शोम चूँ क़त्ल अज़ दस्तत मरेज़ी आब दर हलक़म
शहीदे रा ब मक़तल आब-ए-शमशीरे पसंद आयत

तर्जुमाः-

जब तेरे हाथ से क़त्ल हूँ तो फिर मेरे हलक़ में पानी न डाल
तेरे शहीद को क़त्ल गाह में तलवार का पानी पसंद है

◆◆◆

अगर ख़्वाही बद-आमत मुर्ग़े दिल रा मुब्तिला साज़म
शुनीदा अम् कि सय्यादे रा नख़चीरे पसंद आयद

तर्जुमाः-

अगर तू चाहे तो अपने मर्ग़-ए-दिल को तेरे फंदे में गिरफ़्तार कर दूं
मैंने सुना है शिकारी को शिकार पसंद होता है

◆◆◆

दिल 'नैरंग' नगश्ता मायल-ए-रंगीनी-ए-आलम
न दारद एहतियाज-ए-रंग तस्वीरे पसंद आयद

तर्जुमाः-

'नैरंग' का दिल दुनिया की रंगीनी की तरफ़ मायल नहीं
अगर तस्वीर पसंद हो तो फिर इस में रंग भरने की ज़रुरत नहीं

◆◆◆

'नैरंग' ने मुश्किल रदीफ़ ''पसंद आईद'' में ख़ूबसूरत रूमानी ग़ज़ल लिखी लेकिन उस में भक्ति की शाइरी का मज़ा भी नशा दो बाला कर देता है। 'नैरंग' का अलफ़ाज़ पर इख़्तियार इस नग़्मगी से लबरेज़ बहर में फारसी के उम्दा शाइर होने कि सनद अता करता है।

बहर तीरे कि बर क़ल्बम ब-यायद मेहमाँ दानम
वहर दर्दी के पैदा मी शुद आँ अरमग़ा दानम

तर्जुमाः-

हर तीर जो मेरे दिल पर लगे मैं उसे मेहमान समझता हूँ
हर दर्द जो मुझे मिलता है उसको तोहफ़ा समझता हूँ

◆◆◆

गुमा नम हस्त दर सहने चमन फ़सले बहार आमद
बहारे रा कि हम दिल ख़ुश नमे बाशद ख़िज़ाँ दानम

तर्जुमाः-

यह वहम है कि चमन में बहार आई है
वो बहार जिस में दिल ख़ुश नहीं मैं ख़िज़ाँ समझता हूँ

◆◆◆

गुलामश मी शाम हर कि मेरा लुत्फ़-ए-ज़बाँ आरद
चुनीं दुश्मन अगर पेशम बयायद मेहरबाँ दानम

तर्जुमाः-

मैं हर उस शख़्स का गुलाम हूँ जो मुझे जुबान का लुत्फ़ दिखाए
अगर वो दुश्मन भी है सामने आए तो मैं उससे मेहरबानी करुंगा

◆◆◆

चिरा दर महफ़िल अहल-ए-ज़बाँ नालम कि मन 'नैरंग'
ज़बाँ दानम, सुख़न दानम-ओ-अंदाज़-ए-बयाँ दानम

तर्जुमाः-

क्यों अहल-ए-जुबान की महफ़िलों में 'नैरंग' फ़रियाद करता रहता है कि
मैं जुबान दाँ हूँ, सुख़न दाँ हूँ और तर्ज़-ए-बयान जानता हूँ

◆◆◆

'नैरंग' ने तीर को जो माशूक़ की तरफ़ से दिल पर बैठे ''मेहमान'' कहा है जो नया मज़मून है यहाँ हमको यह भी महसूस करना है कि 'नैरंग' पेशावरी पठान ख़ान भी हैं और सारे ख़ित्ते में उनकी मेहमां नवाज़ी माअरुफ़ है।

सच है कि सच्ची बहार दिल और फ़िक्र में होती है अगर दिल वीरान हो और फ़िक्र ग़मगीन तो लाख गुलशन में फूल खिलें, बाद-ए-सबा के झोंके चलें, ख़ुश्बू महके दिल में बहार का गुज़र नहीं होता।

उर्दू ग़ज़ल हो कि फ़ारसी जबान का दर्द इसका चटख़ारा और उसकी गुफ़तगू 'नैरंग' की हदीस-ए-दिलबरी है उसके गुलाम बनना जिसके पास लुत्फ़-ए-जबाँ है वही तो सुख़न शनासी, सुख़न फ़हमी, सुख़न नवाज़ी, सुख़न परवरी और सुख़न दानी है और सच तो यह है कि इन सबके मज्मुए का नाम नंद लाल 'नैरंग' सरहदी है।

शिकोह-ए-गर्दिशे अय्याम कुनम या न कुनम
साक़िया! ज़िक्र मय-ओ-जाम कुनम या न कुनम

तर्जुमाः-

गर्दिश-ए-अय्याम की शिकायत करुं या न करुं
साक़ी साग़र और शरब का तज़्करा करुं या न करुं

◆◆◆

दाम गेसुए स्याह फ़ाम निगारे बीनम
ख़्वाहिश-ए-रुस्तन ज़ीं दाम कुनम या न कुनम

तर्जुमाः-

काले काकुल के जाल को फैला हुआ देख रहा हूँ
इस फंदे में फंसने की ख़्वाहिश करुं या न करुं

◆◆◆

ज़ख़्म ताज़ा बरसद अज़ ग़मे जानाँ बर दिल
सज्दा-ए-शुक्र बहर गाम कुनम या न कुनम

तर्जुमाः-

मेरे दिल पर माशूक़ के ग़म से ताज़ा ज़ख़्म लगा है
इसका हर क़दम पर शुक्र का सज्दा करुँ या न करुँ

◆◆◆

फ़ारसी के मुमताज़ शुअरा ने ''कुनम या न कुनम'' कुरुं या न कुरुं की मरगूब रदीफ़ और ग़िनायत से सरशार छोटी बहर में अच्छे अच्छे शे'र कहे हैं। 'नैरंग' एक इल्मी शख़्सियत के साथ एक वसीअ मुतालए के आदमी भी थे। ग़ालिब ने कहा था।

बनती नहीं है बादा-ओ-साग़र कहे बग़ैर

'नैरंग' ने गर्दिश-ए-अय्याम के साथ गर्दिश-ए-पैमाने का दौर मिला कर ऐसा मतलाअ कहा है जो सहल ममतनअ में है। साक़ी से शाइर ने ख़िताब करके गर्दिश-ए-अय्याम को शराब के नशे में हल कर दिया। हर चीच़ जो माशूक़ से आशिक़ को मिलती है इस का शुक्र इसलिए भी आशिक़ करता है कि उसका दिल दर्द सोज़ गुदाज़ रंज-ओ-ग़म का मुंतज़िर रहता है और यही तो इश्क़ के वारदात होते हैं। कहीं शाइर गेसुओं के फंदे में फंसने का ख़्वाहिशमंद है तो कहीं ज़ख़्म खाकर शुक्र का सज्दा करने पर आमादा है। मज़मून को चुस्त अल्फ़ाज़ से एसा बांधा गया है कि सितार के तार की तरह मिसरे ग़ज़ल में तने हुए हैं सिर्फ़ फ़िक्र के मिज़तराब की ज़रुरत है कि कोई तार को छेड़ दे।

हर गुनाही रा इश्तिहार कुनम
हुस्ने रहमत रा शर्मसार कुनम

तर्जुमाः-

हर गुनाह को ज़्यादा करके
रहमत के हुस्न को शर्मिंदा करुंगा

◆◆◆

ज़ख़्म हाय दिल्म शगुफ़्ता अस्त
मन चरा ख़्वाहिश-ए-बहार कुनम

तर्जुमाः-

मेरे दिल के ज़ख़्म ताज़ा हैं
फिर क्यों बहार की ख़्वाहिश करुं

◆◆◆

दोस्ताँ रा-चह ज़िक्र ऐ 'नैरंग'
बर अदूए हम एतेबार कुनम

तर्जुमाः-

दोस्तों का 'नैरंग' क्या ज़िक्र है
मैं तो दुश्मनों पर भी एतेबार करता हूँ

◆◆◆

यह ग़ज़ल ख़ास मूड में रहमत-ए-बारी को जोश दिलवाने के लिए शाइर ने बंदगी के आला मअय्यार को पेश-ए-नज़र रखते हुए कही है। शाइर कह रहा है कि अगर मैं गुनाह न करता तो फिर तू रहीम कैसे बनता और तेरी रहमत क्या करती, इसलिए मैं गुनाह कर रहा हूँ कि तेरी हुस्न-ए-रहमत को शर्मसार करुं कि मुझे ज़रुर माफ़ कर दे। आशिक़ चाहता है कि दर्द ओ ग़म ताज़ा रहे हमेशा इस ताज़गी से ज़िंदगी में बहार रहे। शाइर बहुत इंसाफ़ पसंद और आदमियत का हामिल है उसकी दोस्ती इख़वत बुर्दबारी और बख़्शिशें न सिर्फ़ दोस्तों के लिए है बल्कि वो दुश्मनों के लिए भी खुले दिल से आगे बढ़ता है और उन पर एतेबार करता है।

ऐ दोस्ताँ ज़ रोए-मन चादर मबर कशीद
दर दामन ई रोए स्याह दर आवरम

तर्जुमाः-

मेरे दोस्तो मेरे चेहरे से चादर मत खींचो
क्योंकि मेरा सियाह चेहरा नुमायाँ हो जाएगा

◆◆◆

अज़ तशनगी ब चाह ज़न-ख़दाँ हमे रवम
दीवाना अम कि खुद रा ब चाह दर आवरम

तर्जुमाः-

प्यास की शिद्दत से चाह ज़ख़्नदाँ की तरफ़ जा रहा हूँ
मैं दीवाना हूं शायद ख़ुद को कुंए में डाल रहा हूँ

◆◆◆

अज़ ज़ौक़-ए-दिल कलाम ब-गोयम ब-फ़ारसी
वर्ना कीम कि ख़ुद रा बजाह दर आवरम

तर्जुमाः-

मैं दिल के ज़ोक से फ़ारसी शे'र कहता हूँ
वर्ना मेरी क्या हैसियत कि मैं यह अज़ीम काम करुं

◆◆◆

चूँ मन शवम ब महफ़िल-ए-'नैरंग' सुख़न तराज़
हम अज़ दहान-ए-मुर्दगान वाह दर आवरम

तर्जुमाः-

'नैरंग' जब किसी महफ़िल में शे'र सुनाता है तो
क़दीम असातज़ा यानि मुर्दों के मुँह से तहसीन-ओ-आफ़रीन
हासिल कर लेता हूँ और वाह वाह करवा लेता हूँ

◆◆◆

यह पूरी ग़ज़ल इश्क़-ए-मजाज़ी और इश्क़-ए-हक़ीक़ी के साथ जादा-ए-तस्लीम-ओ-रज़ा की हामिल है। इस ग़ज़ल में नौ शे'र मरद्दफ़ हैं। बंदा कफ़न में मालिक से शर्मसार है इसी लिए कह रहा है कि मैं रुस्याह हूँ चादर मेरे मुँह से मत हटाओ। आशिक़ के लिए माशूक़ का चाह ज़नख़ुदाँ डूबकर उभरने के ममासिल है क्योंकि इश्क़ की हद जुनून है जहाँ अक़्ल का दख़ल नहीं बल्कि दीवानगी की फ़रज़ानगी है। 'नैरंग' ने यह कह कर दिल के ज़ौक़-ओ-शौक़ के लिए फ़ारसी में शाइरी कर रहा हूं, वर्ना मेरा क्या मुक़ाम इस अज़ीम जबान के शाइरों में शुमार हो सकूं। अजज़-ओ-इंकसारी से काम है। वो एक उम्दा कुहना मश्क़ फ़ारसी के शाइर हैं इसीलिए तो 'नैरंग' मक़्ताअ में तअल्ली करके कहते हैं कि जब मैं महफ़िल में शे'र सुनाता हूँ तो असातज़ा क़दीम जो

मर चुके हैं उनसे दाद तहसीन हासिल कर लेता हूँ।

निदनम मांदा अस्त चह निस्बतम आँ पर जमाले रा
दिल ख़ुद रा मुनववर साख़्ता अम ईं ख़्याले रा

◆◆◆

तर्जुमाः-

मैं नहीं जानता अब क्या निस्बत बाक़ी है इस पर जमाली से
बस मैंने अपने दिल को मुनव्वर किया है इस रौशन ख़्याली से

◆◆◆

हमें जा मोलदु-ओ-मस्किन शुदा अस्त ईं ग़ैर बे रा
जुदा करदन्द बाद अज़ मुद्दते ईं बद-नसाबे रा

तर्जुमाः-

उसी जगह इस ग़रीब की पैदाईश और घर भी था
एक मुद्दत के बाद इस बदनसीब को वहाँ से जुदा किया गया

◆◆◆

अगर ख़्वाहिद दिलश, क़ारुं कुन्द हर रोस्ता-ए-रा
शहंशाहे बगर दांद अगर ख़्वाहिद गदा-ए-रा

तर्जुमाः-

अगर वो चाहें तो हर देहाती को क़ारुन कर दें
वो अगर चाहें तो हर भिकारी को शहंशाह बना दें

◆◆◆

बिदइरम एतक़ाद-ए-ताम आँ मर्दे बुर्जुगे रा
बयाद आरम सुज्दम नाम आँ मर्दे बुर्जुगे रा

तर्जुमाः-

मैं उस अज़ीम शख़्स के नाम का मोतक़िद हूँ
हर सुबह उस अज़ीम शख़्स का नाम लेता हूँ

◆◆◆

ज़ुबान-ए-बहर ज़ुबाँ आमूख़्ता अम क़द्र-ए-आँ दानम
अगरचे नेस्त क़द्र मन म्यान-ए-दोस्ताँ दानम

तर्जुमाः-

मैंने जबान, अदबी जबान की तरह सीखी है इसकी क़द्र जानता हूँ
अगरचे कि मैं जानता हूँ मेरे दोस्तो मैं मेरी क़द्र नहीं है

◆◆◆

शुनीदा अम कि पिदरानम दबीर ख़ालसा बुदुन्द
ख़ुदारा याद मी करदन्द कि मरदान ख़ुदा बुदुन्द
ज़मीने काशतन्द अज़ मरज़ाअ अश अहल ग़ना बूदुन्द
अज़ीं बेहतर ख़ुदा दानद कि आं दीगर गह हा बूदुन्द
अज़आं मरदान काले राम मर्द-ए-बा-हुनर बुदुह
ओ तश्वीक़-ए-सियाहत-ओ-दायम दर सफ़र बुदुह

तर्जुमाः-

मैंने सुना है कि मेरे बाप ख़ालसा के दबीर थे
वो हमेशा ख़ुदा की याद में रहते और मर्दे-ए-ख़ुदा थे
खेती की ज़मीन के मालिक थे और ख़ुशहाल थे
वो अपने मुक़ाम पर दूसरों से बेहतर थे
काली राम उन मर्दों में हुनरमंद थे
उन्हें सियाहत का शौक़ था और हमेशा सफ़र करते थे

◆◆◆

मेरा शर्फ़-ए-तलमुज़ शुद ब क़दम-ए-'फ़ैज़' अहमद ख़ाँ
ब-दो ज़ानू निश्स्ता अम ब पेश-ए-ख़िदमत-ए-ईशाँ
रुजुअ ख़िदमतश यक साल करदम बा हमा याराँ
फुनून-ए-शाइरी आमुख़्ता अम बेश अज़ दिगराँ
नमी दानम कि अहसानिश चिगूना बर जुबाँ आरम
न तर्ज़े गुफ़तगु दारम कि आँ रा दरमियाँ आरम

तर्जुमाः-

मुझे फ़ैज़ अहमद ख़ान से शागिर्दी का शर्फ़ मिला
मैंने उनके सामने शागिर्दी का ज़ानू तह किया

मैं एक साल तक दोस्तों के हमराह उनकी ख़िदमत में जाता रहा। शाइरी के फ़न को दोस्तों की निस्बत मैंने उन से ज़्यादा सीखा। मुझे नहीं मालूम कि उनके अहसान को किस तरह से जबान से अदा करुं।
न मुझे वो गुफ़तगू करने का तरीक़ा आता है जिस से उनका अहसान अदा कर सकूं

◆◆◆

निकाह करदम-ओ-लेकिन ब-मुरादम दिल निषद आंजा
कि औलादे ब-चंदे दरमियाँ शामिल निषद आंजा
बराए मक़सद-ए-मन शायद आब-ओ-गुल निषद आंजा
दरख़्ती काशतम लेकिन समर हासिल निषद आंजा
ब-बाग़-ए-बा मुराद-ए-मन गुल अव्वल शगुफ़ता शुद
शुदा बेदार बख़्त एन्जा बा-आँ जाए कि ख़ुफ़ता शुद

◆◆◆

तर्जुमाः-

निकाह तो किया लेकिन दिल की मुराद वहाँ बर न आई
मुझे वहाँ औलाद नसीब न हुई
शायद इसकी वजह यह हो कि वहाँ मेरे हिस्से का पानी और मिट्टी न थी
मैंने झाड तो बोया लेकिन उसका फल न मिला
मेरे मुरादों के बाग़ में मेरा पहला फूल खिला
उस मुक़ाम पर मेरे नसीब जागे जहाँ मेरी क़िस्मत ख़राब हुई

◆◆◆

‘नैरंग’ के कलाम में आज़ादी की ख़ुशबू

मुहब्बत की ज़मीं होगी नया दौर ज़माँ होगा

नंद लाल ‘नैरंग’ बिट्रिश कोलाीनिज़्म (Colonism) के दौर में पैदा हुए। वो एक आज़ाद-मंश तालीमयाफ़्ता, इंसानी क़द्रों के हामी तरक़्क़ी पसंद शाइर और अदीब थे। उनकी शाइरी में रुख़-ए-जानाँ के साथ साथ ग़म-ए-दौराँ की जलवा-नुमाई भी थी जिस में वो अपनी सोच और अमल से मजबूत थे जैसा कि उनके उस्ताद फ़ैज़ अहमद फ़ैज़ ने कहा था।

लौट जाती है उधर को भी नज़र क्या कीजिए

वतन से मुहब्बत और वतन के जांनिसारों से उल्फ़त और आज़ादी के पैग़ाम की तशहीर के पुर-खुलूस जलवे उनकी निगारशात में बिखरे पड़े हैं। बर्र-ए-सग़ीर की तक़सीम से पहले की ज़्यादातर शाइरी ज़ाया हो गई लेकिन वो कलाम जो उन मआरकों में उन्होंने अंजाम दिया था उनके कारनामों और क़द्रों को ख़िराज-ए-अक़ीदत देने के तौर पर इस कुलियात में जगह दी गई है। और इस की तशरीह और तफ़सीर भी राक़िम ने की है। ‘नैरंग’ के कलाम में आज़ादी, वतन और मुजाहिद, अक़ीदती मायने के हामिल हैं। उनकी वतन दोस्ती मन्ज़रकशी से ज़्यादा वतन दोस्ती मंज़र कसी से ज़्यादा वतन के बाशिंदों की ज़िंदगी को संवारने अवाम की मुश्किलात को हल करने और सरमायादार, जागीरदाराना तबक़ाती निज़ाम से निजात का सामान फ़राहम करने में नज़र आती है। यह सच है हर दही बेचने वाली अपने दही को मीठा कहती है। हर माँ की नज़र में उसका फ़रज़ंद सबसे अज़ीज़ और दिलबर है उसी तरह ‘नैरंग’ भी जो मुहाजिरत करके हिंदुस्तान को

अपना वतन बनाते हैं उसके दिलदादा और मद्दह-ख़्वाँ हैं। वो इसको तरक़्क़ी के रास्ते पर मुसलसल गामज़न देखना चाहते हैं। उन्हें भारत की हर चीज से प्यार है। वो शर्क़ और ग़र्ब दोनों तहज़ीबों और तमद्दुनों को क़ुबूल करते हैं। इक़बाल ने कहा थाः

मशरिक़ से हो बेज़ार न, मग़रिब से हज़र कर
फ़ितरत का तक़ाज़ा है कि हर शब को सहर कर

'नैरंग' बहरहाल मशरिक़ के दिलदादा हैं और वो मग़रिब की तरक़्क़ी से मश्रिक़ को संवारना भी चाहते हैं, जिसका ख़ूबसूरत पैयाम उन्होंने अपनी एक नज़्म "किसी दोस्त की अमेरीका से वापसी पर" छः बंद की मुसद्दस नज़्म के अठारह अशआर में किया है। 'नैरंग' ने जहाँ पर ग़रबी दुनिया की तरक़्क़ी पर ख़ुशी का इज़्हार किया, उससे ज़्यादा भारत को आगे बढ़ाने की बात है, उन्होंने उन मुक़ामात को भी पेश कया है जिसे ग़र्ब नहीं पेश कर सकता। एक सेहतमंद और सही फ़िक्र शाइर से यही उम्मीद रखी जा सकती है कि वो दुनिया के एक हिस्से को दूसरे हिस्से के मुनाबेअ ज़राए और इमकानात से सजा दे।

मुल्के अमरीका से आना हो मुबारक नौजवाँ
तेरी इस तौकीर पर शादाँ है हर खुर्द-ओ-कलाँ

◆◆◆

सैर की है तूने अमरीका के अर्ज़-ए-पाक की
तूने देखी है ज़मीं वाशिंगटन, न्यूयार्क की

◆◆◆

लोग कहते हैं निराली है वहाँ की सरज़मीं
कोहे-दरिया के मनाज़िर हैं वहाँ सहर-आफरीं

◆◆◆

क्या कोई दरिया वहाँ पर हमसर-ए-जमना भी है
क्या हिमाला की बलन्दी है वहाँ गंगा भी है

ताज की सूरत इमारत कोई देखी है वहाँ
है ज़मीन-ए-हिन्द पर जो यादगार-ए-शह-ए-जहाँ

◆◆◆

क्या वहाँ भी दफ़न है कोई मुहब्बत का निशाँ
जिसके आगे सर झुकाते हों ज़मीन-ओ-आसमा

◆◆◆

तूने अमरीका के इल्म-ओ-फ़न से पाई आगही
तुझको भारत में नज़र आए अगर कोई कमी

◆◆◆

मुन्तशर कर दे वहाँ इल्म-ओ-हुनर की रौशनी

◆◆◆

रौशनी में ही इज़ाफ़ा ताकि तेरी ज़ात से
पार बेड़ा हिन्द का हो क़ुल्ज़ुम-ए-ज़ुल्मात से

◆◆◆

इसी तरह के मज़मून को एक क़तअे में कहते हैं:

नर्गिस-ओ-लाला-ओ-गुल सर-ओ-सुमन लौट आए
यानी गुलहा-ए-चमन सू-ए-चमन लौट आए
जिनकी फ़ुर्क़त दिल-ए-अहबाब पे थी बार-ए-गराँ
आज वो जान-ए-वतन अपने वतन लौट आए

◆◆◆

'नैरंग' सरहदी के कलाम में जो नज़्में इन मौज़ुआत पर मिलती हैं उनकी फ़ेहरिस्त कुछ इस तरह है।

- हमारा हिंदुस्तान = यह नज़्म मुसद्दस की शक्ल में पाँच बंद पर मुश्तमिल है। इस में पंद्रह शे'र हैं।
- मादर-ए-हिंदुस्तान = यह नज़्म तीन तरकीब बंदों पर मुश्तमिल है। इसमें पंद्रह शे'र हैं।
- क़व्वाली = यह नज़्म मुसद्दस की शक्ल में पाँच बंद की है

जिसमें पंद्रह शे'र हैं।

- शान-ए-वतन = यह नज़्म मुसद्दस के सात बंद यानि इक्कीस शे'र की है।
- तराना-ए-वतन = यह नज़्म मुसद्दस के छः बंद यानि अठारह शे'र की है।

इन नज़्मों के अलावा 'नैरंग' ने देश मुहब्बत, जांनिसारी और अवाम भगती पर भी नज़्में लिख कर उन अफ़राद के अज़ायम, मेहनतें, ख़िदमत गुज़ारी और तरक़्क़ी के मंसूबों पर जिन नज़्मों में शे'र कहे हैं उनके यह नाम हैं।

- अज़्म जवानाँ हिन्द = यह नज़्म पाँच बंद यानि पंद्रह शे'र की है।
- ललकार = यह नज़्म चार बंद यानि बारह अश्आर पर मुश्तमिल है।
- अज़ायम = ग़ज़लनुमा आठ अश्आर की है।
- इरादे = यह नज़्म तीन तरकीब बंद पर मुश्तमिल है जिसमें पंद्रह अशआर हैं।
- गोवा के शहीदों की याद में = यह नज़्म नौ शेर की ग़ज़लनुमा ग़ज़ल है।
- नया ज़माना आलम-ए-तख़य्युल में = यह आठ शे'र की ग़ज़लनुमा नज़्म है।
- यौम-ए-जम्हूरियत के मौक़े पर = यह नज़्म मुसद्दस की शक्ल में चार बंद या बारह अशआर पर मुश्तमिल है।
- अहिंसा = यह नज़्म मुसद्दस की शक्ल में सात बंद और इक्कीस शे'रों पर मुश्तमिल है।

'नैरंग' ने इस के अलावा ग़ज़ल के अशआर और क़तआत में भी इन्हीं मज़ामीन को पेश किया है। दो क़तआत यहाँ नक़ल किये

जाते हैं।

क़तआ

सुनाया है अनादिल ने हमें पैग़ाम-ए-आज़ादी
इलाही किस क़द्र प्यारा है दिल को नाम-ए-आज़ादी
अब इस मुद्दत में इतना तो हुआ मालूम ऐ 'नैरंग'
गुलामी की सहर से है हसीं तर शाम-ए-आज़ादी

क़तआ

ऐ ख़ुदा ऐसे भी इंसान हुए जाते हैं
जिनके ईसार प हैरान हुए जाते हैं
तू तो क़ुर्बान हुआ नाम-ए-वतन पर लेकिन
हम तेरे नाम पे क़ुर्बां हुए जाते हैं

इस तहरीर में हम एक दर्जन से ज़्यादा नज़्मों के कुछ मुन्तख़िब अशआर इसलिए पेश करेंगे कि उन अशआर से नज़्मों को मौज़ु और शाइर का तर्ज़-ए-बयान ज़ाहिर हो सके और क़ारी इन मतालिब से रौशनास होकर असल मन्ज़ूमात पर रुजु कर सके। इन अशआर में आमी से आलिम तक के लिए उनकी फ़िक्र और ज़रुरत के मुताबिक़ मवाद मौजूद हैं।

'नैरंग' की नज़्म मादर-ए-हिंदुस्तान से दो बंद यहाँ नक़ल किये गए हैं।

दिल में हमारे हसरत-ओ-अरमान हैं कई
घर एक है मगर यहाँ मेहमान हैं कई
हासिल यहाँ ये ऐश के सामान हैं कई
लुत्फ़-ए-किनार आब है, तूफ़ान हैं कई
हिन्दू हैं इसमें और मुसलमान हैं कई
आलिम-ए-वेद, हाफ़िज़-ए-कुरआन हैं कई
है एक दर मगर यहाँ दरबान हैं कई

दुश्मन की क्या मजाल निगहबान हैं कई
सदियों लिपट के सोये हैं इस आशियाँ से हम
पैदा हुए हैं मादर-ए-हिंदुस्ताँ से हम

◆◆◆

ऊँचा जहाँ में परचम-ए-हिंदुस्ताँ रहे
यह फ़िक्र है जहाँ में हमारा निशाँ रहे
हिंदुस्ताँ की हर नवे वर्द-ए-जुबाँ रहे
नाकूस की सदा रहे बाँग-ए-अज़ाँ रहे
बुलबुल का शोर शमा-ए-सोज़ाँ यहाँ रहे
हर शय यहाँ की रौनक़-ए-बज़्म-ए-जहाँ रहे
दिल में हमारे अज़्मत-ए-हिन्दुस्ताँ रहे
बेताब मंज़िलों के लिए कारवाँ रहे
'नैरंग' न ग़म करें जो गुज़र जाएं जाँ से हम
पैदा हुए हैं मादर-ए-हिंदुस्ताँ से हम

◆◆◆

'फ़िराक़' गोरखपुरी ने कहा था : ''क़ाफ़िले आते रहे हिंदुस्तान बनता गया''

'नैरंग' की जो मुसद्दस की शक्ल में ''हमारा हिंदुस्तान'' नज़्म है। यहाँ हम सिर्फ़ मतला और मक़्ते के बंद के साथ दो शे'र भी पेश करते हैं। यह अशआर ख़ुद अपनी बात बता रहे इस लिए यहाँ मज़ीद समझाने की ज़रुरत नहीं।

हिमाले-सा पर्बत जहाँ पासबाँ है
जहाँ आब-ए-गंगा-ओ-जमना रवाँ है
जहाँ जलवा अफशाँ तिरंगा निशाँ है
जो गाँधी की भूमि जवाहर की जाँ है
करोड़ों अनादिल का जो आशियाँ है
हमारा वही देश हिंदुस्ताँ है

किसी से यहाँ का जवाँ कम नहीं है
मसायब हों हर सू इसे ग़म नहीं है
तलातुम में भी दीदा पुर-नम नहीं है
कोई तफरका उनमें बाहम नहीं है

जहाँ शोर-ए-नाक़ूस-ओ-बांगे आज़ाँ है
हमारा वही देश हिंदुस्ताँ है

◆◆◆

जिसे लोग कहते हैं जन्नत-ए-निशाँ है
हमारा वही देश हिंदुस्ताँ है

◆◆◆

बहारों से बेहतर जहाँ की ख़िज़ाँ है
हमारा वही देश हिंदुस्ताँ है

'नैरंग' सरहदी ने हिन्दू स्कूल रेवाड़ी में एक उम्दा क़व्वली का इंतज़ाम किया जिसमें स्कूल के तलबा ने हिस्सा लिया और इस क़व्वाल के स्टेज को भी खुद 'नैरंग' ने अपनी निगरारनी में बनवाकर तलबा को क़व्वाली के अंदाज़ सिखाकर पेश किया था। यह क़व्वाली में जो क़ौल होता है जिसकी क़व्वाल तकरार करता है। मुसद्दस के बंद का आख़िरी मिसरा है ''वो कौन सी ज़मीन है? हिंदुस्तान है'' इसके चंद मिसरे सुनिये, अगरचे कि क़व्वाली का लुत्फ़ क़व्वाल की तकरार में है।

वो सरज़मीं जो आज भी फ़ख़्र-ए-जहान है
गर्दिश में जिस ज़मीं के लिए आसामन है
अपना वतन है वेद और गीता की सरज़मीं
पैदा हुए हैं राम-ओ-कृश्न और बुध यहीं

◆◆◆

गोबिंद और भगत दिलावर यहाँ हुए
सब देवता-ओ-पीर-ओ-पैयंबर हुए

हम ही ने दी है रौशनी सारे जहान को

◆◆◆

क्या कहने जिस ज़मीन की इस दर्जा शान है
वो कौन सी ज़मीन है? हिंदुस्तान है

'नैरंग' सरहदी ग़ज़ल, मुसद्दस और तरकीब-ओ-तरजीह बंद में फ़न के कमाल के साथ जबान और तर्ज़-ए-बयान की सादगी दिखाने का हुनर जानते हैं। उनकी नज़्म ''तराना-ए-वतन'' जो तरजीअ बंद में है उसके सिर्फ़ चंद शे'र यहाँ हम लिख रहे हैं।

अयाँ बर्ग-ओ-बर से बहार-ए-चमन है
जहाँ ख़ाक भी रश्क-ए-मुश्क ख़ातन है
जहाँ पर रवाँ आब-ए-गंग-ओ-जमन है
वही रश्क-ए-फ़िरदौस
मेरा वतन है

मुहब्बत की दुनिया जहाँ कामराँ है
जहाँ शोर-ए-नाक़ूस बांग-ए-अज़ाँ है
मनादिर मस्जिद की हुरमत जहाँ है
वही रश्क-ए-फ़िरदौस
मेरा वतन है

जहाँ मय-कदे साक़ी-ओ-जाम लाखों
हज़ारों गुल अंदाम गुलफ़ाम-ए-लाखों
जहाँ मर्द-ए-मज़दूर भी अहल-ए-फ़न है
वही रश्क-ए-फ़िरदौस
मेरा वतन है

बड़ी और उम्दा शाइरी का अंसर यह भी है कि इसके मतालिब जूद फ़हम रहें जैसा कि इन नज़्मों से ज़ाहिर है। दूसरी मुसद्दस की शक्ल में अठारह शे'र की नज़्म ''शान-ए-वतन'' है। इस नज़्म में शाइर ने क़दीम को जदीद से मुक़ाबला करके वतन की शान बढ़ाई है।

मुद्दत से ख़ूगर-ए-सितम-ए-आसमाँ रहे
हम महव-ए-इंक़लाब-ए-ज़मीन-ओ-ज़माँ रहे
फ़सल-ए-बहार में भी हम मिसल-ए-ख़िज़ाँ रहे
मुँह में जुबान रखते हुए बे-जुबाँ रहे
इज़हार-ए-दिल के लफ़्ज़ हमें याद तक न थे
यानि मजाज़-ए-नाला-ओ-फ़रियाद तक न थे

◆◆◆

वो दिन गए कि मज़हब-ओ-ईमान थे कई
हिन्दू कई थे उनमें मुसलमान थे कई
उनमें कई ज़लील थे ज़ी-शान थे कई
सीने में एक दिल था और अरमान थे कई
अब सरज़मीन-ए-हिन्द का इंसान एक है
ताइर तो बे-शुमार गुलिस्तान एक है

◆◆◆

हर मर्द गामज़न है तरक़्क़ी की राह पर
नाज़ाँ हर एक आदमी है अज़्-ओ-जाह पर
रखता गदा भी फ़ौक़ है अब बादशाह पर
एवाँ को बतरतरी नहीं अब ख़ानक़ाह पर
हमको नसीब दौलत-ए-अमन-ओ-अमाँ है अब
गहवारा-ए-निशात में ख़ुर्द-ओ-कलाँ है अब

'नैरंग' सरहदी एक मशरिक़ी शाइर हैं। वो सिर्फ़ सुबह आज़ादी की फैली हुई रौशनी से मुत्मईन नहीं होते बल्कि इस रौशनी से फ़ायदा उठाकर ज़ीस्त के मसायल को ठीक करना चाहते हैं इसके लिए वो अज़्म, इस्तक़लाल और कोशिश-ओ-जद्दो-जहत की तरग़ीब करते हैं। हमारी कामयाबी इस बात पर भी मुन्हसिर है कि हम अपने इरादों में कितने पक्के और मुस्तैद हैं। ज़ैल के चंद शे'र जो एक तरकीब बंद में हैं सुनिये।

हमारा अज़्म है ख़ाक-ए-वतन को आसमाँ कर दें
जो दिल की बात है क्योंकर न हम सब पर अयाँ कर दें
निशात-ए-चंद रोज़ा हम फ़िदा-ए-आशियाँ कर दें
बहारों को बुलाकर अपने घर का पासबाँ कर दें
नई तहज़ीब की मशाल से रौशन हर मकाँ कर दें
निगाह-ए-अहल-ए-आलम क़ायल-ए-हिन्दुस्ताँ कर दें
फ़रेब-ए-अहले दुनिया उनकी मंज़िल का निशाँ कर दें
ज़मीन-ए-हिन्द का हर फ़र्द मीर-ए-कारवाँ कर दें
यहाँ का ज़र्रा-ज़र्रा रश्क-ए-महर जु फ़िशाँ कर दें
हक़ीक़त में ज़मीन-ए-हिन्द को बाग़-ए-जिनाँ कर दें

हर क़ौम और मुल्क का क़ीमती असासा उनकी जवान नसल होती है। आज के पुर-आशोब दौर में दुनिया न्युक्लियर हथियारों के ज़ोर पर मौत के दरवाज़े पर ख़ड़ी है। यहाँ एक क़ौम और एक मुल्क की तबाही तमाम दुनिया की तबाही महसूब होगी इसीलिए अमन के परस्तारों का नारा "Live and let them Live" है। यहाँ कुछ मुंतख़िब अशआर नज़्म ''जवाँन-ए-हिन्द'' के पेश किये जाते हैं।

पैयाम-ए-अमन हमारा है इक जहाँ के लिए
हैं मिसल बाद-ए-सबा सेहन-ए-गुलिस्ताँ के लिए
हैं रहनुमाए सफ़र अहल-ए-कारवाँ के लिए
सिला-ए-आम है यारान-ए-मेहरबाँ के लिए
तलाश जिसकी है हम उसको पा के छोड़ेंगे
हम अपने देश को जन्नत बना के छोड़ेंगे

◆◆◆

हमारा अज़्म है दुनिया की शांति के लिए
बढ़ाए हाथ हमेशा ही आश्ती के लिए
सहे हैं रंज सदा ग़ैर की ख़ुशी के लिए
पयाम सबको दिया हमने ज़िंदगी के लिए

नक़ूश अपने जहाँ पर बिठा के छोड़ेंगें
हम अपने देश को जन्नत बना के छोड़ेंगे

बर्र-सग़ीर आज़ादी का मोस्सर हथियार ''अहिंसा'' या "Non Violence" था। जिसने दुनिया की अज़ीम ताक़त सरमायादारी को जिसकी नुमाइंदगी उस वक़्त इंग्लिस्तान कर रहा था और जिस के पंजे में बर्र-सग़ीर असीर था, शिकस्त दी थी। गांधी जी इस तहरीक के क़ायद थे। 'नैरंग' की एक निस्बतन तूलानी नज़्म जो इक्कीस अशआर पर मुबनी है इस कुलियात में ''अहिंसा'' के उन्वान से मौजूद है। इस मुसद्दस में ज़माने के हालात को पेश करके इसका इलाज अहिंसा की सूरत में बताया गया है। हम इस नज़्म के बयालीस मिसरों से सिर्फ़ दस मिसरे पेश करते हैं जो आप अपनी दास्तान बयान कर रहे हैं।

जानता है हर बशर दुनिया के हर इक राज़ को
ख़ुद बजाना चाहता है ज़िंदगी के साज़ को

◆◆◆

सब मुहब्बत और अहिंसा के करिश्मे हैं अयाँ
चार सू दुनिया में अहिंसा का सिक्का है रवाँ

◆◆◆

गुल अहिंसा का खिला है वादी पुर-ख़ार हैं
हम नशीन-ए-गुल को मिलता है मज़ा आज़ार में

◆◆◆

अल-ग़र्ज़ है सब अहिंसा से निज़ाम-ए-कायनात
थम रही है दस्त-ए-कुदरत में ज़माम-ए-कायनात

◆◆◆

हाँ अगर दोनों जहाँ में चाहते हो आबरू
तो अहिंसा के उसूलों से करो तुम गुफ़तगू

अल्लामा 'इक़बाल' ने कहा था : ''जो बात दिल से निकलती

है असर रखती है'' 'नैरंग' सरहदी के अशआर उनके दिल की गहराइयों से उबलते हैं जिनमें सदाक़त की चाश्नी का चटख़ारा बड़ी देर तक ज़ेहन को महफ़ूज़ रखता है। अगरचे 'नैरंग' की ख़ास तवज्जोह भारत पर है लेकिन वो दरअसल तमाम इंसानों को ख़ुशहाल और कामयाब देखने की आरज़ू रखते हैं। वो इस फ़रसूदा सितमगर, हक़ तलफ़, ख़ुद ग़र्ज़ मुआशरे को बदलने के लिए एक नया जहान का तसव्वुर रखते हैं। अपनी नज़म ''नया ज़माना आलम-ए-तख़य्युल में'' के चंद शे'र देखिए:

नए सिरे से लिखा जाएगा अफ़्साना मलाइक का
नई हूरें, नए गुलमाँ, नया बाग़-ए-जिनाँ होगा

◆◆◆

दोबारा इस जहाँ में होगी फिर तख़्लीक़ आदम की
यह दुनिया तो नई दुनिया नया इक आसमाँ होगा

◆◆◆

समझ ली जाएगी बातिल यहाँ तब्लीग़ मज़हब की
फ़क़त दुनिया में ही अख़्लाक़ का ऊँचा निशाँ होगा

◆◆◆

न सरमाया परस्ती होगी महवे ख़्वाब बिस्तर पर
न मज़दूरों की गर्दन पर कभी बार-ए-गिराँ होगा

◆◆◆

न हद बंदी, न झगड़े, मुफ़्त में होंगे ज़ुबानों के
मुहब्बत की ज़मीं होगी नया दौर-ए-ज़ुबाँ होगा

बारह रतन

(क़तआत 'नैरंग' सरहदी)

❋

जिससे न बुझे तशनगी ऐ हज़रत-ए-'नैरंग'
उस साग़र-ए-मय को कभी साग़र नहीं कहते
''काबा में मुसलमाँ को भी कह देते हैं काफ़िर
बुतख़ाने में काफ़िर को भी काफ़िर नहीं कहते''

❋❋❋

❋

ज़िंदगी को हुबाब कहते हैं
और ज़माने को ख़्वाब कहते हैं
अपनी शोहरत के वास्ते 'नैरंग'
हम हर इक को ख़राब कहते हैं

❋❋❋

हिन्दू नहीं समझे हैं मुसलमाँ नहीं समझे
सद हैफ़ कि वो मक़सद-ए-ईमाँ नहीं समझे
क्या अहल-ए-ज़माना से मैं वाक़िफ़ नहीं 'नैरंग'
अब तक भी जो इंसान को इंसाँ नहीं समझे

आजकल गर्मी-ए-बाज़ार फ़क़त हैं कपड़े
आदमियत के भी आसार फ़क़त हैं कपड़े
कल तो इंसान का मैयार था अख़्लाक़-ए-बुलंद
आज इंसान का मैयार फ़क़त हैं कपड़े

तालीम की कमी है न अस्बाक़ की कमी
हम में नहीं है शोहरत-ए-आफ़ाक़ की कमी
यूँ तो हर इक चीज़ है हिंदुस्तान में
लेकिन कोई कमी है तो अख़्लाक़ की कमी

कोई झुक कर सलाम करता है
ज़ाहिरन एहतराम करता है
बे-ग़र्ज़ आजकल ज़माने में
कौन किससे कलाम करता है

❋

अल्लाह रे यक़ीन जो अहल ए जहाँ पे है
और ऐतेबार उनकी हर इक दास्ताँ पे है
अहल-ए-नज़र समझते हैं इसकी हक़ीक़तें
दिल में नहीं वो बात जो उनकी ज़ुबाँ पे है

❋❋❋

❋

अर्श से आई निदा-ए-दिल-फ़िगार
शाइर-ए-बातिल परस्त ओ ना-बकार
मिदहत-ए-इंसाँ नहीं है शाइरी
शाइरी है मिदहत-ए-परवरदिगार

❋❋❋

❋

किये हम पे क्या क्या गुमां दोस्तों ने
मिटाया हमारा निशाँ दोस्तों ने
आसासा हमारा तो दोनो ने लूटा
मकाँ दुश्मनों ने जुबाँ दोस्तों ने

❋❋❋

❋

मेरी हस्ती भी कोई हस्ती नहीं
पारसाई न मय-परस्ती है
दर्द-ओ-ग़म का हुजूम है दिल में
एक दुनिया यहाँ भी बस्ती है

❋❋❋

हालत-ए-बेबसी से डरते हैं
और तेरी बे-रुख़ी से डरते हैं
लोग डरते हैं मौत से अक्सर
हम मगर ज़िंदगी से डरते हैं

***

वाइज़ की नज़र-ए-तंग में काफ़िर था उन दिनों
काफ़िर यह जानता है मुसलमाँ हूँ आजकल
'नैरंग' बदल रहा है ज़माने का रंग ख़ूब
तर्ज़-ए-अदा-ए-नौ में ग़ज़ल ख़्वाँ हूँ आजकल

***

ग़ज़ल के मुंतख़िब अशआर

(इस तरकश में बेहतर 72 तीर हैं)

तग-ओ-दू आज भी इंसान की बाग़-ए-जिनाँ तक है
हुआ रुस्वा जहाँ आदम नज़र उसकी वहाँ तक है

◆◆◆

सीम-ओ-ज़र का शाइरी से एक फ़ितरी बैर है
''शाइर-ए-हिंदुस्ताँ होना ख़ुदा का क़हर है''

◆◆◆

अदब जान समझो अदीबों की 'नैरंग'
तो क़द्र-ए-ज़ुबाँ एक शाइर से पूछो

◆◆◆

मुहब्बत की है मैं ने एतराफ़-ए-जुर्म करता हूँ
गुनाह था तो मिज़ाज-ए-आशिक़ाना किस लिए बख़्शा

◆◆◆

शे'र जब तक न शे'र हो 'नैरंग'
हम कभी मरहबा नहीं कहते

◆◆◆

छुपा सकता था अपना राज़-ए-दिल क्यूँकर भला 'नैरंग'
ग़मा-ओ-रंज-ओ-अलम ही जब मेरे अश्आर तक पहुँचे

◆◆◆

रुह-ए-'नैरंग' मज़हबों की क़ैद से आज़ाद है
वास्ता उसको नहीं है कुफ़्र व इस्लाम से

◆◆◆

वही सबसे भले हैं दुनिया में
जो किसी को बुरा नहीं कहते

◆◆◆

बनते हैं सब हरीफ़ जहान-ए-ख़राब में
आते हैं जब ख़राब किसी आदमी के दिन

◆◆◆

या तो कुछ आ गई कमी तेरे ही इल्तिफात में
या मेरी ही दुआओं में जो था असर बदल गया

◆◆◆

नाकामियों के बाद भी पा दर सफ़र तो है
मंज़िल की जुस्तुजू में बेचारा बशर तो है

◆◆◆

तुम देखते ही रह गए अग़्यार की तरफ़
और हम फ़क़त तुम्हारी नज़र देखते रहे

◆◆◆

'नैरंग'! शाइरी था मेरा मक़्सद-ए-हयात
मालूम क्या हो हाल मेरा शाइरी के बाद

◆◆◆

जब नमाज़ आई तो दुनिया में मसावात आई
अहल-ए-आलम में मसावात कहाँ थी पहले

◆◆◆

ताबीर-ए-ख़्वाब कुछ भी करें अहल-ए-दिल मगर
दुनिया है एक ख़्वाब-ए-परीशाँ मेरे लिए

◆◆◆

तुम मुअज़्ज़िन भी हो, नासेह भी हो, वाइज़ भी हो, शैख़
ये बताओ कि किसी वक़्त तुम इंसान भी हुए

◆◆◆

अर्श से दूर अगर तेरी तग-ओ-ताज़ नहीं
तू तो गुंजश्क-ए-फ़र-ओ-माया है शहबाज़ नहीं

◆◆◆

वही आवाज़-ए-हकीकत है जो दिल से निकले
लब से निकली हुई आवाज़ तो आवाज़ नहीं

◆◆◆

वाकि़फ़-ए-न ग़म से हो कोई तेरी नज़र तो है
काफ़ी है इस क़द्र भी कि तुझ को ख़बर तो है

◆◆◆

क्या ग़म जो बन्द हो गए दर हाए-ज़िंदगी
रहमत का दर खुला हुआ शामा-ओ-सहर तो है

◆◆◆

जब तक न एक दैर-ओ-हरम का हो फ़ैसला
मेरी जबीं है और तेरा संग-ए-दर तो है

◆◆◆

हर इक मक़ाम है तेरा हर इक तेरी मंज़िल
कोई बात दे कि सजदा कहाँ-कहाँ करते

◆◆◆

अज़्म-ए-सफर तो था मेरा जानिब-ए-काबा मोहतरम
आप की दीद से मगर अज़्म-ए-सफर बदल गया

◆◆◆

नहीं मौकूफ कुछ दैरा-ओ-हरम पर हज़रत-ए-वाइज़
जहाँ झुक जाए सर सजदे में उसको आस्ताँ कहिए

◆◆◆

मुझे भी कुछ न कुछ निस्बत है सरहद के पठानों से
चला जाए अगर सब कुछ वफ़ादारी नहीं जाती

◆◆◆

चमन-ए-दहर में आसूदा नहीं है कोई
गलु-ए-ख़ुशरंग को भी चाक-ए-गरेबाँ देखा

◆◆◆

ग़म-ओ-आलाम भी फ़ितरत को बदलते क्योंकर
जब गुल-ए-तुर्की की तरह ख़ारों में ख़न्दाँ भी हुए

◆◆◆

क्यों न हो चर्ख़ तेरी हीच नवाज़ी का गिला
महव-ए-आलाम यहाँ अहल-ए-हुनर आज भी है

◆◆◆

इश्क़ की राह में ऐसे भी मुक़ाम आते हैं
न जहाँ क़ैद से न दाम से डर लगता है

◆◆◆

कोई कह दे ज़बाँ रखने का मुँह में फायदा क्या है
किसी के सामने जब दास्ताँ हम कह नहीं सकते

◆◆◆

ग़म-ए-हयात से पाई है आगही मैंने
तमाम उम्र ग़मों में गुज़ार दी मैंने

◆◆◆

हम तो हर बात पर हैं चुप लेकिन
आप कहिए कि क्या नहीं कहते

◆◆◆

की गुफ़्तुगू तो दिल की शगुफ़्ता कली हुई
'नैरंग' की ज़बान, ज़बान-ए-बहार है

◆◆◆

जदीद रंग में लिखता हूँ अब ग़ज़ल 'नैरंग'
क़दीम रंग हो जब नागवार क्या कहिए

◆◆◆

आएगी मेरी याद मेरी ज़िन्दगी के बाद
होगी न रौशनी कभी इस रौशनी के बाद

◆◆◆

पस-ए-हयात यही शेर होंगे ऐ 'नैरंग'
अलावा इसकी तेरी यादगार क्या होगी

◆◆◆

फ़िरक़ा वारों की यह बस्ती है जिसे दुनिया कहें
काश रहता मैं इसी बस्ती मैं इंसानों के साथ

◆◆◆

मय-कदे में नमाज़ पढ़ लेंगे
काश साक़ी इमाम हो जाए

◆◆◆

मुझे मंजूर है फ़ाक़ा-कशी की आग में जलना
मगर अहसाँ कमीनों का गवारा हो नहीं सकता

◆◆◆

बे-नियाज़ी तेरी आदत ही सही
इश्क़ से साफ़ यह इंकार नहीं तो क्या है

◆◆◆

किसी के मुस्हफ़-ए-रुख़ पर नज़र रहती है 'नैरंग' की
ख़ुदा की शान काफ़िर भी मुसलमाँ होते जाते हैं

◆◆◆

यह है वो सरज़मीं जिस में रवादारी-ए-मज़हब है
बराबर एहतराम गीता-ओ-कुरआन करते हैं

◆◆◆

फ़िक्र रहती है यूँ मुझे हर दम
दर्द बढ़कर दवा न हो जाए

◆◆◆

ग़ज़ल ख़्वानी में हों पैदा नये अंदाज़ ऐ 'नैरंग'
ये अफ़साने तो दोहराए हुए मालूम होते हैं

◆◆◆

गामज़न होता हूँ जब शेख़ हरम की जानिब
हर क़दम पर मुझे बुत-ख़ाना नज़र आता है

◆◆◆

शब-ए-फ़ुर्क़त में मिला ग़म का सहारा मुझको
दीदा-ए-शौक में बरसात कहाँ थी पहले

◆◆◆

नहीं मालूम क्योंकर हूँ, कहाँ हूँ, कौन हूँ 'नैरंग'
मैं जिसके पास आया हूँ वो पहचाने तो अच्छा है

◆◆◆

अजल कुछ इन्तज़ार-ए-चन्द रोज़ा और भी कर ले
कि दुनिया को अभी मुझसे बहुत से काम बाकी हैं

◆◆◆

मेरी ख़ुदी से किसी का मुक़ाबला क्या है
हूँ सुर बुलंद क़फ़स में भी आशियाँ की तरह

◆◆◆

दिल-ए-शायर का सारा ख़ुश्क़ होता है लहू इस में
कहीं होती है जाकर पुख़्ताकारी-ए-सुख़्न बरसों

◆◆◆

यही पहचान हुनरमंद की होती है नदीम
वह ज़माने में हुआ करते हैं नादार बहुत

◆◆◆

आबरु, सेहत-ओ-ख़ुद-दारी-ओ-शक्ल-ए-इंसाँ
ग़र्ज़ हर चीज़ बिगड़ जाती है तक़दीर के साथ

◆◆◆

किस बात की 'नैरंग' है कमी जबकि ख़ुदा ने
बख़्शी है तुझे दौलत-ए-ईमान ज़्यादा

◆◆◆

अनादिल की तरह आह-ओ-फ़ुग़ाँ जब तक न हो 'नैरंग'
रमूज़-ए-गुल से तू हरगिज़ शनासा हो नहीं सकता

◆◆◆

हरीम-ए-इश्क़ में ख़ामोश हैं सदाएं भी
नमाज़ होती है लेकिन अज़ाँ नहीं होती

◆◆◆

बहा न अश्क मआल-शबाब पर 'नैरंग'
चमन है कौन सा जिसमें ख़िज़ाँ नहीं होती

◆◆◆

मेरा ज़ौक़-ए-तमन्ना ख़ुद मेरी मंज़िल का जोया है
बला से कोई मीर-ए-कारवाँ बाक़ी न रह जाये

◆◆◆

ऐ तही दस्त मैं तेरी तरह नादार नहीं
मेरे विर्से में है बाक़ी ग़म-ए-जानाँ अब तक

◆◆◆

युँ तो हर चीज़ ज़माने में गराँ है लेकिन
एक इंसाँ है जो क़ीमत में है अरज़ाँ अब तक

◆◆◆

दाने दाने को तरसकर जिसने दुनिया छोड़ दी
फिर कोई उसकी बनाने यादगार आया तो क्या

◆◆◆

इश्क़ अल्लाह की रहमत का निशाँ होता है
सब की किस्मत में ये एज़ाज़ कहाँ होता है

◆◆◆

उम्र पर कुछ नहीं मौकूफ़ जवानी की बहार
वो जवाँ होता है दिल जिसका जवाँ होता है

◆◆◆

हो न सज्दों की तड़प जिसमें वो पेशानी कहाँ
दिल किसी पर जब न कुर्बां हो तो कुरबानी कहाँ

◆◆◆

काबे में न बुतख़ाने में न कूए बुताँ में
तसकीन की सूरत नज़र आई न जहाँ में

◆◆◆

क्यों न ऐ 'नैरंग' मैं खुद ख़ादिमुश-शुअरा कहूँ
इनसे ही तो मैं शनासा-ए-ज़ुबाँ होता गया

◆◆◆

पारसाई की शरायत पीर-ए-मय-ख़ाना से पूछ
तर्क-ए-खुर्द-ओ-नोश से तो पारसा होता नहीं

◆◆◆

दार-ए-मंसूर चहे यूसुफ़-ओ-जुए फ़रहाद
इश्क़ की राह में हाइल नहीं होने पाते

◆◆◆

दौर-ए-हाज़िर की सियासत है ज़ुबानों का फ़साद
क्या मसाइल है जो हल नहीं होने पाते

◆◆◆

यूँ तो है सारी ज़िंदगी की ज़िंदगी ग़ज़ल
दिल है अगर मकान तो है रौशनी ग़ज़ल

◆◆◆

वफ़ा शुआर जो कल तक हबीब कहलाए
वो पूछते हैं कि तू कौन है कहाँ का है

◆◆◆

ख़ुदा करे कि न समझे कोई सियासत को
कहीं है झगड़ा ज़मीन का कहीं ज़ुबाँ का है

◆◆◆

हज़ार अफसोस है ऐसी ज़मीं पर हज़रत-ए-'नैरंग'
जहाँ मजबूरियों में शाइर-ए-ख़ुद्दार बिकते हैं

◆◆◆

यूँ तो है सारी ज़िंदगी की ज़िंदगी ग़ज़ल
किस दर्जा मुझको तुझ से है वाबस्तगी ग़ज़ल

('नैरंग')

नंद लाल 'नैरंग' ग़ज़ल के शाइर हैं, ग़ज़ल उनकी हदीस-ए-दिल है जिसमें वो अपनी रोदाद-ए-ज़िंदगानी और मुशाहिदात-ए-कायनात पर उम्दा तरीक़े से बयान कर सकते हैं। किसी शाइर ने ग़ज़ल के बारे में सच कहा है कि

ग़ज़ल में ज़ात भी है और कायनात भी है
हमारी बात भी है और तुम्हारी बात भी है

यानि यूँ कह सकते हैं कि : जो सुनता है उसी की दास्ताँ मालूम होती है। मगर ग़ज़ल कहना आसान नहीं क्योंकि बक़ौल उम्दा ग़ज़ल गो शाइर फ़िराक़ गोरखपुरी सिर्फ़ हासिल ख़ेज़ पुख़्ता मतलब-ओ-मतन ही ग़ज़ल की आन बान जान और पहचान है यानि उसमें कोई चीज़ सिवाए ख़ाम मज़मून-ओ-मतलब-ओ-बयान के ख़ाम नहीं हो सकता। शायद इसी लिए यह भी कहा गया कीः

ग़ज़ल अरबाब-ए-फ़न की आज़माईश है।

ग़ालिब ने ग़ज़ल की तंग दामनी का शिकवा किया जो उन्ही का जचता है, उनके मतालिब और तख़य्युल के बयान को ग़ज़ल का साग़र काफ़ी न था, ग़ालिब ने बिल्कुल सही कहा थाः ''कुछ और चाहिए वुसअत मेरे बयाँ के लिए'' लेकिन किसी मफ़लूब शाइर ने कुछ और समझकर कुछ इस तरह कहा कि मायने उसके कुछ और हो गएः

ग़ज़ल और तंग दामनी का शिकवा
सलीक़ा हो तो गुंजाईश बहुत है

ग़ज़ल पर एक तरफ़ गर्दन ''ज़दनी का हुक्म'' दूसरी नीम वहशी सिनफ़ का इल्ज़ाम तो तीसरी तरफ़ उर्दू शाइरी की आबरु का उसके सर पर ताज रखने की हिदायत, ग़र्ज़ आज के ग्लोबल विलेज और इक्कीसवीं सदी में भी नज़म के गुलज़ार में ग़ज़ल का ख़ास चमन है। जिस पर बुलबुल चहक रहे हैं और इन्हीं बुलबुलों में 'नैरंग' सरहदी भी नग़मासराई में मशगूल रहे। ग़ज़ल की जान तख़य्युल है जो हर अच्छे शाइर की पहचान है इसीलिए 'नैरंग' सरहदी एक उम्दा ग़ज़ल के शाइर होते हुए भी मुन्फ़रिद-ओ-क़तआ निगार, मसनवी नवीस और ख़ूबसूरत नज़्मों के ख़ालिक़ भी हैं।

हमारे इस कुलियात में 'नैरंग' सरहदी की डेढ़ सौ से ज़्यादा ग़ज़लें शामिल हैं। 'नैरंग' उर्दू और फ़ारसी में ग़ज़लें कहते थे। उमूमन उनकी ग़ज़लें छोटी या मुतवसता बहर में होती हैं, मगर बाज़ ग़ज़लें तूलानी बहर में भी है। वो क़ाफ़िया पैमाई नहीं करते थे और इनकी ग़ज़लें कम अज़ कम पाँच शे'र और ज़्यादा से ज़्यादा ग्यारह बारह शे'र की होती है। इनकी ग़ज़लें ज़्यादातर रदीफ़ दार यानि मरद्दफ़ होती हैं और मक़ता में तख़ल्लुस अमूमन होता है। इनकी ग़ज़ल सलीस, सादा, होते हुए भी फ़ारसी अरबी अल्फ़ाज़ के जाह-ओ-चश्म से मुज़य्यन रहती हैं। 'नैरंग' की नज़मों और क़तओं में अगर वाक़िआ निगारी, मन्ज़रकशी और बयानिया उपज की जलवागरी है तो उनकी ग़ज़लों में दाख़िलियत जज़्बात निगारी और जबान बरतने की हुनरमंदी अपने उरुज पर है। 'नैरंग' चूंकि फ़ारसी मे मोअल्लिम और क़ादिरुलकलाम शाइर थे। अरबी, हिन्दी, पंजाबी, संस्कृत और अंग्रेज़ी से वाक़िफ़ थे। इसलिये तख़य्युल को क़रतास के जामे में पेश करना उनके लिए मुश्किल काम न था। 'नैरंग' का मुताल वसीअ, दक़ीक़ मुशाहिदा, और मुन्फ़रिद अंदाज़-ए-बयान ने मिलकर ग़ज़ल को आम ग़ज़ल गवैयों से अलैहदा रंग दिया जिसकी जबान टकसाल बाहर न थी। यह सच है कि चिराग़ से चिराग़ जलता है, दुनिया में बातें

दोहराई जाती हैं इसके बावजूद 'नैरंग' की ग़ज़ल की इंफ़रादियत और उसका तीखापन जिसमें तंज और मज़ाह की चाश्नी भी मौजूद होती है ग़ज़ल को पुर-असर बना देती है।

'नैरंग' सरहदी की एक मश्हूर आठ शे'र की मरद्दफ़ ग़ज़ल है जिसका मतला हैः

चमन में तूने मुझका आशियाना किसलिए बख़्शा
किसी क़ाबिल न था तो आब-ओ-दाना किसलिए बख़्शा

ग़ज़ल इस्तफ़हामिया या सवालिया लहजे में है और सवाल अपने मालिक और ख़ालिक़ से है। इसमें ज़िंदगी के मसाइल और रोज़ाना पेश आने वाले वाक़िआत का नक़्शा नज़र आता है। अगरचे हर शे'र इकाई है लेकिन इस में शाइर की तमाम ज़िंदगी मुन्अकस है। इस ग़ज़ल में शाइर की आपबीती और कई ज़ावियों से दूसरे हुनरमंदों की ज़िंदगी के रुख़ नज़र आते हैं। यह रोमानी, हुस्न परवर शाइर, जो बुलंद परवाज और आलिम है, जिसे ऐसे मुक़ाम पर रखा गया है जहाँ वो गुमनाम है तो लोगों को उसकी क़द्र-ओ-मंज़िलत का पता नहीं इसीलिए शाइर पूछ रहा है कि यह शाइरी की सआदत जो बाजू के ज़ोर से नहीं बल्कि अर्श से हासिल होती है तो ''शाइर बना कि क्यों मेरी मिट्टी ख़राब की'' यह ख़ूब सूरत ग़ज़ल के चार पांच शे'र जो खुद सवाल के साथ हैं सुनिए।

चमन में तू ने मुझ को आशियाना किस लिए बख़्शा
किसी क़ाबिल न था तो आब-ओ-दाना किस लिए बख़्शा

◆◆◆

मुहब्बत की है मैं ने एतराफ़-ए-जुर्म करता हूँ
गुनाह था तो मिज़ाज-ए-आशिक़ाना किस लिए बख़्शा

◆◆◆

नसीबों में अगर मेरे था पस्ती का मकीं होना
कर्म से अपने जज़्ब-ए-ताइराना किस लिए बख़्शा

अगर गुमनाम रहने की मुझे तलक़ीन थी यारब
मेरे इज़हार को ज़ौक़-ए-तराना किस लिए बख़्शा

◆◆◆

अगर तज़्लील थी मक़्सूद मेरी तेरी दुनिया में
तो इल्म-ओ-फ़न का मुझ को ये ख़ज़ाना किस लिए बख़्शा

◆◆◆

मेरे जज़्बात जब देते हैं पैग़ाम-ए-बक़ा सब को
मुझे ना-क़द्रदाँ तू ने ज़माना किस लिए बख़्शा

◆◆◆

ज़बाँ बंदी का मेरे वास्ते गर हुक्म था 'नैरंग'
तो फिर मुझ को मज़ाक़-ए-शाइराना किस लिए बख़्शा

'नैरंग' सरहदी जैसे बा-ज़ौक़ शाइर को रेवाड़ी जैसा मुक़ाम जहाँ उर्दू शाइरी के क़द्र-दान कम थे। बात यह है कि मशियत का कोई काम मसलहत से ख़ाली नहीं। अगरचे 'नैरंग' को अपनी ज़िंदगी में अपने मुक़ाम पर अपने दौर में वो शाइरी में मक़ाम नहीं मिला जिसके वो मुस्तहिक़ थे लेकिन शायद क़ुदरत को यह मंज़ूर था कि उनके मरने के बाद उनके काम की तश्हीर की जाए चंनांचे आज तक़रीबन पचास साल बाद तमाम उर्दू दुनिया में उनका कलाम पहुँच रहा है जो उनको उम्र-ए-जाविदानी देगा।

मीर तक़ी 'मीर' से नहीं बल्कि वली दक्कनी से आज तक उर्दू शेअरियत में ''अहिस्ता आहिस्ता'' की रदीफ़ में ग़ज़लें मौजूद हैं। तक़रीबन हर बड़े शाइर ने भी इस बहर और इसी रदीफ़ में ज़ोर आज़माई की है। 'नैरंग' ने भी ग्यारह शे'र की ग़ज़ल लिखी उसके दो शे'र यह हैं।

न घबरा गर मुक़द्दर में अगर ताख़ीर हो जाए
बदलता है सदा दौर-ए-ज़माँ आहिस्ता-आहिस्ता

हुजूम-ए-ग़म में अक्सर मुस्करा कर बात करता हूँ
किसी पर हो न राज़-ए-दिल अयाँ आहिस्ता-आहिस्ता

'नैरंग' सरहदी ने जैसे कहा है कि उनकी शाइरी पर क़दीम शे'र और असात्ज़ा का असर है अगरचे कि वो मुक़ल्लिद नहीं। इन मिसरों में जबान देखिए।

निकाला चाहते हो बज़्म से अच्छा, ख़ुदा हाफिज़

◆◆◆

अगर उसकी रज़ा मद्द-ए-नज़र हो हज़रत-ए-'नैरंग'

इसी ग़ज़ल के इस शे'र में सनअत-ए-इश्तिक़ाक़ और सनअत-ए-मुरा'आतुन्नज़ीर से महफूज़ होते हुए शेर में बात बरतने का अंदाज़ भी मुलाहिज़ा करें।

सनअत-ए-इश्तिक़ाक़ = न जाने, जाने वाले
सनअत-ए-मुरा'आतुन्नज़ीर = दर, मंज़िल, कारवाँ, रवाना पहुँचेंगे।

न जाने, जाने वाले कब दर-ए-मंज़िल पे पहुँचेंगे
रवाना हो रहे हैं कारवाँ आहिस्ता-आहिस्ता

'नैरंग' अगरचे सेक्यूलर, तरक़्क़ीपसंद ज़ेहनियत के तख़्लीक़कार थे लेकिन वो वहदत-ए-परवरदिगार में यक़ीन रखते थे वो भक्ती की मुहब्बत और इश्क़ के मसायल से न सिर्फ़ वाक़िफ थे बल्कि जो इसका इरफ़ान था उसके वो योगी भी थे। उनके बाज़ इश्क़ी शेरों इश्क़े मजाज़ी और इश्क़े हक़ीक़ी की ख़ुश्बू महसूस कर सकते हैं।

इश्क़ की राह में ऐसे भी मुक़ाम आते हैं
न जहाँ क़ैद से न दाम से डर लगता है

अपने वजदान की रौशनी में अपना मुहासिबा करने वाला, अपने नफ़्से अम्मारा से लड़ने वाला अपने गुज़रे हुए पर तौबा करने वाला बड़ा दिलेर होता है। इन खुसूसियात की झलक मक़्ते मे देखें:

जब नज़र पड़ती है आमाल पे अपने 'नैरंग'
मुझ को गुज़रे हुए अय्याम से डर लगता है

'नैरंग' की ग़ज़ल में फ़ितरी रचाव और बसाव है उसमें अल्फ़ाज़ फ़ितरी तौर पर कुछ मिसरों में ऐसे खप जाते हैं कि उनकी साख़्त और मायनी आफ़रीनी पर सहल ममतनाअ का गुमाँ होने लगता है। सनअत-ए-तज़ाद और सलीस सादगी को देखें:

किसी ना-मेहरबाँ को मेहरबाँ हम कह नहीं सकते
क़फ़स सोने का भी हो आशियाँ हम कह नहीं सकते
सनअत-ए-तज़ाद = ना मेहरबाँ-मेहरबाँ, क़फ़स-आशियाँ
न जाने क्या असर होता है हम पर उनकी महफ़िल में
यहाँ कहते हैं हम जो कुछ वहाँ हम कह नहीं सकते

जिस पाँच शे'र की मरद्दिफ़ ग़ज़ल की मुश्किल रदीफ़ ''हम कह नहीं सकते'' मैं जो छोटी बहर में 'नैरंग' ने गुल खिलाए हैं इस में मक़्ता में एक इज़ाफ़त के अलावा कोई तरकीब या तलमीह से इस्तिफ़ादा नहीं। 'नैरंग' जहाँ मौक़ा होता है अपनी उर्दू मुहब्बत और उसके साथ होने वाला मुआन्दाना बर्ताव पर दलील देकर एहतजाज भी करते हैं।

ज़यादा इससे तौहीन-ए-अदब क्या होगी ऐ 'नैरंग'
बुज़ुर्गों की ज़बाँ को भी ज़बाँ हम कह नहीं सकते

'नैरंग' की ग़ज़ल-निगारी में तज़ाद और तकरार नुमायाँ हैं। 'नैरंग' बाज फ़ारसी अल्फ़ाज़ फ़ारसी मायनी में इस्तेमाल करते हैं जैसे ज़ैल के शे'र में तमीज़ ज़ाहिर-ओ-बातिन यानि ज़ाहिर और बातिन में फ़र्क़ करना। 'नैरंग' शाइरी में ऐलान नून भी जायज़ समझते हैं। जैसे ज़ाहिर-ओ-बातिन 'नैरंग' ने अस्ताज़ा से अल्फ़ाज़ को मायने ख़ेज़ बनाने के लिए ''इ'' का इस्तेमाल सीखा है।

तमीज़ ज़ाहिर-ओ-बातिन मैं किस तरह करता
किसी से दुश्मनी की है न दोस्ती मैंने
सनअत-ए-तज़ाद : ज़ाहिर-बातिन, दोस्ती-दुश्मनी, है-न

ग़म-ए-हयात से फ़ारिग़ हूँ इसलिए 'नैरंग'
ग़मी को समझा नहीं है कभी ग़मी मैंने

इस शे'र में ग़म से ग़मी तकरार नहीं और है कि तज़ाद शे'र को संवार रहे हैं। अगर उर्दू ग़ज़ल में छोटी बहर, जिसकी मन्फ़ी रदीफ़ ''नहीं कहते'' मैं कहने का अंदाज़, तकरार और तज़ाद के साथ देखना, हो तो 'नैरंग' की यह आठ शे'र की ग़ज़ल ज़रुर पढ़िये। मतला और मक़ता देखें:

ना रवा को रवा नहीं कहते
हम सनम को ख़ुदा नहीं कहते
शे'र जब तक न शे'र हो 'नैरंग'
हम कभी मरहबा नहीं कहते

सनअत-ए-तज़ाद-ओ-तकरार = नारवा-रवा, शे'र-शे'र, न-हो।

अशआर ख़ुद मायने बता रहे हैं। मक़ते में शेर को शे'र कहने के लिए शे'र में क्या शे'री लवाज़मात और बालीदगी की ज़रुरत है, शाइर ने सहल मुम्तना में नहीं कह कर। एक लफ़्ज़ मरहबा में शे'र की तहसीन का हक़ अदा कर दिया।

आज़माते हैं एक बार जिसे
हम उसे बारहा नहीं कहते
हम तो हर बात पर हैं चुप लेकिन
आप कहिए कि क्या नहीं कहते

◆◆◆

वही सबसे भले हैं दुनिया में
जो किसी को बुरा नहीं कहते

नफ़सियात, अख़्लाक़ियात, रफ़तार-ओ-किरदार यह सब क़द्रें ज़िंदगी की क़ीमती और इंसाँ की शनाख़्ती क़द्रें हैं। शाइरी, शाइर की फ़िक्र का आईना है। अगर हम 'नैरंग' शनासी चाहते हैं तो अशआर की रौशनी में उनके इक़दामात और उनके कलाम का मुतालऐ करें। ग़ज़ल के कारवाँ में हर शे'र एक मुसाफ़िर की तरह आप अपना

तआर्रुफ़ है। गुफ़तगू रोज़मर्रा में है जिसकी नसर क्या हो सके जो ख़ुद नसरी फ़िक़रों के मानिंद हैं। मिसरों के अल्फ़ाज़ चुप से कहने में, भले को बुरा से जुदा करने में ऐसा इस्तेमाल किया गया है कि मिसरों की रवानी बहता हुआ पानी मालूम होता है और यह उम्दा शाइरी की शनाख़्त है।

'नैरंग' सरहदी की छोटी बहर में ''के बाद'' रदीफ़ में लिखी गई इस ग़ज़ल के बाज़ मिसरों की ख़ुसूसियत उनकी नग़मगी है जो तकरार और क़ाफ़ियादार अल्फ़ाज़ की वजह से बढ़ गई है। मतला में हमें मेरी, ज़िंदगी, होगी, कभी रौशनी के साथ साथ मेरी, मेरी और रौशनी की तकरार भी है।

आएगी मेरी याद मेरी ज़िन्दगी के बाद
होगी न रौशनी कभी इस रौशनी के बाद

'नैरंग' की ज़िंदगी फ़लक की ज़्यादतियों का निशाना रही उन्हें यह भी तश्वीश थी कि जो शाइरी उनकी ज़िंदगी का मक़सद थी उसका हश्र उनके बाद क्या होगा।

मुझ को सितम से चर्ख़ के हर गिज़ गिला नहीं
जानेगा मुझ को वो भी मेरी दुश्मनी के बाद

◆◆◆

आती है याद आदमी की आदमी के बाद

◆◆◆

'नैरंग'! शाइरी था मेरा मक़्सद-ए-हयात
मालूम क्या हो हाल मेरा शाइरी के बाद

एक फ़ारसी का शाइर कहता है यह विसवास न कर कि जब तू मर जाएगा दुनिया भी तमाम हो जाएगी हमने देखा है हज़ारों शमें जलकर राखा हो गईं लेकिन दुनिया की महफ़िल जारी है।

गुमाँ मबर कि तू बगज़री जहाँ बगज़ोर
हज़ार शमा राक्शतन हनूज़ महफ़िल बा-कैसत

'नैरंग' कहते हैंः

वो हाल होगा बज़्म-ए-ज़हाँ का मेरे बग़ैर
होता है रंग बज़्म का जो बरहमी के बाद

'नैरंग' की ग़ज़लों में दो तीन शे'र बड़े उम्दा होते हैं जिनकी मायनी आफ़रीनी इन अशआर को बड़ी शाइरी में शुमार करवाती है। हमें मालूम है कि वो कसीर मुतालए और मुश्ताक़ शाइर थे जिसकी बदौलत उनके अशआर में गहराई के साथ गिराई भी है। ज़ैल के दो शे'र देखिए किस ख़ूबसूरती और आसानी से किस क़द्र मुश्किल मज़मून को बांधा है।

वही आवाज़-ए-हक़ीक़त है जो दिल से निकले
लब से निकली हुई आवाज़ तो आवाज़ नहीं

◆◆◆

अर्श से दूर अगर तेरी तग-ओ-ताज़ नहीं
तू तो गुंजश्क-ए-फ़र-ओ-माया है शहबाज़ नहीं

दूसरे शे'र पर इक़बाल का गहरा असर है। इंसान के इख़्तियार में है कि वो ज़मान, मकान तोड़कर बाहर जा सकता है। इसके ''सुल्तान'' यानि इश्क़ की ज़रुरत है। शहबाज़ यानि उक़ाब बुलंद परवाज़ है लेकिन चिड़िया अदना सा परिंदा है जिसकी परवाज़ बुलंद नहीं। 'नैरंग' इस्तआरों में शे'र के मायने रौशन कर रहे हैं।

मीर 'अनीस' ने कहा थाः

किसी की एक तरह से बसर हुई न अनीस
उरुज-ए-महर भी देखा तो दोपहर देखा

'नैरंग' सरहदी ने एक पाँच शे'र की मुरद्दिफ़ ग़ज़ल में तीन शे'र में इसी मज़मून को ख़ूबसूरत हुस्न तालील की सनअतों में पेश किया। कहते हैं दुनिया के चमन में कोई भी आराम से बसर नहीं करता, ख़ूबसूरत फूल भी गिरेबाँ चाक किये खड़ा था। कहते हैं बुलंदी पर भी जाकर कोई खुश न था हमने बुलंदी पर बादल को भी आंसुओं

से रोते देखा। किससे क़िस्मत और तक़दीर का शिकवा करें, सब हमारी ही तरह परेशान थे। इन मतालिब को किस ख़ूबसूरती, चुस्ती और फ़न्नी दिलकशी के साथ शाइर ने पेश किया है।

चमन-ए-दहर में आसूदा नहीं है कोई
गलु-ए-ख़ुशरंग को भी चाक-ए-गरेबाँ देखा

◆◆◆

नहीं मुमकिन कि बलन्दी पे भी राहत हो नसीब
हमने इस औज पे बादल को भी गिरियाँ देखा

◆◆◆

किससे महरूमी-ए-किस्मत की शिकायत कीजिए
हमने अपनी ही तरह सबको परशाँ देखा

'नैरंग' की एक ग्यारह अशआर की ग़ज़ल में इरफ़ानियत की झलक तक़रीबन तमाम शे'रों से छलक रही है। अल्फ़ाज़ का दर-ओ-बस्त मजाज़ी और हक़ीकी इश्क़ क दरमियान गुलकारी कर रहा है। शाइर मुत्मईन है उसे ग़म रोज़गार शिकस्त न दे सके क्योंकि उसकी जबीन एक ऐसे आस्ताने पर रखी हुई है जहाँ ना-उम्मीदी नहीं है। अशआर में तस्कीन और इतमीनान का लहजा मुलाहिज़ा हो।

क्या ग़म जो बन्द हो गए दर हाए-ज़िंदगी
रहमत का दर खुला हुआ शामा-ओ-सहर तो है
(तज़ादः बंद -खुला, शाम - सहर)

◆◆◆

ये और बात है कि ज़बाँ से न कुछ कहूँ
इज़हार-ए-राज़-ए-दिल के लिए चश्म-तर तो है

◆◆◆

जब तक न एक दैर-ओ-हरम का हो फ़ैसला
मेरी जबीं है और तेरा संग-ए-दर तो है

◆◆◆

आख़री शे'र में सनअत-ए-मराअतुन्नज़ीर की वुसअत मुलाहिज़ा

हो। (दैर, हरम, जबीन, संग-ए-दर वग़ैरह) 'नैरंग' की ग़ज़ल की कामयाबी की वजह यह भी है कि वो मज़मून को उरुज पर पहुंचाकर ऐसी ज़र्ब पर तमाम करते हैं कि यह असर रखे बग़ैर ख़त्म हुआ मकान पज़ीर नहीं। शइार कह रहा है कि दुनिया में फ़ितरत का जोश और हर पत्ते में परवरदिगार की सन्नाई, तमाम मख़्लूक़ात में ख़ालिक़ की झलक देख रहा है। लेकिन इसके साथ अशरफुल मख़्लूक़ इंसानों में बड़े फ़र्क़ और तफ़रीक़ के मनाज़िर, कहीं ऐश-ओ-तर्ब तो कहीं मातम-ओ-ग़म, कहीं ख़िलवत तो कही जलवत, कहीं पुर-ख़ोरी तो कहीं भूक की शिद्दत देख रहा है। लेकिन आख़िर सब को एक ही सतह पर ज़मीन क नीचे देख रहा है।

रक़्साँ हैं कहीं ऐश-ओ-तरब शौक से बाहम
बरपा किसी जा मातम-ओ-ग़म देख रहा हूँ

◆◆◆

जलवत है गरांबार किसी जान-ए-हज़ीं पर
ख़िलवत में कहीं लुत्फ़-ए-इरम देख रहा हूँ

◆◆◆

सब कुछ है बजा देख मगर हज़रत-ए-'नैरंग'
मैं ज़ेर-ए-ज़मीं सबको बहम देख रहा हूँ

'नैरंग' क़ादिर-उल-कलाम और कुहना मश्क़ शयर है और वो इसी लिए डेढ़ सौ से ज़्यादा ग़ज़लियात में फ़न की पुख़्तगी के साथ हुनर नुमाई भी करते हैं। अगरचे उनकी रग़बत छोटी बहर जो मुतरन्नम और मुरद्दिफ़ यानि रदीफ़ की हामिल भी हो। यह हम सब जानते हैं रदीफ़ मिसरे के ग़नाई असर को बढ़ा देती है। शाइर ने ग़ज़ल में ख़ूबसूरत तजरबात करके ग़ज़ल के मिज़ाज को समझने और समझाने की भी कोशिश की है। ज़ैल में उनकी आठ शे'र की छोटी बहर में ग़ज़ल के मिसरों को देखिए जिनमें सिर्फ़ एक लफ़ज़ क़ाफ़िया है और बाक़ी पूरी रदीफ़।

ख़ाकसारों को होश आ जाए
शहरयारों को होश हो आ जाए

◆◆◆

तेरी मिझ़गान के तसव्वुर से
ख़ारज़ारों को होश आ जाए

◆◆◆

महव-ए-गरिया अगर मुझे देखें
आबशारों को होश आ जाए

इसी तरह से दो लफ़्ज़ का तरकीबी या मज्मुई लफ़्ज़ क़ाफ़िया में रखकर दिलकश मायने आफ़रीनी भी करते हैं। जो एक कामयाब ग़ज़ल गो का अदना सा करिश्मा है।

गर पिला दे तू चश्म मेगों से
बादा ख़्वारों को होश आ जाए

◆◆◆

सहन-ए-गुलशन में तेरे आने पर
नौ-बहारों को होश आ जाए

◆◆◆

तू हटा दे नक़ाब चेहरे से
चांद तारों को होश आ जाए

यहाँ रदीफ़ का कमाल यह है कि एक ही क़िस्म के अल्फ़ाज़ मुख़्तलिफ़ मौजुआत में मुख़्तलिफ़ रंगों की धनक से मिसरे को रंगीन तर बना देते हैं। 'नैरंग' सरहदी चूंकि उर्दू तहज़ीब के अलम बरदार थे वो फ़ारसी और उर्दू शाइरी के नब्बाज़ भी थे उन्होंने ने सिर्फ़ तल्मीहात इस्तलाहात और मज़हबी नुकात को उम्दा तौर पर अपनी शाइरी में बरता बल्कि उन्हें इस्तआरे और अलामात का रंग भी दिया। 'नैरंग' की शाइरी और ब-ख़ुसूस ग़ज़ल में मस्जिद-ओ-मंदिर, अज़ान-ओ-नाक़ूस, कलावा-ओ-ज़िनार, कुरआन-ओ-गीता, हरम-ओ-दैर,

काबाह व बुतकदा, तस्बीह-ओ-सिमरन और मुख़्तलिफ़ तसव्वुफ़ और भक्ति की शाइरी के अवाम की गुफ़तगू अक़ीदती तनाज़िर और बाज़ वक़्त तंज़-ओ-मज़ाह के चटख़ारे के साथ मिलते हैं। इस तमाम नुकात के बयान के लिए हमारे पास इस मज़मून में गुंजाईश नहीं, शायद आईंदा स्कालरस इस पर तहक़ीक़ी और तन्क़ीदी काम करेंगे। यहाँ दो तीन उम्दा शे'र जदीद मज़मून के साथ रक़म करते हैं।

जब नमाज़ आई तो दुनिया में मसावात आई
अहल-ए-आलम में मसावात कहाँ थी पहले

हरीम-ए-इश्क़ में ख़ामोश हैं सदाएं भी
नमाज़ होती है लेकिन अज़ाँ नहीं होती

काबे में न बुतख़ाने में न कूए बुताँ में
तसकीन की सूरत नज़र आई न जहाँ में

दौर-ए-हाज़िर की सियासत है ज़ुबानों का फ़साद
क्या मसाइल है जो हल नहीं होने पाते

तग-ओ-दू आज भी इंसान की बाग़-ए-जिनाँ तक है
हुआ रुस्वा जहाँ आदम नज़र उसकी वहाँ तक है

रुह-ए-'नैरंग' मज़हबों की क़ैद से आज़ाद है
वास्ता उसको नहीं है कुफ़्र व इस्लाम से

पस-ए-हयात यही शेर होंगे ऐ 'नैरंग'
अलावा इसकी तेरी यादगार क्या होगी

'नैरंग' सरहदी ने ख़ुद अपनी शाइरी पर रिव्युव करते हुए

लिख है कि ''शाइर जो कुछ क़लमबंद करता है वो तख़्लीक़ उसके दिली जज़्बात की आईना होती है। उस पर हवादिस का असर बहुत ज़्यादा होता है उसके दिल का ज़र्फ़ अपने आप छलक जाता है। शाइर उस वक़्त उन जज़्बात का रोकना भी चाहे तो वो रोक नहीं सकता। मेरी शाइरी भी उन्हीं जज़्बात का मुरक़्क़ा और मजमुआ है।''

'नैरंग' के मुख़्तलिफ़ मन्जुमात को क़सायद की सफ़ में रख सकते हैं जिसमें किसी क़िस्म की लालच या शोहरत की ज़मानत नहीं बल्कि उन उम्दा लोगों की तारीफ़-ओ-तम्जीद होती है जो नेक, ख़ुदाकार, जांनिसार, मुहिब्बे क़ौम-ओ-मिल्लत अफ़राद होते हैं जिनका शुक्रिया अदा न करना इंसाफ़ नहीं। इसी तरह बाअज़ मन्जूमात में मिरासी की शक्ल में उनकी ख़िदमात का एतराफ़ और उनके गुज़र जाने का ग़म रक़म किया गया है। कई उम्दा नज़्में हुब्बुल वतनी और बरगज़ीदा हस्तियों के मुताल्लिक़ हैं। 'नैरंग' सरहदी उर्दू जबान-ओ-अदब के सच्चे आशिक़ थे। वो न सिर्फ़ उर्दू फ़ारसी के मोअल्लिम थे बल्कि वो उर्दू का बर्र-ए-सग़ीर की आला जबानों की सफ़ में देखना भी चाहते थे, चुनांचे तक़सीम-ए-हिन्द के बाद जो गुस्सा उर्दू पर निकाला जा रहा था वो उसके सख़्त मुख़ालिफ़ थे उन्होंने कई अशआर मुख़्तलिफ़ हस्तियों पर उर्दू की हिमायत में लिखे शायद ही उर्दू का कोई दूसरा शाइर उनकी तरह खुलकर वो मतालिब बयान करे जो 'नैरंग' ने लिखे हैं। नज़्म होकि मसनवी, क़तआत हों कि ग़ज़लियात और रुबाइयात इस मौज़ु पर 'नैरंग' के हस्सास और आबदार अशआर उनकी यादगार हैं जिसे हमने इस कुल्लियात में कई इनावें के तहत पेश भी किया है।

जहाँ तक ग़ज़ल का ताल्लुक़ है उनके कलाम में जदीद और क़दीम ग़ज़ल के नमूने नज़र आते हैं हम इस तहरीर में ग़ज़ल ही के अशआर से मतालिब, मुबाहिस और हवाले पेश करेंगे

'नैरंग' कहते हैं

जदीद रंग में लिखता हूँ अब ग़ज़ल 'नैरंग'
कदीम रंग हो जब नागवार क्या कहिए

◆◆◆

ग़ज़ल ख़्वानी में हों पैदा नये अंदाज़ ऐ 'नैरंग'
ये अफ़साने तो दोहराए हुए मालूम होते हैं

एक और ग़ज़ल में इस तरफ़ ताकीद करते हैं।

जदीद अंदाज़ इसलिए भी वक़्त की ज़रुरत थी और आज भी है कि फ़िरक़ावारियत, सरमाया दारी, जो क्लासिक या क़दीम ग़ज़लों में नहीं थी या ख़ाल ख़ाल थी उसकी आज के दौर में सख़्त ज़रुरत है।

'नैरंग' ने इसी मज़्मून की अक्कासी यहाँ की है।

फ़िरक़ा वारों की यह बस्ती है जिसे दुनिया कहें
काश रहता मैं इसी बस्ती मैं इंसानों के साथ

◆◆◆

क्या हुई यह ज़िंदगी की इक सुनहरी याद है
दिन गुज़रते थे जब अपने 'सरहदी' ख़ानों के साथ

◆◆◆

क्या कहूँ थी किस क़द्र अपनी हसीं वो ज़िंदगी
दिन बसर होते थे अपने जब सुख़न-दाँवं के साथ

ग़ज़ल में दाख़लियत के साथ ख़ारजी मुशाहिदे को मिलाकर जो जज़्बात के रंग पैदा किये जाते हैं। उनका असर शदीद रहता है। शाइर एक दूसरे ग़जल में मसावात, भाई चारगी और मुख़्तलिफ़ धर्मों में इत्तिहाद और मुहब्बत का प्रचार करता नज़र आ रहा है वो दरअसल जदीद मौजुआत से ग़ज़ल को आशना कर रहा है। ज़ैल क तीन शे'र सुनिए।

नाकूस की आवाज़ में और शोर-ए-अज़ाँ में
कुछ फ़र्क़ नहीं दोनों के अंदाज़ ए बयाँ में

काबे में न बुतख़ाने में न कूए बुताँ में
तसकीन की सूरत नज़र आई न जहाँ में

◆◆◆

तय हो न सका शेख़-ओ-बरहमन में अभी तक
तू काबे में मिलता है कि तस्वीर-ए-बुताँ में

शाइर ने जो शैख़-ओ-बरहमन, हरम-ओ-बुतकदा, अज़ान और नाकूस को ज़ाहिरी जुदागाना शक्ल-ओ-कैफ़ियत को अन्दोरानी यकजहती से बताने की कोशिश में जो मज़मून बंदी की है वो भी जदीद ग़ज़ल का तक़ाज़ा है।

'नैरंग' फ़िराक़ गोरखपुरी के मिसरेः ''क़ाफ़िले आते गए हिंदुस्ताँ बनता गया'' की तरह भारत की सरज़मीन के मुताल्लिक़ लिखते हैं।

तकलीफ़ क्या चला आए यहाँ पर जिसका जी चाहेए
यह वो घर है जहाँ ग़ैरों को भी मेहमान करते हैं

और फिर रवादारी के ज़ैल कहते हैं।

यह है वो सरज़मीं जिस में रवादारी-ए-मज़हब है
बराबर एहतराम गीता-ओ-कुरआन करते हैं

फिर ज़मीन और जबान के बारे में कहते हैं।

ख़ुदा करे कि न समझे कोई सियासत को
कहीं है झगड़ा ज़मीन का कहीं ज़ुबाँ का है

'नैरंग' ने हर जगह हक़ गुफ़तारी की है और वो उसे शाइर का फ़रीज़ा-ए-तलक़ीन करते हैं इसी लिए यह सवाल भी करते हैंः

कोई कह दे ज़बाँ रखने का मुँह में फायदा क्या है
किसी के सामने जब दास्ताँ हम कह नहीं सकते
किसी के सामने जब दास्ताँ हम कह नहीं सकते

'नैरंग' की तमाम ज़िंदगी माद्दी और माली मुश्किलात में कटी लेकिन उन्होंने ज़िंदगी में हार न मानी कभी अपने क़लम को नहीं बेचा

जबकि उनकी नज़र में देश में क़लमकारों तख़्लीक़कारों को ख़रीदा जा रहा था, क्योंकि वो ग़रीब थे। इसीलिए 'नैरंग' ने उन हुनरमंदों की शनाख़्त में बताया था।

यही पहचान हुनरमंद की होती है नदीम
वह ज़माने में हुआ करते हैं नादार बहुत

◆◆◆

हज़ार अफसोस है ऐसी ज़मीं पर हज़रत-ए-'नैरंग'
जहाँ मजबूरियों में शाइर-ए-ख़ुद्दार बिकते हैं

'नैरंग' सरहदी ने इंतक़ाल से तीन चार साल क़बल एक ग़ज़ल अठारह जुलाई 1970 ईंसवी को छः अशआर की लिखकर मक़तेए में कहा कि शायद यह उनकी ज़िंदगी की आख़िरी ग़ज़ल है : 'नैरंग' न हो यह ज़िंदगी के आख़िरी ग़ज़ल'' इसी ग़ज़ल के पहले मिसरे को हमने इस मज़मून का सर नामा-ए-सुख़न भी बनाया है। हम इस तहरीर को उन के दो शे'रों पर तमाम करते हैं जिसमें उन्होंने अपनी ज़िंदगी, बंदगी, साज़िंदगी-ओ-अमानदगी, की रौशनी भी दी है जो उनकी शाइरी के चिराग़ की ताबंदगी की वजह से है।

जाऊँ कहाँ-कहाँ मैं इबादत के वास्ते
दिल का हरम है और मेरी बंदगी ग़ज़ल

◆◆◆

छेड़ा है मैं ने साज़-ए-मुहब्बत के तार को
निकली है उसकी लय से मुहब्बत भरी ग़ज़ल

‘नैरंग’ की सहरा और विदा निगारी

हमें नहीं मालूम कि ‘नैरंग’ सरहदी ने कितने सेहरे और विदा की नज़्में लिखीं। उनकी बियाज़ों से दस्तयाब मन्ज़ूमात से यह मालूम होता है कि उनके एक दर्जन लिखे हुए सेहरे और एक अदद विदा उनकी बियाज़ों में महफ़ूज़ हो गए।

- ‘नैरंग’ सरहदी ने एक मुख़्तसर तारीख़ी तहरीर सेहरे पर लिखी जो कुल्लियात का जुज़व है। यह तहरीर मार्च 1942 ईसवी की है। ऐसा मालूम होता है कि ‘नैरंग’ सरहदी जब पेशावर में थे तो सेहरे बहुत लिखते थे जैसा कि ख़ुद लिखते हैं : ‘‘राक़िम ने बहुत से सेहरा हान सुर्पुद-ए-क़लम किये हैं जिनमें अकसर सनत तो शेख़ में है।’’
- ‘नैरंग’ ने तमाम सेहरे ग़ज़ल की हैय्यत में लिखे जिस में मतला और मक़्ता शामिल था।
- ‘नैरंग’ ने एक विदा लिखी जिसके ऊपर लिखा नसीहते पिदर-ए-दुल्हन की रुख़्सत पर यह नज़्म मसनवी की हैय्यत में है।
- सेहरों में उम्दा तर्ज़े बयान, बाज़ औक़ात दुल्हा दुल्हन और उनके वालदैन के नाम भी नज़र आते हैं।
- तमाम सेहरों की रदीफ़ ‘‘सेहरा’’ है।
- यह सेहरे मुहाजिरत से पहले और मुहाजिरत के बाद के हैं। पहला सेहरा कब कहा गया मालूम नहीं लेकिन आख़िरी सेहरा फ़रवरी 1969 को ‘‘विपिन सन्चा’’ के लिए कहा गया।

- ''नैरंग'' ने एक ख़ूसूरत सेहरा अपने शागिर्द मसऊद अनवर शफ़ीक़ की शादी पर 1958 ईसवी में कहकर इरसाल किया। इसमें यह भी कहते हैं।

मैं लिखता हूँ कभी ख़ुशनूदी-ए-अहबाब की ख़ातिर
जहाँ रहता हूँ मैं कोई नहीं है क़द्र-दाँ सेहरा

◆◆◆

बुलाता काश कोई मुझ को पाकिस्तान में 'नैरंग'
सुनाता महफ़िल-ए-शादी में ख़ुद जाकर वहाँ सेहरा

◆◆◆

- एक विदा मसनवी की हैय्यत में ब-उन्वान ''बाप की नसीहत बेटी'' को विदा के वक़्त लिखकर नसीहत यूँ करते हैं।

पति के हुक्म की तामील करना
यूंही तुम उम्र की तकमील करना

◆◆◆

नहीं कुछ ख़िदमत-ए-शौहर से बेहतर
नसीहत है यही ज़ेवर से बेहतर

◆◆◆

न छोड़ों तुम कभी शर्म-ओ-हया को
न भूले से कभी भूलो ख़ुदा को

- 'नैरंग' सरहदी ने जिस तरह से अपनी तहरीर में लिखा है कि सेहरों में सनअत तोशीख़ बरती है। जिसमें अशआर के पहले हर्फ़ या लफ़्ज़ से इबारत बनाई जाती है। हम इख़्तिसार को पेश नज़र रखते हुए सिर्फ़ चंद अशआर इन सेहरों से चुनकर इस तहरीर का सेहरा बनाते हैं।

इसकी तारीफ़ करेंगे वो जो हैं क़द्र-ए-शनास
ऐसे अंदाज़ से लिखने का भी फ़न है सेहरा

◆◆◆

साग़र-ए-पुर अज़ बादा कुहन है सेहरा
ताबिश हुस्न में या लाल-ए-यमन है सेहरा

◆◆◆

रहेग याद ज़माने को हज़रत-ए-'नैरंग'
जो लाए बाग़-ए-सुख़न से हो मुख़्तसर सेहरा

◆◆◆

गुल-ए-मज़मून पिरोये गए ऐस गौहर
याद डेरा को रहेगा यह मुनव्वर सेहरा

◆◆◆

लिख के लाया है तेरे वास्ते तेरा 'नैरंग'
ग़ालिब-ओ-ज़ौक़ के सेहरों के बराबर सेहरा

◆◆◆

वासिल-ए-शब का इसे आज पैयंबर कहिए
राज़-ए-सर-बस्ता को वा करने जो आया सेहरा

◆◆◆

''नैरंग'' और त्यौहार

(होली, बसंत और ईद उल अज़्हा)

नंद लाल 'नैरंग' एक हस्सास शाइर थे। वो जब भारत के त्यौहार देखते जिसमें ग़रीब और सितमकश तबक़े के लिए कोई ख़ास ख़ुशी का सामान न था तो मुज़्तरिब हो जाते। हम इस तहरीर में उनकी तीन नज़्में ''होली और शाइर'', ''बसन्त'' और ''ईद उल अज़्हा'' पर सरसरी नज़र डालकर बताएंगे शाइर की नज़र जिन असली मसाईल पर है बहुत कम लोग उस तरफ़ देखते हैं। 'नैरंग' सरहदी की एक तुलानी नज़्म ''होली और शाइर'' है। 'नैरंग' सरहदी के बेटे नरेश 'सलीम' ने बताया कि वो भी 'नैरंग' सरहदी के हमराह उस उजड़े मुक़ाम पर होली के रंग से बचने के लिए गए थे जिसका शाइर ने तज़्करा किया है। यह नज़्म तेरह बंद मुसद्दस पर मुश्तमिल है। मिसरों की जुबान सलीस और वाक़िआ निगारी, मंज़रकशी से रवाँ दवाँ है। पहले बंदों में शाइर ने होली की मंज़रकशी और रंग खेलना बताकर यह सुनाया कि शाइर, इन मसायल से बचने के लिए अलस-सुबह ही शहर से बाहर चला गया और जो दिल में ग़रीब अवाम का दर्द था उसको अशआर में रक़म करने लगा और जब शाम को घर वापस हुआ तो रास्ते में शाइर ही की तरह एक शख़्स जो रंगकारी से बच चुका था मुलाक़ात हुई। हमने सहूलत की ख़ातिर उस तक़रीबन अस्सी मिसरों की नज़्म से कुछ मिसरे चुनकर यहाँ जमाए हैं ताकि पढ़ने वाले का इस ख़ूबसूरत नज़्म और शाइर के तास्सुरात का इल्म हो सके।

होली का रोज़, मन्ज़र-ए-सुबह बहार था
हर रुख़ पे इंबिसात-ओ-सुरुर आशकार था

◆◆◆

सब रंग में रंग हुए पीर-ओ-जवान थे
कपड़ों पे जिनके रंग के गहरे निशान थे

◆◆◆

कुछ रंग से भरी हुई पिचकारियाँ भी थीं
मिलकर किसी को रंग, परेशाँ किया उसे
कपड़े किसी के फाड़ कर उरयाँ किया उसे

◆◆◆

इक मैं कि इन नज़ारों से महरुम रहा
अलस्सुबाह ही शहर से बाहर चला गया
पहुँचा मैं एक दश्त में जो था उजाड़ सा
शाइर था फ़िक्र-ए-शे'र में उस दम ज़रुर था

◆◆◆

फैला हुआ जहाँ में मसायब का जाल है
चारों तरफ़ से नान-ए-जवीं का सवाल है
इस हाल में बशर का तो जीना मुहाल है
इस पर भी फ़र्द-ए-हिन्द उड़ाता हुआ गुलाल है

◆◆◆

इन में तमाम आदमी शायद हैं अहल-ए-ज़र
होता नहीं है इन पे ज़माने का कुछ असर
मिलता है रोज़-ओ-शब उन्हें खाने को पेट भर
वर्ना नहीं है उनकी गिरानी पे क्यों नज़र

◆◆◆

इसके ख़्याल ने मुझे ग़मनाक कर दिया

◆◆◆

तक़दीर का फ़ुज़ूल है 'नैरंग' गिला तुझे
गंज-ए-सुख़न ख़ुदा ने फ़रावाँ दिया तुझे

◆◆◆

अरमान जितने दिल के थे सारे निकल गए
तरकश में जितने तीर थे सारे वो चल गए

◆◆◆

उठा परेशाँ हाल मैं अहसास बाख़्ता
कपड़ों को झाड़कर लिया फिर घर का रास्ता

यहा हम यह भी बता दें कि 'नैरंग' ने क़तआत में एक ख़ूबसूरत क़तआ ''होली'' पर लिखा है और शफ़क़, गुल-ओ-गुलज़ार को फ़ितरत की होली बताया है।

है शफ़क़ शाम-ओ-सहर चर्ख़-ए-कुहन की होली
गुल गुलज़ार से ज़ाहिर है चमन की होली
अपनी रंगीनी-ए-तहज़ीब पे नाज़ाँ इंसाँ
काश देखे कोई फ़ितरत के वतन की होली

'नैरंग' के कलाम में एक नज़्म ''बसंत'' के नाम से ग़ज़ल की हैय्यत में मिलती है जो जज़्बात और हक़ायक़ से लबरेज़ है। मन्ज़रकशी करके शाइर ग़रीबों और बेसहारों का तज़्करा करता है।

आया है किस अदा से तबस्सुम-कनाँ बसंत
हर इक बशर के आज है वर्द-ए-ज़ुबाँ बसंत

◆◆◆

मौसम बदल गया है, ज़माने बदल गए
रु-ए-ज़मीं पे जब से हुआ हुक्मराँ बसंत

◆◆◆

लेकिन मैं देखता हूँ ज़माने के हाथ से
बे-लुत्फ़ अब बहार है, और बे-निशाँ बसंत

है चार सू नज़र में मसाइब का सामना
कुछ इन दिनों अजीब है बे-ख़ानमाँ बसंत

◆◆◆

देखो वतन का ज़र्रा भी नज़र-ए-ख़िज़ाँ है आज
वो दिन गए मनाता था हिन्दुस्ताँ बसंत

◆◆◆

फ़ाक़ा-कशी की आग तो हर सू है शो'ला-ज़न
शायद इसी को कहते हैं अहल-ए-जहाँ बसंत

'नैरंग' सरहदी ने 24 मार्च 1967 ईसवी को ईद उल अज़्हा के मौक़ा पर यह ग़ज़लनुमा नज़्म जामिआ मिलिया देहली में पढ़ी। इसका बयान उम्दा है। हमने एक और मज़्मून में इसके अशआर लिखे हैं, इसीलिए यहाँ मतला, मक़्ता और दो तीन अशआर पर गुफ़्तगू समेटते हैं।

निगाह-ए-लुत्फ़-ओ-करम हो तो ईद होती है
नसीब दौलत-ए-ग़म हो तो ईद होती है

◆◆◆

कभी जो आँख में नम हो तो ईद होती है
ख़ुशी ब-शक्ल अलम हो तो ईद होती है

◆◆◆

उरुज-ए-इश्क़ यही है किसी के नाम के साथ
हमारा नाम रक़म हो तो ईद होती है

◆◆◆

''किसी का मुझको न, मुहताज कर ज़माने में[1]''
करम वो तेरा करम हो तो ईद होती है

◆◆◆

निशात शेर-ओ-सुख़न में यही तो है 'नैरंग'
ज़ुबाँ हो ज़वूर-ए-क़लम हो तो ईद होती है

◆◆◆

‘नैरंग’ सरहदी के तर्जुमे

नंद लाल ‘नैरंग’ उर्दू, फ़ारसी, पश्तो, हिन्दी, अंग्रेज़ी के अलावा अरबी और संस्कृत जबान से भी वाक़िफ़ थे। उन्होंने उर्दू के अलावा मुख़्तलिफ़ जबानों का वसीअ मुतालेए भी किया था। जिसमें फ़ारसी और अंग्रेज़ी के शुअरा के कलाम का मुतालेए ख़ास तौर पर शामिल था। हम ने उनकी बयाज़ों में उन के पसंदीदा फ़ारसी के अज़ीम शुअरा का मुंतख़िब कलाम भी देखा जिससे उनकी सुख़न फ़हमी का पता चलता है कि वो सच्चे गौहरशनास थे। हम इस तहरीर में ‘नैरंग’ सरहदी की तर्जुमाशुदा नज़्मों पर कुछ रौशनी इसलिए भी डालेंगे कि वो एक कामयाब मुतर्जिम थे। किसी भी नज़्म का नसर में तर्जुमा करना मुश्किल नहीं लेकिन इसका मन्जूम तर्जुमा वो भी इस कमाल से होकि तर्जुमा की गई नज़्म का मतलब वाज़ेह हो जाए बड़ा फ़न्नी और महारत का काम है। बीसवीं सदी के इब्तिदाई दौर और उन्नीसवीं सदी के चंद आख़िरी सालों में अंग्रेज़ी शोअरा के बाज़ तराजिम मक़बूल हुए और ख़सूसी तौर पर वो उर्दू के शोअरा जो अंग्रेज़ी से वाक़िफ़ थे उम्दा तर्जुमानिगारी कर रहे थे। उर्दू के ऐसे शोअरा जिन्होंने अंग्रेज़ी नज़्मों का मन्जूम तर्जुमा किया बड़ी तादाद में हैं जिनका ज़िक्र इस मुख़्तसर मज़मून में मुमकिन नहीं।

‘नैरंग’ ने अपने वसीअ मुतालेए अंग्रेज़ी ज़ुबान से वाक़िफ़ियत और फ़न पर उबूर से फ़ायदा उठाते हुए कई ख़ूबसूरत और मायने ख़ेज़ अंग्रेज़ी नज़्मों का इंतख़ाब करके इसका सलीस तर्जुमा कुछ इस तरह किया कि उर्दू में भी अगर इन नज़्मों को पढ़ा जाए तो पढ़ने वाले पर वही असर तारी होता है जो किसी असली नज़्म पढ़ने वाले

अंग्रेज़ीदाँ पर और यही तर्जुमे की कामयाबी का मैयार भी है। यह गराँ पत्थर को 'नैरंग' ने तक-ओ-तन्हा उठाकर महराब-ए-इश्क़ में सजा दिया है जो उर्दू शे'र-ओ-अदब की ख़िदमत और तरक़्क़ी की ज़मानत भी है। हम यहाँ यह नुक्ता भी वाज़ेह कर दें कि बाज़ अंग्रेज़ी की नज़्में दूसरे उर्दू शुअरा ने भी तर्जुमा की हैं चूंकि अंग्रेज़ी नज़्म का तर्जुमा है इस लिए भी कई मिसरों में शबाहत और तवारिद नज़र आता है लेकिन बहरहाल हर शाइर का असलूब और अंदाज़ जुदागाना होता है। इसलिए यह तर्जुमा मौज़ुअ की यगानगी रखते हुए भी तर्ज़ बयान और तासीर में जुदा होता है। हम यहाँ नज़्मों के नाम और माख़ज़ पेश करते हैं।

- पर्वत और गिलहरी
  The Mountain and the Squirrel By : Ralph Waldo Emerson

  (इस नज़्म को अल्लामा इक़बाल ने भी "एक पहाड़ और गिलहरी" के उन्वान से बच्चों के लिए मसनवी की शक्ल में बारह अश्आर में लिखी है जो "बांग-ए-दरा" में मौजूद है। 'नैरंग' की नज़्म पर अल्लामा की इस नज़्म की छाप गहरी है।)
- हज़रत यूसुफ़
  The Yusouf By: James Russell Lowell
- जादूई कुर्ता
  The Enchanted Shirt By: John Hay
- शहद की मक्खी
  How Doth the Little Busy Bee By: Isaac Watts
- तोता
  The Parrot By: Thomas Campbell
- एक झींगर और चींटी
  The Ant and the Cricket By: James Russell Lowell
- रार्बट ब्रूस
  The King Bruce and the Spider By: Eliza Cook

हमारे लिए इस मुख़्तसर मज़मून में मुमकिन नहीं कि हर नज़्म पर रिव्यूव कर सकें। तमाम नज़्में ओरिजिनल अंग्रेज़ी नज़्मों के साथ कुल्लियात में मौजूद हैं। हम तहरीर की नौइयत से हर नज़्म के कुछ अशआर मुंतख़िब करके तर्जुमा निगारी की उम्दगी और शाइर की फ़न्नी इस्तताअत और अच्छे तर्जुमे की निशानी को वाज़ेह करेंगे।

नज़्म हज़रत यूसुफ़ की मन्ज़रकशी और अंदाज़-ए-बयान देखिए:

अजनबी इक शख़्स आया ना-गहाँ
ख़ेमा-ज़न था नेक दिल यूसुफ़ जहाँ

◆◆◆

था परेशाँ हाल, घबराया हुआ
ज़िंदगी से गोया तंग आया हुआ

◆◆◆

आइए मुझ पर करम फ़रमाइए
आपका ख़ेमा है अन्दर आइए

◆◆◆

मुझको जो नेमत ख़ुदा ने की अता
तेरा भी हक़ इस में है मर्द-ए-ख़ुदा

◆◆◆

ख़ैमे पर है जिसका नीला साइबाँ
है वही तो ख़ालिक़-ए-हर दो जहाँ

◆◆◆

मा-हज़र जो है तनावुल कीजिए
मुझ को अपने ग़म मे शामिल कीजिए

परबत और गिलहरी के मुकालमे के दो तीन शे'र यह हैं:

एक पर्बत और गिलहरी में हुआ
एक दिन झगड़ा निहायत ज़ोर का
देख कर पर्बत ने नफरत से कहा

◆◆◆

''जानवर है एक तू नाचीज़ सा
है समाया तुझ में सौदा-ए-गुरूर
बात करने का नहीं तुझको शऊर
सामने मेरे हक़ीक़त क्या तेरी
कोह से निस्बत भला क्या काह की

◆◆◆

यूँ कड़क कर दी गिलहरी ने सदा
''शक नहीं है तेरी बातों में ज़रा

◆◆◆

पीठ पर मेरी नहीं अश्जार गो
तोड़ तू सकता नहीं अख़रोट को''
सुनके ये ख़ामोश पर्बत हो गया
फिर न उसके साथ कुछ झगड़ा किया

जादूई कुर्ता एक तूलानी नज़्म का तर्जुमा है। हम चंद शे'र तर्जुमे की फ़नकारी के तौर पर यहाँ पेश कर रहे हैं।

इक दयार-ए-मग़रिबी का ताजदार
जानता था ख़ुद को जो ज़ार-ओ-नज़ार

◆◆◆

जानता हूँ ऐ शहंशाह-ए-जहाँ
आपकी हालत हुई मुझ पर अयाँ

◆◆◆

एक कुर्ता लाएँ ख़िदमत में अगर
तूझको हो जाए शिफ़ा ऐ दाद-गर

◆◆◆

हुक्म-ए-शाही से हुए नौकर रवाँ
ताकि पाएँ ऐसे कुर्ते का निशाँ
यूँ हुआ गोया ब-आवाज़-ए-बलंद
इस तरह रहना मुझे आया पसंद

◆◆◆

खोल दो दरहाय-ऐवान-ए-शही
बन्द रह सकता नहीं अब मैं कभी

◆◆◆

हौके ख़ुश रहने लगा मसरूफ़-ए-कार
पा लिया बहर-ए-मसर्रत का किनार

◆◆◆

कोई दिन में शादमाँ मसरूर था
अब न था बीमार न रंजूर था

"शहद की मक्खी" की नज़्म का तर्जुमा बहुत ख़ूब है कुछ शे'र यह हैं:

शहद की मक्खी को देखा चाहिए
असके कामों पर नज़र फ़रमाइए

◆◆◆

किस तरह रहती है वो मसरूफ़-ए-कार
काम की रहती है उसपर धुन सवार

◆◆◆

घूमती फिरती है वो बाग़ात में
गार्मियों, जाड़े में और बरसात में

◆◆◆

बैठ जाती है वो हर इक फूल पर
चूसती है रस वो उसका सर-सर

◆◆◆

लाके रख देती है छत्ते में उसे
ता-ज़ख़ीरा शहद का वो कर सके
मुझ को भी ऐसा ही करना चाहिए
बाग़-ए-आलम में संवरना चाहिए

◆◆◆

कार-ए-मुफ़ीद ख़लायक़ कर सकूं
दर्द मंदो की दवा बनकर रहूं

◆◆◆

पढ़ने लिखने में गुज़ारुं ज़िंदगी
इल्म-ओ-फ़न से मैं संवारुं ज़िंदगी

यह तर्जुमे की देन है कि हम थामस कैम्बेल की नज़म 'नैरंग' की जुबानी उर्दू में सुन रहे हैं। इसके चंद शे'र यह हैं:

ख़ूब-रू तोता था इक इस्पेन का
इत्तिफ़ाक़न एक दिन पकड़ा गया

◆◆◆

डाल कर उस की क़फ़स में ले गए
इक जज़ीरे में वो माला शोर के

◆◆◆

छोड़ना उसको वतन था नागवार
कोसता क़िस्मत को था वो बार-बार

◆◆◆

याद आते थे वतन के गुलस्ताँ

◆◆◆

एक दिन करना खुदा का क्या हुआ
शख़्स इक स्पेन का वारिद हुआ

◆◆◆

गुफ़्तुगू तोते से की उसने वहाँ
सुनके तोता ख़ुश हुआ अपनी ज़बाँ

◆◆◆

चीख़ कर वो भड़-भड़ाया गिर गया
ज़िंदगी से हो गया क़ैदी रिहा

◆◆◆

जज़्बा-ए-हुब्ब-ए-वतन के जोश में
सो गया ताइर बेचारा मौत की आग़ौश में

एक झींगर और चींटी नज़्म के चंद अशआर से मालूम होता है कि 'नैरंग' को तर्जुमा करने पर कुदरत थी क्योंकि तर्जुमा में उर्दू जबान की चाश्नी ऐसी झलक रही है कि यह तर्जुमाशुदा मग़रिबी नज़्म नहीं बल्की बर्र-ए-सग़ीर ही की दास्तान मालूम होती है।

एक झींगर था निहायत बद-दिमाग़
उसको गाने से न था मुतलक़ फ़राग़

◆◆◆

रात दिन था उसको गाने का ख़याल
था न कुछ भी आब-ओ-दाने का ख़याल

◆◆◆

ज़ोर का जाड़ा हुआ जब आशकार
छुप गए अपने घरों में जानदार

◆◆◆

देखकर ये हाल झींगर था उदास
था न कुछ खाने को बेचारे के पास

◆◆◆

आख़िरिश उठा वो दिल में सोच कर
खट-खटाया जा के इक चींटी का दर

◆◆◆

सुन के बोली चींटी, ऐ ग़म-गुसार
हम न लेती हैं न देती हैं उधार

इस तहरीर के आख़िर में हम ''राबर्ट ब्रूस और मकड़ी'' नज़्म के चंद मिसरे यहाँ जोड़ कर पेश करते हैं:

राबर्ट बरूस शाह था इस्कॉट्लैंड का

◆◆◆

वो कामयाब हो न सका कार-ए-ज़ार में

◆◆◆

आख़िर को थक के बैठ गया वो ज़मीन पर

◆◆◆

जब सामने दीवार पर उसकी पड़ी निगाह

◆◆◆

मकड़ी का एक जाल था दीवार पर लगा

◆◆◆

वो गिर पड़ी ज़मीन पर नन्ही सी बे ज़ुबाँ

◆◆◆

गिरते ही उठ खड़ी हुई हिम्मत से फिर चढ़ी
बद-क़िस्मती से फिर वहाँ इक बार गिर पड़ी

◆◆◆

इक बार क्या गिरी थी वो सौ बार गिर पड़ी
नाकाम होते-होते ही मंज़िल पे जा चढ़ी

◆◆◆

गिर गिर के भी वो जानवर बढ़ता हुआ चला
राबर्ट बरूस उस की तरफ़ देखता रहा

◆◆◆

हिम्मत से उसकी ताड़ गया राज़-ए-ज़िंदगी
खाते कहाँ शिकस्त हैं जांबाज़-ए-ज़िंदगी

◆◆◆

उठा वो जान तोड़ कर इक बार फिर लड़ा
दुश्मन से अपने मुल्क को आज़ाद कर लिया

◆◆◆

उम्दा निसार और अफ़साना निगारः 'नैरंग' सरहदी

नंद लाल 'नैरंग' एक उम्दा निसार भी थे। जब एक शख़्सियत में कई तख़्लीक़ी जेहतें जमा हो जाती हैं तो बाज़ ज़ाविये ख़ुद ब ख़ुद मद्धम हो जाते हैं क्योंकि उन पर रौशनी कम डाली जाती है और यह अमल या अलमिया हमारे अदब में बहुत आम है। जब एक तख़्लीक़ी ज़ेहन की अल्फ़ाज़ को जानने, समझने, और बरतने की कैफ़ियत दरख़्शाँ हो जाती है तो वो उन अल्फ़ाज़ पर क़ुदरत हासिल कर लेता है, बा-अल्फ़ाज़ दीगर वो ख़ालिक़ और उसकी मख़्लूक़ अल्फ़ाज़ में ख़ास रब्त और रिश्ता पैदा हो जाता है। चुनांचे वो चाहे अल्फ़ाज़ को नज़्म में लिखे या नसर में, असर मुसबत सब्त करता जाता है। होता यह है कि बाज़ अफ़राद को यह मौक़ा मिलता है और बाज़ को ऐसी कोई फ़ुरसत हासिल नहीं होती और यह क़ाबिलियत जलवानुमा नहीं होने पाती।

'नैरंग' का नसर पर इज़हार ख़्याल के लिए हमारे पास उनका लिखा मतन इतनी मिक़्दार में मतबुआ और ग़ैर मतबुआ शक्ल में मौजूद है जिससे हम ने इन सफ़हात को तज़य्यन किया उन्होंने जो तहरीरें अपने बारे में लिखीं जैसे''मुख़्तसर हालात-ए-ज़िंदगी और मेरी शाइरी'' ''महसूसात और क़यासात'', ''अर्ज़-ए-हाल'' और ''वसीयत नामा'' वग़ैरह वग़ैरह ख़ूबसूरत नसरी याददाश्तें और ख़ुद-नविश्त हैं जिससे उनका नसरी आर्ट जाना जा सकता है। 'नैरंग' सरहदी ने इन तहरीरों के अलावा तीन अफ़साने और एक ड्रामा भी लिखा जिन पर

हम एक सरसरी नज़र डालेंगे जिनके उन्वान यह हैं।

अ - मकान   ब- डाकख़ाना

ज- कांटा   द- ड्रामा (दीवान सावन मल का दरबार)

हमने दानिसता तौर पर 'नैरंग' साहब की तहरीरों को इस किताब में शामिल किया ताकि लोग उनके हुस्न-ए-नसर से भी वाक़िफ़ हो सकें। यहाँ उनकी तहरीर जो मुख़्तसर मगर जामे है और जिससे उनकी शाइरी पर भी रौशनी पड़ती है बग़ैर मज़ीद तशरीह के पेश करते हैं।

मेरी शाइरी मेरी ज़िंदगी का आईना है, जो कुछ कहता हूँ, ज़िंदगी के वाक़िआत की झलक इससे साफ़ नुमायाँ होती है, मैं ज़ुबान को हाथ से कभी नहीं जाने देता। क़दमा और मुतअख़्ख़िरीन के बुलंद पाया कलाम का मुक़ल्लिद हूँ। दिल्ली, मेरठ, पटियाला, जालंधर, हिसार, अंबाला, होशियरपुर, चंडीगढ़, महेन्द्रगढ़, गुड़गांव इज़्लाअ के बेश्तर मुशायरों में शिरकत करता रहता हूँ। जहाँ भी जाता हूँ, ख़ूब दाद मिलती है। अहल-ए-क़लम की दाद से मुझे एक गोना मुसर्रत और दिल को राहत नसीब होती है।

मेरी शाइरी अवामी शाइरी नहीं, बल्कि उन लोगों के लिए है, जिन्होंने ज़ुबान को बा-क़ायदा पढ़ा और उससे इस्तिफ़ादा किया है। यही वजह है कि अहल-ए-ज़ुबान, उदबा और शुअरा से कलाम की ख़ूब दाद मिलती है और ग़ैर अहल-ए-ज़ुबान अवाम मुझे मुश्किल गो शाइर जानते हैं। मगर मैं ख़िदमत-ए-ज़ुबान के सहीह मायने को ख़ूब जानता हूँ और अपनी हक़ीक़ी क़द्र-दानी के लिए शाइरों, अदीबों और अस्हाब-ए-फ़हम हज़रात का मरहून-ए-अहसान हूँ जिनकी सोहबतों से मेरी शाइरी को रंग-ए-बक़ाए हासिल है।

'नैरंग' सरहदी का अफ़साना ''मकान'' हमारे समाज की कमज़ोरियों को तन्ज़-ओ-मलीह मज़ाह से आश्कार करता है। हमारा

मुआशरा जब किसी शख़्स को बरगज़ीदा समझता है तो उसकी हर बात पर यक़ीन करने लगता है और तहक़ीक़ और पूछगश्त नहीं करता जिससे लोग फ़ायदा उठाते हैं। ''मकान'' को जिस शख़्स ने फ़रोख़्त किया उसके नुक़्स और ख़राबियों को नहीं बताया जब कि मकान फ़रोख़्त करने की असल वजह छत की ख़राबी थी और हज को जाना सिर्फ़ बहाना था। जिसको फ़रोख़्त करने वाले ने बताकर ख़रीदने वाले को बेवक़ूफ़ बनाया, चुनांचे जिस शख़्स ने ख़रीदा उसने भी हज पर जाने के झूठे प्लान से मकान फ़रोख़्त करने का प्लान बना लिया। बर्र-ए-सबग़ीर के माअशरे में मज़हबी बन कर लोग गौर-मज़हली लोगों से ज़्यादा धोका देते हैं। 'नैरंग' ने सलीस, शगुफ़ता जबान में इन ख़ामियों को वाज़ेह किया है। ''मकान'' का अख़िरी हिस्सा सुनिये।

एक दिन एक ख़ुशपोश नौजवान अपने दो बच्चों और बेगम को हमराह लेकर आया। और सहमी हुई आवाज़ में बोला सुना है कि आप इस मकान को बेचने का इरादा रखते हैं। मैंने जवाब दिया, दिल तो नहीं करता, मगर मजबूरी है हज करने का इरादा कर लिया। अव्वल तो वहीं अरब में ही रिहाइश-पज़ीर हो जाएंगे और अगर वापस आए भी तो अपने छोटे भाई साहब के मकान में क़याम कर लेंगे।

नौजवान को हमारी मजबूरियों का पूरा-पूरा अहसास हो गया। मकान का सौदा बनाने के लिए हमने रक़म भी ज़्यादा न मांगी। हमारी बताई हुई क़ीमत नौजवान को पसंद आ गई। बैय-नामा लिखा गया और तीन-चार रोज़ में रजिस्टरी भी हो गया।

मैंने दर्द-मंदाना लहजे में नोवारिद साहब ख़ाना के हक़ में दुआ की और क़ब्ज़ा मियाँ ज़हीर हसन के हवाले किया। और आप शहर से दूर एक मकान किराये का लेकर जा ठहरे। और ख़ुदा का शुक्र किया। बेगम साहिबा ने पूछा कि

वो बेचारे बरसात में कैसे गुज़ारा करेंगे। मैंने छूटते ही जवाब दिया कि वो भी बरसात ख़त्म होते ही हमारी तरह हज को चले जाएंगे।

दूसरे अफ़साने ''डाक ख़ाना'' में हिंदुस्तान में रिश्वत की लानत को ज़ाहिर किया गया है यानि सरकारी महकमा में भी अवाम का काम उस वक़्त तक अंजाम नहीं दिया जाता जब तक कि रिश्वत से हाथ न भर दिये जाएं और यह रिश्वत का धंधा पूरे इदारे में एक मुख़्फ़ी जाल की तरह फैला हुआ रहता है। वो शख़्स जिसको अपनी रक़म हासिल करने के लिए किसी दूसरे शख़्स की शनाख़्ती ताईद की ज़रुरत थी पहेल कोई दस्तयाब नहीं था लेकिन दस रुपये रिश्वत देने के बाद उसे मालूम हुआ कि अब डाक का पूरा महकमा उससे वाक़िफ़ है और हर शख़्स उसके लिए रिश्वत लेकर दस्तख़त करने पर आमादा है।

''डाकख़ाना'' के आख़िर में अफ़साना निगार ने अफ़सान को इस तरह ख़त्म किया।

> अब मैं समझा कि हो न हो मेरे किसी दोस्त या रिश्तेदार की बहन या दुख़्तरे नेक अख़्तर है जिसने मुझे इस परेशान हाली में भी पहचान लिया है जिसको मैं अभी तक पहचान नहीं सका। मैंने अपने ख़ानदानी अख़्लाक़ की बिना पर दिल ही दिल में शुक्रिया अदा किया और कहा, ''करम कीजिए और यहां इस फ़ार्म पर जो मेरे हाथ में था दस्तख़त फ़रमाकर तस्दीक़ कर दीजिए।''
> इस पर उसने आंखें नीची करके कहा कि मेरा मतलब है पाँच रुपये में आपको कौन नहीं पहचानता। मेरी तमाम ख़्याली इमारत एकदम गिरकर चकनाचूर हो गई। मेरी तिलिस्म ख़्वाब यक क़लम टूट गया। अपनी जेब से ख़ूब वाक़िफ़ था कि इसमें सिर्फ़ मेरे

पास वापसी किराये के पैसे थे। मुझे यह सोचकर अफ़सोस हुआ कि अगर मेरे पास कुछ ज़्यादा रक़म होती तो मुंह मांगी उजरत देने को तैयार हो जाता। क्योंकि मैं जानता था कि किसी की मेहनत की कमाई में उजरत कम करना उसकी ईमानदारी पर शक करना है। मैंने डरते हुए कहा, ''अच्छा चार रुपये ले लें।''

अब उसने पासबुक मेरे हाथ से ले ली। और आख़िरी सफ़हे पर निगाह डालने के बाद कहा, ''नौ सौ बहत्तर रुपये साढ़े छः आने। भाई साहब दस रुपये लगेंगे।''

मेरे दिल में एक सनसनाहट पैदा हो गई कि अब तो पांच रुपये से काम निकलता है। अगर ज़्यादा बात की तो शायद दस रुपये से भी मुश्किल हो जाएग। मैंने जब पाँच रुपये का एक नीला सा नोट निकालकर उसके उजले हाथि पर रख दिया। फिर क्या था फ़ाउंटेन पैन को जुंबिश देते हुए दो तीन अंग्रेज़ी सतूर जो मेरे काम के लिए काफ़ी थीं लिखकर फ़ार्म मेरे हाथ में दे दिया। मैं दिल ही दिल में सोचकर नादिम हो रहा था कि अगर इस तरह काम होना था तो मैं सबसे पहले आदमी से आन की आन में करा सकता था। इस क़द्र वक़्त ज़ायाअ करने और परेशान होने की क्या ज़रुरत थी। मुझे अपनी सादा लोही पर अफ़सोस हो रहा था कि लोगों को किस तरह लेना आता है मुझे देना भी नहीं आता।

मैं अपनी बे-वकूफ़ी और नादानी पर झल्लाता हुआ वापस उसी पुरानी मेज़ के सामने खड़ा होकर आदाब बजा लाया। मुझे देखकर मेरे करम फ़रमा फ़रिश्ता ख़साईल ने मुस्कराते

हुए पूछा, ''क्यों साहब! मैंने कहा था न कि कोई न कोई आदमी आपका ज़रुर वाक़िफ़ होगा।''

मैं ने फ़ातेहाना अंदाज़ में जवाब दिया, ''साहब! आपकी मेहरबानी और नवाज़िश का सदक़ा इस दफ़्तर का हर आदमी मेरा वाक़िफ़ है।''

''कांटा'' एक नीम रोमांटिक अफ़साना है जो एक शाइर और उसकी बीवी जो ख़ुद शे'र-ओ-सुख़न की परस्तार है और मुश्किल हालात में ज़िंदगी बसर करती है और कान का झूमर रास्ते में खो देती है। जो बहरहाल आख़िर में मिल जाता है लेकिन इस अफ़साने के नशेब-ओ-फ़राज़ 'नैरंग' ने जज़्बा दिली से बांधे हैं। अफ़साना और ड्रामा का मज़ा इसके पूरे मतन में पढ़ने से हासिल होता है इसलिए हम ड्रामा ''दीवान सावन मल का दरबार'' यहाँ नहीं लिख सकेंगे। और ''कांटा'' एक मुख़्तसर इबारत पर गुफ़्तगू तमाम करते हैं।

कुछ देर बाद निगाह डालने से मालूम हुआ कि वो कुर्सियाँ जहाँ पहले बेगम साहिबा बच्चों के साथ तशरीफ़ फ़रमा थीं अब वहाँ दो और साहिबज़ादियां रौनक़अफ़रोज़ थीं। मैंने खड़े होकर इधर उधर नज़र दौड़ाई मगर कहीं भी उन्हें देख न सका। ख़्याल आया कि शायद बाग़ में फूलों के मन्ज़र का लुत्फ़ उठा रही होंगी।

लोग आने शुरु हो गए। मुशायरागाह में ख़ासी रौनक़ और चहल-पहल नज़र आने लगी, मगर मेरा दिल परेशान था और आंखें बच्चों को देखने की मुतमन्नी थीं। इस क़द्र वक़्त गुज़र जाने पर भी जब वो दिखाई न दिये तो रहा न गया खड़ा होकर माईक के पास पहुंचा और अपने लड़के को नाम से आवाज़ दी कि वो मेरे पास स्टेज पर आ जाए। ख़ाकसारज़ादा के स्टेज पर न आने से मेरी परेशानी और भी बढ़ गई और दिल में कई क़िस्म के वसवसे से पैदा हो गए।

जब नमाज़ आई तो दुनिया में मसावात आई
अहल-ए-आलम में मसावात कहाँ थी पहले
◆◆◆
हरीम-ए-इश्क़ में ख़ामोश हैं सदाएं भी
नमाज़ होती है लेकिन अज़ाँ नहीं होती
◆◆◆
काबे में न बुतख़ाने में न कूए बुताँ में
तसकीन की सूरत नज़र आई न जहाँ में
◆◆◆
दार-ए-मंसूर चहे यूसुफ़-ओ-जुए फ़रहाद
इश्क़ की राह में हाइल नहीं होने पाते
◆◆◆
तग-ओ-दू आज भी इंसान की बाग़-ए-जिनाँ तक है
हुआ रुस्वा जहाँ आदम नज़र उसकी वहाँ तक है
◆◆◆
रुह-ए-'नैरंग' मज़हबों की क़ैद से आज़ाद है
वास्ता उसको नहीं है कुफ़्र व इस्लाम से
◆◆◆
पस-ए-हयात यही शेर होंगे ऐ 'नैरंग'
अलावा इसकी तेरी यादगार क्या होगी
◆◆◆

Nand Lal Nairang Sarhadi Shakhsiyat aur Fan
By
Dr. Syed Taqi Abedi

EDUCATIONAL PUBLISHING HOUSE
New Delhi, INDIA

ISBN 978-93-94616-52-3
978-93-94616-52-3
www.ephbooks.com